हमारी अर्थव्यवस्था

(भाग-2)

कक्षा 10 के लिए पाठ्य-पुस्तक

(राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार द्वारा विकसित)

बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पटना

निदेशक (माध्यमिक शिक्षा), शिक्षा विभाग, बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत।

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार पटना के सौजन्य से सम्पूर्ण बिहार राज्य के निमित्त।

बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड

प्रथम संस्करण	:	2010
पुनर्मुद्रण	:	2011-12
पुनर्मुद्रण	:	2013-14
पुनर्मुद्रण	:	2015
पुनर्मुद्रण	:	2016
पुनर्मुद्रण	:	2017
पुनर्मुद्रण	:	2018
पुनर्मुद्रण	:	2024-25

मूल्य : रु० 31.00

बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पाठ्य-पुस्तक भवन, बुद्ध मार्ग, पटना-800 001 द्वारा प्रकाशित 70 जी.एस.एम मैपलिथो वर्जिन पल्प टेक्स्ट पेपर एवं 130 जी.एस.एम पल्प बोर्ड व्हाईट वर्जिन आवरण पेपर पर कुल 1,00,000 प्रतियाँ 24 x 18 से.मी. साइज में मुद्रित।

प्राक्कथन

मानव संसाधन विकास विभाग, बिहार सरकार के निर्णयानुसार अप्रैल, 2009 से राज्य के कक्षा-IX हेतु नए पाठ्यक्रम को लागू किया गया है। प्रथम चरण में शैक्षिक सत्र 2009 के लिए वर्ग-IX की सभी भाषायी एवं गैर भाषायी पुस्तकों को पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया। इस नए पाठ्यक्रम के आलोक में एस. सी. ई. आर. टी., बिहार, पटना द्वारा सभी भाषायी एवं गैर भाषायी पुस्तकें (वाणिज्य एवं कला विषयक) बिहार राज्य पाठ्य-पुस्तक प्रकाशन निगम द्वारा आवरण चित्रण कर मुद्रित किया जा रहा है।

बिहार राज्य में विद्यालयी शिक्षा के गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए माननीय मुख्यमंत्री, बिहार, श्री नीतीश कुमार, माननीय शिक्षा मंत्री, डॉ॰ चन्द्रशेखर एवं शिक्षा विभाग के अपर मुख्य सचिव, श्री के० के० पाठक, भा॰प्र॰से॰ के मार्गदर्शन के प्रति हम हृदय से कृतज्ञ हैं।

एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली तथा एस0सी0ई0आर0टी0, बिहार, पटना के निदेशक के भी हम आभारी हैं जिन्होंने अपना सहयोग प्रदान किया ।

श्री बसंत कुमार, शैक्षिक निबंधक, बिहार राज्य पाठ्य-पुस्तक प्रकाशन निगम लिमिटेड के सफल प्रयास एवं सहयोग का आभारी हूँ, जिन्होंने दल-भावना के अनुरूप कार्यों का संपादन कराया है।

बिहार राज्य पाठ्य-पुस्तक प्रकाशन निगम छात्रों, अभिभावकों, शिक्षकों, शिक्षाविदों की टिप्पणियों एवं सुझावों का सदैव स्वागत करेगा, जिससे बिहार राज्य को देश के शिक्षा जगत में उच्चतम स्थान दिलाने में हमारा प्रयास सहायक सिद्ध हो सके ।

सन्नी सिन्हा, आई॰आर॰एस॰एस॰
प्रबंध निदेशक
बिहार राज्य पाठ्य-पुस्तक प्रकाशन निगम लि॰

दिशा बोध–सह–पाठ्यपुस्तक विकास समन्वय समिति

- **श्री के0 के0 पाठक**, भा.प्र.से., अपर मुख्य सचिव शिक्षा विभाग, पटना
- **श्री सज्जन आर** भा.प्र.से., निदेशक, एस.सी.ई.आर.टी., पटना
- **श्री रामशरणागत सिंह,** संयुक्त निदेशक, शिक्षा विभाग, बिहार, विशेष कार्य पदाधिकारी, बी.एस.टी.बी.पी.सी., पटना
- **श्री मधुसूदन पासवान,** कार्यक्रम पदाधिकारी, बिहार शिक्षा परियोजना परिषद्, पटना
- **डॉ. एस. ए. मुईन,** विभागाध्यक्ष, एस.सी.ई.आर.टी., पटना
- **श्री अमित कुमार,** सहायक निदेशक, प्राथमिक शिक्षा निदेशालय, बिहार सरकार
- **डॉ. ज्ञानदेव मणि त्रिपाठी,** प्राचार्य, मैत्रेय कॉलेज ऑफ एजुकेशन एण्ड मैनेजमेंट, हाजीपुर
- **डॉ. उदय कुमार उज्ज्वल,** अपर कार्यक्रम पदाधिकारी, बिहार शिक्षा परियोजना परिषद्, पटना

- **डा० विनय कुमार सिंह,** व्याख्याता, एस०एम०डी० कॉलेज, पुनपुन, पटना
- **डा० प्रवीण कुमार,** व्याख्याता, एस०यू० कॉलेज, हिलसा, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया
- **डा० अर्चना,** व्याख्याता, एस०सी०ई०आर०टी०, बिहार, पटना
- **श्रीमति विभा कुमारी**, उच्चतर माध्यमिक शिक्षिका, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय, राजेन्द्र नगर, पटना
- **सुश्री प्रीति कुमारी**, उच्चतर माध्यमिक शिक्षिका, बलदेव इंटर स्कूल, दानापुर, पटना
- **श्री ओम प्रकाश,** उच्चतर माध्यमिक शिक्षक, डी०डी० उच्च माध्यमिक विद्यालय, दानापुर, पटना
- **श्री आशीष कुमार,** माध्यमिक शिक्षक, राजकीयकृत उच्च विद्यालय, वीर ओइयारा, वीर पटना

समीक्षक :

- **डा0 तारा शंकर प्रसाद सिंह**, पूर्व प्राचार्य, आर॰ डी॰ एस॰ कॉलेज, मुजफ्फरपुर
- **डा0 उषा सिंह**, विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, अरविंद महिला महाविद्यालय, काजीपुर, पटना

अकादमिक सहयोग :

- **डा० घनश्याम नारायण सिंह,** भूतपूर्व, विश्वविद्यालय प्राध्यापक, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया
- **इम्तियाज आलम,** व्याख्याता, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना

समन्वयक :

श्री अर्जुन ठाकुर, श्री नारायण आर्य एवं **डा० राजेन्द्र प्रसाद मंडल,** व्याख्याता, एस०सी०ई०आर०टी०, बिहार, पटना

आमुख

प्रस्तुत पुस्तक "**हमारी अर्थव्यवस्था भाग-2**" **कक्षा**-10 भारत सरकार की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा की रूपरेखा-2005 तथा राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार द्वारा एन०सी०एफ०-2005 के सिद्धांत, दर्शन तथा शिक्षा शास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर विशिष्ट रूप से ग्रामीण क्षेत्र को संदर्भ में रखते हुए बिहार पाठ्यचर्चा की रूपरेखा-2008 तथा तदनुरूप पाठ्यक्रम के आधार पर बिहार राज्य के शिक्षक समूह के साथ चरणबद्ध कार्यशाला समय-समय पर विषय विशेषज्ञ एवं शिक्षाविदों के साथ मिलकर निर्माण किया गया है । पाठ्यक्रम के उद्देश्य तथा प्रकरण यथा भोजन, पदार्थ, सजीवों का संसार, गतिमान वस्तुएँ, लोग एवं उनके विचार, वस्तुएँ कैसे कार्य करती है, प्राकृतिक परिघटनाएँ तथा प्राकृतिक संसाधन की मुख्य अवधारणाओं में दिए गए विषय-वस्तु पाठ्यपुस्तक के अध्यायों में परिलक्षित एवं समाविष्ट किया गया है । जिससे बच्चों के सर्वांगीण विकास अर्थात् शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं अभ्यास क्षमताओं पर ध्यान दिया गया है । बच्चों में करे सीखने तथा खोजी भावना का विकास करने तथा आपस में मिल-जुलकर सीखने की प्रवृत्ति का विकास करके उनको जिम्मेवार नागरिक बनाया जाये, जिससे देश की धर्म निरपेक्षता, अखण्डता एवं समृद्धि के लिए कार्य करें तथा संविधान की प्रस्तावना की पूर्ति हो, ऐसा विद्यालयीय शिक्षा के क्रम में पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तक में ध्यान रखा गया है । पाठ्यपुस्तक के सभी अध्याय रोचकपूर्ण है। पाठ्यपुस्तक में दिए गए विषय वस्तु विद्यार्थियों के दैनिक अनुभव पर आधारित हो, ऐसा प्रयास किया गया है । कुछ अध्यायों में कहानी के माध्यम से विज्ञान के रहस्यों का उद्भेदन करने का प्रयास किया गया है, जो अपने आप में नवाचार है । कहीं-कहीं ऐसे सदर्पित प्रश्न हैं, जिसे बच्चे वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करते हुए सत्य के निकट जाने हेतु कौतुहलता एवं जिज्ञासा रहेगी ।

पाठ्यपुस्तक के माध्यम बच्चे तथा शिक्षक के बीच शिक्षण अधिगम प्रक्रिया बाल-केंद्रित तथा सीखना बिना बोझ के अर्थात् सुगम एवं आनन्ददायी शिक्षण हो, ऐसा प्रयास किया गया है, इसलिए पाठ्यपुस्तक के सभी अध्यायों के विषय वस्तु में जगह-जगह क्रियाकलाप अर्थात् गतिविधि तथा प्रयोग का वर्णन है। पुस्तक की अधिकांश क्रियाकलाप बिना किसी सामग्री या कम लागत की सामग्री के साथ करवाई जा सकती है। शिक्षण जितना गतिविधि आधारित होगा, बच्चों को सक्रिय बनाने वाला होगा तथा बच्चों को उतना अधिक आनन्द आएगा और वे उतनी ही

अच्छी तरह दक्षताओं को प्राप्त कर सकेंगे। इस कार्य में शिक्षक की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक अध्याय के अंत में नये शब्द, प्रमुख शब्द, पर्याप्त प्रश्न तथा अधिकांश अध्याय में परियोजना कार्य भी दिये गये हैं जिससे की छात्र की उपलब्धियों की जाँच हो सके।

इस पाठ्यपुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने के पूर्व राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, पटना द्वारा विभागीय पदाधिकारियों, विषय विशेषज्ञों, भाषा विशेषज्ञों एवं शिक्षकों की कार्यशाला आयोजित की गई। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, बिहार राज्य पाठ्यपुस्तक प्रकाशन निगम द्वारा विकसित पुस्तकों के साथ अनेक प्रकाशकों की पुस्तकें, संदर्भ सामग्री के रूप में पाठ्यपुस्तक को तैयार करने में उपयोगी साबित हुई । इस पाठ्यपुस्तक के निर्माण में श्री अंजनी कुमार सिंह, प्रधान सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, बिहार सरकार के निदेशानुसार, बिहार के मार्गदर्शन में पाण्डुलिपि तैयार की गयी।

इस पुस्तक के लेखन तथा विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए डॉ॰ विनय कुमार सिंह, अर्थशास्त्र विभाग, एस.एम.डी कॉलेज, पुनपुन; डॉ॰ प्रवीण कुमार; डॉ॰ अर्चना, व्याख्याता; श्रीमती विभा कुमारी, उच्चतर माध्यमिक शिक्षिका, सुश्री प्रीति कुमारी, उच्चतर माध्यमिक शिक्षिका; श्री ओम प्रकाश, उच्चतर माध्यमिक शिक्षक तथा श्री आशीष कुमार, माध्यमिक शिक्षक के प्रति हम विशेष आभार प्रकट करते हैं, साथ ही प्रो. घनश्याम नारायण सिंह के प्रति हम काफी आभारी हैं जिन्होंने अपने रचनात्मक सुझावों से हमें लाभान्वित किया।

इस पुस्तक के निर्माण में समन्वयक के रूप में श्री अर्जुन ठाकुर एवं श्री नारायण आर्य, व्याख्याता एस०सी०ई०आर०टी० की अहम् भूमिका रही है। श्री रामतवक्या तिवारी, विभागाध्यक्ष, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद मंडल, व्याख्याता एवं श्री विजय कुमार आशुलिपिक ने पाण्डुलिपि के निर्माण में शिक्षकों से सहयोग सम्पर्क की भूमिका सराहनीय रही है।

आशा है यह पाठ्यपुस्तक बच्चों के लिए लाभदायक, आनन्ददायी एवं रुचिकर सिद्ध होगी। अल्प समय में निर्मित पुस्तक के लिए समालोचनाओं एवं सुझावों का परिषद् स्वागत करेगी । प्राप्त सुझावों के प्रति परिषद् सजग एवं संवेदनशील होकर अगले संस्करण में आवश्यक परिमार्जन के प्रति विशेष ध्यान देगी ।

सज्जन आर. (भा.प्र.से)

निदेशक

राजय शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्,

बिहार, पटना-800006

विषय-सूची

इकाई	1.	अर्थव्यवस्था एवं इसके विकास का इतिहास	1 - 29
इकाई	2.	राज्य एवं राष्ट्र की आय	30 - 47
इकाई	3.	मुद्रा, बचत एवं साख	48 - 71
इकाई	4.	हमारी वित्तीय संस्थाएँ	72 - 98
इकाई	5.	रोजगार एवं सेवाएँ	99 - 118
इकाई	6.	वैश्वीकरण	119 - 147
इकाई	7.	उपभोक्ता जागरण एवं संरक्षण	148 - 168

-x-

इकाई- 1

1

अर्थव्यवस्था एवं इसके विकास का इतिहास

भारतीय अर्थव्यवस्था का वर्तमान स्वरूप कोई एक दिन की संरचना नहीं है । इसकी मूल सूत्र की जड़ें काफी गहरी हैं । 15 अगस्त, 1947 को मिली आजादी से पहले लगभग 200 वर्षों तक भारत अंग्रेजी शासन का गुलाम था । उस समय भारत को "सोने की चिड़िया" कहा जाता था । लेकिन अंग्रेजी शासन ने सोने की इस चिड़िया का भरपूर शोषण किया तथा जमकर लूटा जिसके कारण भारत में आर्थिक विकास की गति मंद या नगण्य रही ।

आजादी के समय भारतीय अर्थव्यवस्था का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक पुनरूत्थान कर दुनिया की एक अग्रणी अर्थव्यवस्था के रूप में प्रस्तुत करना हमारे नीति निर्धारकों के समक्ष चुनौती थी।

इस अध्याय में अर्थव्यवस्था का परिचय अर्थव्यवस्था का विकास, विकास की माप एवं विभिन्न सूचकांक, बिहार के विकास की स्थिति, देश के आर्थिक विकास में बिहार के आर्थिक विकास की भूमिका, मूलभूत आवश्यकताएँ एवं विकास का संबंध आदि बातों पर प्रकाश डाला गया है।

अर्थव्यवस्था का परिचय

अंग्रेजी शासन ने भारतीय अर्थव्यवस्था को अपना एक उपनिवेश (Colony) बनाकर रखा था । उन्होंने **"फूट डालो और शासन करो"** (Divide and Rule) की नीति अपनाकर भारत को अपना दास बनाकर रखा । ब्रिटिश शासन के पूर्व भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान होने के बावजूद उद्योग, व्यापार, यातायात, आधारभूत संरचना में अन्य कई महत्वपूर्ण देशों की तुलना में अच्छी स्थिति में थी लेकिन शोषण एवं दमनकारी नीतियों के कारण भारत की स्थिति जर्जर हो गयी । गरीबी, अशिक्षा, अंधविश्वास, विषमता तथा शोषण का साम्राज्य था । अंग्रेजी शासन के लगभग 200 वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था में कोई विकास नहीं हुआ । प्रति व्यक्ति

आय की स्थिरता, कृषि पर जनसंख्या की बढ़ती हुई निर्भरता, हस्तशिल्प उद्योगों का पतन तथा उसके बाद लगभग नष्ट हुई औद्योगिक व्यवस्था इस बात को पूरी तरह स्पष्ट कर देते हैं कि अंग्रेजों ने भारतीय अर्थव्यवस्था का शोषण किया ।

उपनिवेश (Colony)

जब कोई भी देश किसी बड़े समृद्धशाली राष्ट्र के शासन के अंतर्गत रहता है और उसके समस्त आर्थिक एवं व्यावसायिक कार्यों का निर्देशन एवं नियंत्रण शासक देश का होता है तो ऐसे शासित देश को शासक देश का उपनिवेश कहा जाता है । भारत करीब 200 वर्षों तक ब्रिटिश शासन का एक उपनिवेश था ।

अर्थव्यवस्था का अर्थ

हम अपने दैनिक जीवन में देखते हैं कि प्रायः सभी लोग अपनी आजीविका के अर्जन के लिए विभिन्न प्रकार की क्रियाओं में लगे रहते हैं । इनकी क्रियाएँ मुख्य रूप से वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन से संबंधित होती है । उदाहरण के लिए किसान खेत एवं खलिहानों में, मजदूर कल-कारखानों में, शिक्षक स्कूल तथा कॉलेजों में एवं वकील कोर्ट-कचहरी में अपने कार्य में लगे रहते हैं । अब प्रश्न यह है कि ये सभी लोग अपने-अपने कार्यों में व्यस्त क्यों रहते हैं ?

इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि ये सभी लोग धन कमाने के उद्देश्य से विभिन्न आर्थिक क्रियाओं में लगे हुए हैं जिससे उनके परिवार के सदस्यों की आवश्यकताएँ पूरी हो सके। **हमारी वे सभी क्रियाएँ, जिनसे हमें आय प्राप्त होती है, आर्थिक क्रियाएँ कहलाती हैं ।**

अर्थव्यवस्था एक ऐसा तंत्र या ढाँचा है जिसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रियाएँ सम्पादित की जाती हैं, जैसे-कृषि, उद्योग, व्यापार, बैंकिंग, बीमा, परिवहन तथा संचार आदि । ये आर्थिक क्रियाएँ एक ओर तो विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं का संपादन करती है तो दूसरी ओर लोगों को रोजगार के अवसर प्रदान करती हैं ताकि वे अपनी आवश्यकताओं की संतुष्टि हेतु देश में उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं का क्रय कर सके ।

इस तरह प्रत्येक अर्थव्यवस्था दो प्रमुख कार्य संपादित करती है-

(i) लोगों की आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुओं एवं सेवाओं का **उत्पादन** करती है ।

(ii) लोगों को रोजगार के अवसर प्रदान करती है ।

कुछ अर्थशास्त्रियों ने अर्थव्यवस्था को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है;

आर्थर लेविस (Arthur Lewis) के अनुसार "**अर्थव्यवस्था का अर्थ" किसी राष्ट्र के संपूर्ण व्यवहार से होता है जिसके आधार पर मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए वह अपने संसाधनों का प्रयोग करता है ।"**

ब्राउन (Brown) के अनुसार "**अर्थव्यवस्था आजीविका अर्जन की एक प्रणाली है।"** (Economy is the system of earning livelihood.)

दूसरे शब्दों में, "**अर्थव्यवस्था आर्थिक क्रियाओं का एक ऐसा संगठन है जिसके अन्तर्गत लोग कार्य करके अपनी आजीविका चलाते हैं ।"**

संक्षेप में, "**अर्थव्यवस्था समाज की सभी आर्थिक क्रियाओं का योग है ।"**

इसी प्रकार **बिहार की अर्थव्यवस्था का अर्थ** बिहारवासियों के संपूर्ण आर्थिक क्रियाओं के अध्ययन से है जिसके आधार पर बिहारवासियों की मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि के लिए बिहार के संसाधनों का प्रयोग किया जाता है ।

अर्थव्यवस्था की संरचना या ढाँचा (Structure of Economy)

अर्थव्यवस्था की संरचना का मतलब विभिन्न उत्पादन क्षेत्रों में इसके विभाजन से है। चूँकि अर्थव्यवस्था में विभिन्न प्रकार की आर्थिक क्रियाएँ अथवा गतिविधियाँ सम्पादित की जाती हैं, जैसे- कृषि, उद्योग, व्यापार, बैंकिंग, बीमा, परिवहन, संचार आदि । इन क्रियाओं को मोटे तौर पर तीन भागों में बाँटा जाता है -

(i) प्राथमिक क्षेत्र (Primary Sector)

(ii) द्वितीयक क्षेत्र (Secondary Sector)

(iii) तृतीयक क्षेत्र या सेवा क्षेत्र (Tertiary Sector or Service Sector)

सभी अर्थव्यवस्था की तरह भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना को भी तीन भागों में बाँटा जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना को एक चार्ट द्वारा आसानी से समझा जा सकता है।

भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना

(Structure of the Indian Economy)

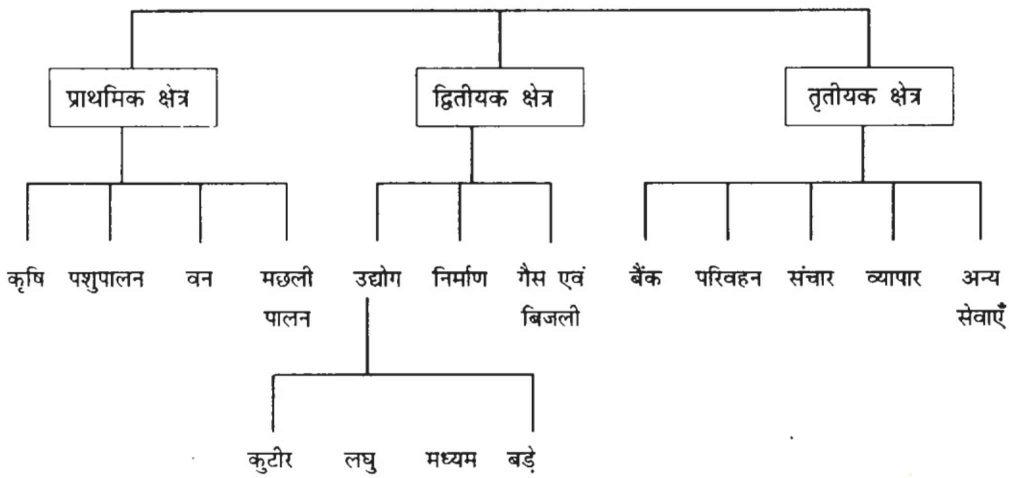

(i) प्राथमिक क्षेत्र- प्राथमिक क्षेत्र को कृषि क्षेत्र भी कहा जाता है । इसके अंतर्गत कृषि, पशुपालन, मछली पालन, जंगलों से वस्तुओं को प्राप्त करना जैसे व्यवसाय आते हैं।

(ii) द्वितीयक क्षेत्र- द्वितीयक क्षेत्र को औद्योगिक क्षेत्र भी कहा जाता है । इसके अंतर्गत खनिज व्यवसाय, निर्माण कार्य, जनोपयोगी सेवाएँ, जैसे- गैस और बिजली आदि के उत्पादन आते हैं ।

(iii) तृतीयक क्षेत्र- तृतीयक क्षेत्र को सेवा क्षेत्र भी कहा जाता है । इसके अंतर्गत बैंक एवं बीमा, परिवहन, संचार एवं व्यापार आदि क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं । ये क्रियाएँ प्राथमिक एवं द्वितीयक क्षेत्रों की क्रियाओं को सहायता प्रदान करती हैं । इसलिए इसे सेवा क्षेत्र कहा जाता है।

राष्ट्रीय आय में इन तीनों क्षेत्रों के योगदान को एक तालिका के द्वारा समझा जा सकता है-

तालिका 1.1 राष्ट्रीय आय में विभिन्न क्षेत्रों का योगदान

क्षेत्र	वर्ष 1901 में	वर्ष 1947 में	वर्ष 2007 में	वर्ष 2011-12 में	वर्ष 2020-21 में
1. प्राथमिक क्षेत्र	63.6	58.7	22.0	16.38	20.19
2. द्वितीयक क्षेत्र	12.7	14.3	22.0	29.35	25.92
3. तृतीयक क्षेत्र	23.7	27.0	56.0	54.27	53.89
योग	100	100	100	100	100

स्त्रोत:- सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय

तालिका 1.1 से स्पष्ट है कि आजादी के समय प्राथमिक क्षेत्र का योगदान 58.7 प्रतिशत था जो घटकर अब केवल 22 प्रतिशत रह गया है। द्वितीयक क्षेत्र का योगदान 1947 में 14.3 प्रतिशत था अब वह बढ़कर 22 प्रतिशत हो गया है। तृतीय क्षेत्र का योगदान 1947 में 27.0 था जो बढ़कर 56 प्रतिशत हो गया है। इसका अर्थ यह है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद योजनात्मक विकास के क्रम में भारत क्रमशः समृद्धि की ओर बढ़ रहा है।

अर्थव्यवस्था के प्रकार (Types of Economy)

आज विश्व में निम्न तीन प्रकार की अर्थव्यवस्था पाई जाती है -

1. पूँजीवादी अर्थव्यवस्था (Capitalist Economy)- पूँजीवादी अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जहाँ उत्पादन के साधनों का स्वामित्व निजी व्यक्तियों के पास होता है जो इसका उपयोग अपने निजी लाभ के लिए करते हैं । जैसे- अमेरिका, जापान, ऑस्ट्रेलिया आदि।

2. समाजवादी अर्थव्यवस्था (Socialist Economy)- समाजवादी अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जहाँ उत्पादन के साधनों का स्वामित्व एवं संचालन देश की सरकार के पास होता है जिसका उपयोग सामाजिक कल्याण के लिए किया जाता है। चीन, क्युबा आदि देशों में समाजवादी अर्थव्यवस्था है। विगत वर्षों में भूमंडलीकरण एवं उदारीकरण के कारण समाजवादी अर्थव्यवस्था का स्वरूप बदलने लगा है ।

3. मिश्रित अर्थव्यवस्था (Mixed Economy)- मिश्रित अर्थव्यवस्था पूँजीवादी तथा समाजवादी अर्थव्यवस्था का मिश्रण है । मिश्रित अर्थव्यवस्था वह अर्थव्यवस्था है जहाँ उत्पादन

के साधनों का स्वामित्व सरकार तथा निजी व्यक्तियों के पास होता है । भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था है । यह अर्थव्यवस्था पूँजीवाद एवं समाजवाद के बीच का रास्ता है । (It is a mid way between capitalism and socialism.)

अर्थव्यवस्था का विकास

अर्थव्यवस्था के विकास का एक लंबा इतिहास है । अर्थव्यवस्था का विकास एक पौधे के विकास की तरह होता है । जिस तरह एक पौधे का क्रमशः विकास होते जाता है और परिपक्वता की स्थिति में उसके फल, डाली आदि का उपयोग मानवहित में होता है । ठीक उसी तरह एक अर्थव्यवस्था का आदिम काल से अब तक विकास हुआ है । अर्थव्यवस्था में हुए परिवर्तन को हम अर्थव्यवस्था के विकास की कहानी कह सकते हैं ।

अर्थव्यवस्था के विकास को देखने के लिए हमें अपने देश भारत के आर्थिक विकास की स्थिति को देखना होगा । **भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास की स्थिति किसी एक समय की चमत्कारिक स्थिति नहीं है । इसका एक अपना इतिहास है ।**

अर्थव्यवस्था के विकास के लिए हम निम्नलिखित दो स्थितियों का विवेचन करेंगे जो दोनों ही पारस्परिक सहयोगी क्रियाएँ हैं-

(i) आर्थिक विकास तथा (ii) मौद्रिक विकास ।

(i) आर्थिक विकास पहले हम आर्थिक विकास की चर्चा करेंगे जो आर्थिक नियोजन (Economic Planning) के द्वारा सम्पन्न होता है । इसके पहले जान लेना आवश्यक है कि आर्थिक विकास है क्या ?

ऐसे तो आर्थिक विकास की परिभाषा को लेकर अर्थशास्त्रियों में काफी मतभेद है । इसकी एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकती है । फिर भी आप इसकी कुछ महत्वपूर्ण परिभाषा को जान लें । **प्रो० रोस्टोव** (Rostow) के अनुसार, "आर्थिक विकास एक ओर श्रम-शक्ति में वृद्धि की दर तथा दूसरी ओर जनसंख्या में वृद्धि के बीच का सम्बन्ध है ।"

समावेशी विकास (Inclusive Growth)

आर्थिक विकास की जिस पद्धति या प्रक्रिया से समाज के सभी वर्गों का जीवन-स्तर ऊँचा होता जाए तथा समाज का कोई भी वर्ग विकास के लाभ से अछूता नहीं रहे तो ऐसे ही विकास की क्रिया को समावेशी विकास (Inclusive Growth) कहा जाता है ।

प्रो० मेयर एवं बाल्डविन (Meier and Baldwin) ने बताया है कि "आर्थिक विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा दीर्घकाल में किसी अर्थव्यवस्था की वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है ।" (Economic Development is a process whereby an economy's real national income increases over a long period of time.)

अत: स्पष्ट है कि आर्थिक विकास आवश्यक रूप से परिवर्तन की प्रक्रिया है। इससे अर्थव्यवस्था के ढाँचे में परिवर्तन होते हैं । इसके चलते प्रति व्यक्ति वास्तविक आय बदलती है तथा आर्थिक विकास के निर्धारक निरंतर बदलते रहते हैं । **आर्थिक विकास का मुख्य उद्देश्य अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्रों में उत्पादकता का ऊँचा स्तर प्राप्त करना होता है** । इसके लिए विकास प्रक्रिया को गतिशील करना पड़ता है ।

आर्थिक विकास को जान लेने के बाद अब आप यह भी जान लें कि **आर्थिक विकास, आर्थिक वृद्धि तथा आर्थिक प्रगति में क्या अंतर है ?**

सामान्यत: आर्थिक विकास (Economic Development) तथा आर्थिक वृद्धि (Economic Growth) में कोई अंतर नहीं माना जाता है । दोनों शब्दों को एक-दूसरे के स्थान पर प्रयोग किया जाता है । लेकिन इधर अर्थशास्त्रियों द्वारा इन दोनों के बीच अन्तर किया जाने लगा है ।

श्रीमती उर्सुला हिक्स (Mrs. Ursula Hicks) के अनुसार, "वृद्धि (Growth) शब्द का प्रयोग आर्थिक दृष्टि से विकसित देशों के संबंध में किया जाता है जबकि विकास (Development) शब्द का प्रयोग विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के संदर्भ में किया जा सकता है ।" **डॉ० ब्राईट सिंह** (Dr. Bright Singh) ने भी लिखा है कि Growth शब्द का प्रयोग विकसित देशों के लिए किया जा सकता है ।"

सतत् विकास (Sustainable Development)

आज प्राकृतिक साधनों जैसे- कोयला, गैस, पेट्रोलियम, वन, जल, सूर्य का प्रकाश आदि का इसी तरह प्रयोग होता रहा तो भावी पीढ़ी को इन प्राकृतिक साधनों से वंचित होना पड़ेगा। यही नहीं, वर्तमान उत्पादन तकनीक ने पर्यावरण प्रदूषण (Environment Pollution) की गंभीर समस्या को जन्म दिया है । अनेक उत्पादन क्रियाएँ जल, वायु एवं भूमि को प्रदूषित कर रही हैं जो आज एक चिंता का विषय है । इन सब समस्याओं के कारण विकास की वर्तमान पद्धति तथा प्रक्रिया को जारी रखना उचित नहीं कहा जा सकता है। इसके विकल्प के रूप में **सतत् विकास या पोषणीय विकास** की अवधारणा का जन्म हुआ है ।

सतत् विकास का शाब्दिक अर्थ है- ऐसा विकास जो जारी रह सके, टिकाऊ बना रह सके। सतत् विकास में न केवल वर्तमान पीढ़ी बल्कि भावी पीढ़ी के विकास को भी ध्यान में रखा जाता है ।

ब्रुण्डलैंड आयोग (Brundland Commission) ने सतत् विकास के बारे में बताया है कि "विकास की वह प्रक्रिया जिसमें वर्तमान की आवश्यकताएँ, बिना भावी पीढ़ी की क्षमता, योग्यताओं से समझौता किए, पूरी की जाती है ।"

इसी तरह **मैड्डीसन** (Maddison) नामक एक अर्थशास्त्री ने बताया है कि **धनी देशों में आय का बढ़ता हुआ स्तर 'आर्थिक वृद्धि' (Economic Growth) का सूचक होता है जबकि निर्धन देशों में आय का बढ़ता हुआ स्तर "आर्थिक विकास" (Economic Development) का सूचक होता है।**

जहाँ तक आर्थिक प्रगति (Economic Progress) की बात है, यह एक व्यापक शब्द है । इसका प्रयोग किसी आर्थिक इकाई के लिए किया जा सकता है। इसमें आर्थिक वृद्धि तथा आर्थिक विकास दोनों ही शामिल रहते हैं । **प्रायः "आर्थिक प्रगति" के स्थान पर "आर्थिक वृद्धि" या "आर्थिक विकास" शब्दों का प्रयोग होता है** । आर्थिक वृद्धि और आर्थिक विकास एक-दूसरे के अर्थ में भी प्रयुक्त होते हैं । सच पूछा जाए तो "विकास" शब्द में "वृद्धि" शब्द का अर्थ भी निहित है । अतः आर्थिक विकास, आर्थिक वृद्धि तथा आर्थिक

प्रगति में कोई खास अंतर नहीं है । इन तीनों को व्यवहार में एक ही जैसा समझा जा सकता है । **प्रो0 लेविस** (Prof. Lewis) की भी यही राय है।

अब आप **आर्थिक नियोजन** (Economic Planning) के बारे में जान सकते हैं जिसके द्वारा आर्थिक विकास होता है ।

आर्थिक नियोजन का अर्थ एक समयवद्ध कार्यक्रम के अन्तर्गत पूर्व निर्धारित सामाजिक एवं आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अर्थव्यवस्था में उपलब्ध संसाधनों का नियोजित समन्वय एवं उपयोग करना है ।

भारत में एक **योजना आयोग** (Planning Commission) है जो आनेवाले पाँच वर्षों के लिए आर्थिक विकास की योजना बनाता है । **भारत में योजना आयोग का गठन 15 मार्च, 1950 को किया गया ।** इसके पदेन अध्यक्ष देश के प्रधानमंत्री होते हैं । योजना आयोग के प्रथम अध्यक्ष तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू थे।

योजना आयोग के शब्दों में- "आर्थिक नियोजन का अर्थ राष्ट्र की प्राथमिकताओं के अनुसार देश के संसाधनों का विभिन्न विकासात्मक क्रियाओं में प्रयोग करना है"। अर्थात् "Economic Planning means utilisation of country's resources into different development activities in accordance with national priorities."

भारत अभी तक अपनी 12 पंचवर्षीय योजनाओं को पूरी कर चुका है। भारत में पहली पंचवर्षीय योजना की अवधि 1951-1956 थी ।

आर्थिक नियोजन का अर्थ
राष्ट्र की प्राथमिकताओं के अनुसार देश के संसाधनों का विभिन्न विकासात्मक क्रियाओं में प्रयोग करना है ।

भारत में आर्थिक विकास का श्रेय नियोजन को दिया जा सकता हैं । भारत में नियोजन के मुख्य उद्देश्य है- आर्थिक विकास की दर को बढ़ाना, कृषि एवं उद्योगों का

भारत में योजना आयोग का गठन 15 मार्च 1950 को किया गया था । आयोग के अध्यक्ष पदेन (Ex-officio) भारत के प्रधानमंत्री होते हैं । सामान्यत: काम-काज एक उपाध्यक्ष की देख-रेख में होता है जिसकी सहायता के लिए आयोग के 8 सदस्य होते हैं।

आधुनिकीकरण करना, आत्मनिर्भरता को प्राप्त करना तथा सामाजिक न्याय (Social justice) को बढ़ावा देना। भारत में नियोजन को एक तालिका 1.2 द्वारा आप समझ सकते हैं ।

तालिका 1.2 भारत में नियोजन

नीति आयोग

नीति आयोग का गठन भारत सरकार द्वारा योजना आयोग के स्थान पर 1 जनवरी 2015 को किया गया । यह सरकार के दिशात्मक और नीति निर्धारक थिंक टैंक के रूप में कार्य कर रहा है। इसके अध्यक्ष पदेन (Ex-officio) भारत के प्रधानमंत्री होते हैं।

योजना	समय
पहली पंचवर्षीय योजना	1951-1956
दूसरी पंचवर्षीय योजना	1956-1961
सातवी पंचवर्षीय योजना	1985-1990
ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना	2007-2012
बाहरवीं पंचवर्षीय योजना	2012-2017

राष्ट्रीय विकास परिषद् (National Development Council- N.D.C.)

भारत में राष्ट्रीय विकास परिषद् का गठन 6 अगस्त 1952 को किया गया था। इसका गठन आर्थिक नियोजन हेतु राज्य सरकारों तथा योजना आयोग के बीच तालमेल तथा सहयोग का वातावरण बनाने के लिए किया गया था । राष्ट्रीय विकास परिषद् में सभी राज्यों के मुख्यमंत्री इसके पदेन् सदस्य होते हैं । प्रत्येक पंचवर्षीय योजना बनाने का कार्य योजना आयोग का है और अन्त में यह राष्ट्रीय विकास परिषद् द्वारा अनुमोदित (Approved) होती है ।

(ii) मौद्रिक विकास वर्तमान इक्कीसवीं शताब्दी में मनुष्य को अनेक प्रकार की सुख-सुविधाएँ उपलब्ध है । यदि हम इसके पीछे के इतिहास को देखें तो लगता है कि विगत वर्षों में इन सुख-सुविधाओं को उपलब्ध कराने के लिए मनुष्यों को कठिन परिश्रम करना पड़ा है । जब मुद्रा का विकास नहीं हुआ था तो लोग वस्तु से वस्तु का लेन-देन कर अपनी

आवश्यकता की पूर्ति करते थे । अर्थव्यवस्था की उस अवस्था को **वस्तु-विनिमय प्रणाली** (Barter system) कहा जाता है । वह अवस्था आर्थिक विकास की प्रारंभिक अवस्था थी। चूँकि उस समय मनुष्य की संख्या तथा आवश्यकता दोनों ही कम थी । इसलिए वस्तुओं के लेन-देन (आदान-प्रदान) से उनकी आवश्यकता की पूर्ति हो जाया करती थी ।

लेकिन बाद में लोगों की आवश्यकताएँ बढ़ती चली गई और उनकी संख्या बढ़ने के कारण अब छोटे-से कस्बे से बढ़कर बड़े गाँव एवं क्षेत्र में मनुष्यों का फैलाव होने लगा। इसी स्थिति में मनुष्य की सोच के आधार पर विनिमय की एक सामान्य इकाई **मुद्रा (Money) का प्रादुर्भाव** हुआ । अब वस्तु के बदले वस्तु नहीं बल्कि मुद्रा के द्वारा विनिमय (Exchange) की क्रिया होने लगी । अब दूर-दराज क्षेत्रों से भी अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए अनाज या अन्य वस्तुओं के बंडल को ले जाने की जरूरत नहीं पड़ी क्योंकि **मुद्रा एक सामान्य क्रय-विक्रय के साधन का कार्य** करने लगा । अर्थव्यवस्था के विकास के इसी काल में व्यक्तियों के समूह पर शासन करने के लिए एक **सरकार (Government) का अभ्युदय हुआ । सरकार की स्वीकृति तथा जनता के विश्वास से मुद्रा का चलन होने लगा ।**

अर्थव्यवस्था के विकास के साथ अब लोग मुद्रा से भी हल्की चीज की आवश्यकता महसूस करने लगे ।

फलत: देश की सरकार के आधिपत्य से स्थापित बैंकों का निर्माण हुआ जिसके द्वारा अब और भी आसानी से मुद्रा का हस्तांतरण (Transfer) किया जाने लगा जिसे हम चेक (Cheque) कहते हैं । इसे एक व्यक्ति या संस्था दूसरे व्यक्ति या संस्था के नाम जारी करता है और **सरकारी आधिपत्य** से स्थापित बैंकों के द्वारा पैसे का आदान-प्रदान होता है।

आज के युग में मानवीय मस्तिष्क का लगभग सारा कार्य एक मशीन के द्वारा होने लगा है जिसे हम **कम्प्यूटर** (Computer) कहते हैं । यह मशीन मानव के द्वारा किए गए आविष्कार का परिणाम है जो मनुष्य से भी अधिक तेज स्मरण-शक्ति रखता है । बिजली से चलनेवाला यह मशीन, जिसे हम कम्प्यूटर कहते हैं, बड़ी तेजी से अपनी स्मरण शक्ति के बल पर पैसे के आदान-प्रदान में भी सहयोग देता है । कम्प्यूटर कैसा होता है ? इसे चित्र 1.1 में दिखाया गया है । आजकल कम्प्यूटर सूचना शिक्षा एवं ज्ञान का सर्व सुलभ साधन हो गया है । प्रयोग एवं वैज्ञानिक आविष्कार के कारण पहले जहाँ बड़ा कम्प्यूटर लोगों के उपयोग में था वही अब

12 हमारी अर्थव्यवस्था, भाग-2

लैप टॉप काफी प्रचलन में है। मोबाइल में भी कम्प्यूटर के यंत्र काम करते हैं। यह सब लोगों की बढ़ती आवश्यकता एवं वैज्ञानिक अविष्कार के कारण संभव हो सका है।

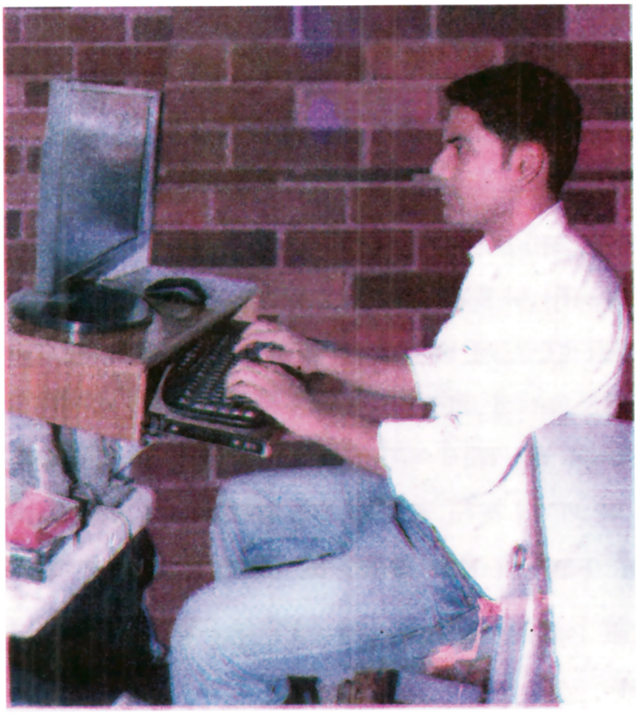

चित्र 1.1 कम्प्यूटर : एक नई खोज

आजकल प्लास्टिक (Plastic) के एक छोटे-से टुकड़े पर इंगित यांत्रिकी चिह्न के माध्यम से पैसे का आदान-प्रदान तथा निकासी होने लगा है । जब एक व्यक्ति एक स्थान से दूसरे स्थान तक बिना विलम्ब के बैंक के माध्यम से पैसे का लेन-देन करता है तो बैंक के इस प्रणाली को **कोर बैंकिंग प्रणाली** (Core Banking System) कहते हैं। इसी तरह एक व्यक्ति प्लास्टिक (Plastic) के यांत्रिकी संकेत (Mechanical Mark) से किसी भी समय बैंक के एक चिह्नित स्थान से किसी भी समय पैसे निकाल सकता है । ये सारी क्रियाएँ बिजली से संचालित कम्प्यूटर के द्वारा होती है। बैंक के जिस चिह्नित स्थान से हर समय पैसे निकालने की सुविधा होती है उसे हम एटीएम (ATM= Automatic Teller Machine) कहते हैं।

इस तरह आपने देखा कि किस तरह पहले के वस्तु-विनियम के युग से हमलोगों ने मुद्रा के युग में प्रवेश किया है । आज हमलोग बैंकिंग प्रणाली के चेक युग से भी आगे कोर बैंकिंग

तथा एटीएम के युग में प्रवेश कर गए हैं । **एटीएम के अलावे हमें आज डेबिट कार्ड (Debit Card) तथा क्रेडिट कार्ड (Credit Card) की भी सुविधा प्राप्त है** । इसे भी हम आर्थिक विकास की एक प्रक्रिया कहेंगे ।

मौद्रिक विकास की संक्षिप्त कहानी

1. **वस्तु-विनिमय प्रणाली-** वस्तु से वस्तु का लेन-देन ।
2. **मौद्रिक प्रणाली-** मुद्रा से वस्तुओं एवं सेवाओं का विनिमय ।
3. **बैंकिंग प्रणाली-** बैंक के माध्यम से चेक के द्वारा विनिमय की क्रिया का सम्पादन।
4. **कोर बैंकिंग प्रणाली** के अन्तर्गत एक संकेत से एक व्यक्ति के खाते से दूर अवस्थित दूसरे व्यक्ति को उसी बैंक के माध्यम से पैसा का हस्तांतरण (Transfer)।
5. **एटीएम (ATM) प्रणाली**- प्लास्टिक के एक छोटे-से कार्ड पर अंकित सूक्ष्म संकेत के आधार पर कहीं भी तथा किसी समय निर्धारित बैंक के केन्द्र से पैसे निकालने की सुविधा।
6. **डेबिट कार्ड** (Debit Card)- बैंक द्वारा दिया गया प्लास्टिक का कार्ड जिसके द्वारा बैंक में अपनी जमा राशि के पैसे का उपयोग करना ।
7. **क्रेडिट कार्ड** (Credit Card)- बैंक द्वारा जारी किया गया प्लास्टिक का एक कार्ड जिसके आधार पर उसके धारक द्वारा पैसे अथवा वस्तु प्राप्त कर लेना ।
8. **UPI** (Unified Payaments Interface) **-** डिजिटल भुगतान का एक ऐसा तरीका है जो मोबाइल आधारित प्लेटफॉर्म के माध्यम से आपके बैंक खाते से जुड़ा होता है । इससे आप सुरक्षित तरीके से अपने बिलों का भुगतान एवं फंड ट्रांसफर कर सकते हैं ।

सिंगासनी गाँव की कहानी

बिहार के पूर्वी चंपारण जिले के रामगढ़वा थाना अन्तर्गत सिंगासनी गाँव का एक लड़का छोटू प्राय: अपनी माँ को सब्जी वाली से अनाज के बदले सब्जी लेते देखता था। उसे जब भी अपनी छोटी-मोटी जरूरतों जैसे- चीनी, कागज, पेंसिल आदि की जरूरत होती तो उसकी माँ उसे गाँव के दूकानदार से उन छोटी-मोटी चीजों को लाने के लिए अनाज देती है । छोटू के पिता जब शहर जाते हैं तो अपने अनाज को बेचकर रुपया लेकर छोटू और उसकी माँ के लिए कपड़े आदि लाते हैं । छोटू का एक संबंधी श्याम कुमार पटना में नौकरी करता था । एक बार होली की छुट्टी में वह अपने यहाँ छोटू को बुलाया। एक दिन शाम को वह छोटू को

अपनी गाड़ी से बाजार घुमाने ले गया। बाजार जाने पर एक बड़े-से दूकान पर श्याम कुमार ने कुछ सामान खरीदा और जब पैसा देने का समय आया तो उसने एक प्लास्टिक का छोटा टुकड़ा दूकानदार को दिया जो कम्प्यूटर के माध्यम से पैसे का भुगतान किया ।

अब छोटू आश्चर्यचकित होकर अपने संबंधी श्याम कुमार से जिज्ञासावश पूछा कि बिना पैसे के आपको ये सामान कैसे मिले ?श्याम कुमार ने धीरे-से छोटू को समझाया कि तुम्हारे घर पर तुम्हारी माँ जो अनाज के बदले वस्तु लेती है वह मुद्रा के पूर्व के विनिमय की स्थिति थी जिसे वस्तु विनिमय प्रणाली कहते हैं । तुम्हारे पिताजी अनाज बेचकर पैसे लेकर जो शहर से सामान लाते हैं वह मौद्रिक प्रणाली की स्थिति है और आज हम जो प्लॉस्टिक (Plastic) के एक टुकड़े से अपनी वस्तु की कीमत का भुगतान किए हैं वह कम्प्यूटरीकृत बैंकिंग प्रणाली है । आज के युग में हम ऐसा भुगतान चेक के द्वारा भी कर सकते हैं। अथवा इस प्लास्टिक के टुकड़े को जिसे **Credit Card** अथवा **Debit Card** कहते हैं, से भी कर सकते हैं । छोटू आश्चर्य से अपने संबंधी श्याम कुमार की बातों को सुनकर बहुत खुश हुआ और उसने गाँव तथा स्कूल लौटकर अपने साथियों से विनिमय के विकास की इस क्रिया को कहने का संकल्प लिया ।

आर्थिक विकास की माप एवं सूचकांक

राष्ट्रीय आय (National Income)- राष्ट्रीय आय को आर्थिक विकास का एक प्रमुख सूचक माना जाता है । किसी देश में एक वर्ष की अवधि में उत्पादित सभी वस्तुओं एवं सेवाओं के मौद्रिक मूल्य के योग को राष्ट्रीय आय कहा जाता है । सामान्य तौर पर जिस देश का राष्ट्रीय आय अधिक होता है वह देश विकसित कहलाता है और जिस देश का राष्ट्रीय आय कम होता है वह देश अविकसित कहलाता है ।

प्रति व्यक्ति आय (Per capita Income)- आर्थिक विकास की माप करने के लिए

प्रति व्यक्ति आय को सबसे उचित सूचकांक माना जाता है । प्रति व्यक्ति आय देश में रहने वाले व्यक्तियों की औसत आय होती है । राष्ट्रीय आय को देश की कुल जनसंख्या से भाग देने पर जो भागफल आता है, वह प्रति व्यक्ति आय कहलाता है । फार्मूले के रूप में-

$$\text{प्रतिव्यक्ति आय} = \frac{\text{राष्ट्रीय आय}}{\text{कुल जनसंख्या}}$$

विश्व बैंक (World Bank) की विश्व विकास रिपोर्ट (World Development Report), 2006 के अनुसार जिन देशों की 2004 में प्रतिव्यक्ति आय 4,53,000 रुपये प्रतिवर्ष या इससे अधिक है, वह विकसित देश (समृद्ध देश) है और वे देश जिनकी प्रति व्यक्ति आय 37,000 रुपये प्रतिवर्ष या इससे कम है उन्हें निम्न आय वाला देश (विकासशील) कहा गया है । भारत निम्न आय वर्ग के देश में आता है, क्योंकि भारत की प्रति व्यक्ति आय 2004 में केवल 28,000 रुपये प्रतिवर्ष थी ।

कुछ चयनित राज्यों के अध्ययन से यह पता चलता है कि बिहार में प्रति व्यक्ति आय कम है । यह निम्न तालिका से स्पष्ट होता है -

तालिका 1.3 चयनित राज्यों की प्रति व्यक्ति आय

राज्य	2000-2003 के लिए प्रति व्यक्ति आय (रुपयों में)	2020-21 स्थिर कीमत पर प्रति व्यक्ति आय आधार वर्ष 2011-12
पंजाब	26,000	1,11,662
केरल	22,800	1,32,700
बिहार	5,700	28,127

तालिका 1.3 से स्पष्ट होता है कि इन तीन राज्यों में केरल की प्रतिव्यक्ति आय सबसे अधिक और बिहार की प्रतिव्यक्ति आय सबसे कम है । अगर विकास को मापने के लिए प्रतिव्यक्ति आय का प्रयोग किया जाए तो इन तीनों राज्यों में केरल सबसे अधिक और बिहार सबसे कम विकसित राज्य माना जाएगा ।

माप विकास सूचकांक- (Human Development Index) यह सूचकांक संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) द्वारा महबूब-उल-हक (Mahbub-Ul-Haq) के निर्देशन में तैयार की गई पहली **मानव विकास रिपोर्ट** (Human Development Report) में प्रस्तावित किया गया था । यूएनडीपी (UNDP) द्वारा प्रकाशित मानव विकास रिपोर्ट (HDR) विभिन्न

देशों की तुलना लोगों के शैक्षिक स्तर, उनकी स्वास्थ्य स्थिति और प्रति व्यक्ति आय के आधार पर करती है । जहाँ तक **मानव विकास सूचकांक (HDI)** का प्रश्न है तो इसके तीन सूचक हैं - (i) जीवन आशा, (ii) शिक्षा प्राप्ति तथा (iii) जीवन-स्तर ।

फार्मूले के रूप में-

HDI = जीवन आशा सूचकांक + शिक्षा प्राप्ति सूचकांक + जीवन स्तर सूचकांक

HDI तीनों सूचकांकों का औसत होता है। पैमाने पर सभी देशों की HDI दर शून्य से एक होती है ।

भारत तथा उसके पड़ोसी देशों की 2004 की मानव विकास रिपोर्ट को निम्न तालिका 1.4 द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है ।

तालिका 1.4 2020 के लिए विभिन्न देशों के HDI मूल्य

देश	HDI मूल्य	HDI क्रम
स्विट्जरलैंड	0.962	1
नार्वे	0.961	2
आस्ट्रेलिया	0.951	5
श्री लंका	0.782	73
चीन	0.768	79
बंगलादेश	0.661	129
भारत	0.633	132
पाकिस्तान	0.544	161

स्रोत– **UNDP मानव विकास रिपोर्ट, 2020**

चूँकि 2006 में 177 देशों के लिए HDI की गणना की गई थी। इसमें भारत का HDI मूल्य 0.611 है तथा 126 क्रम पर है । इसका मतलब है कि भारत में मानव विकास मध्यम स्तर का है । लिंग विकास सूचकांक (GDI) की दरों में भारत ने 2000 में 105वें क्रम से 2004 में 96वें क्रम पर आ गया था ।

यह आश्चर्य की बात है कि हमारे पड़ोस का एक छोटा-सा देश श्रीलंका भारत से आगे है और भारत जैसे बड़े देश का विश्व में इतना नीचा क्रमांक है । किंतु भारत में विकास की क्रिया में तेजी आने के कारण अब स्थिति सुधरने लगी है।

राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट(National Human Development Report)- UNDP की मानव विकास की तर्ज पर भारत की पहली मानव विकास रिपोर्ट अप्रैल, 2002 में जारी की गई । योजना आयोग द्वारा तैयार की गई इस रिपोर्ट को तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने 23 अप्रैल, 2002 को नई दिल्ली में जारी किया । रिपोर्ट को भारतीय लोकतंत्र के लिए एक महत्वपूर्ण दस्तावेज बताते हुए योजना आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष के० सी० पंत ने कहा था कि राज्यों के लिए योजना आकार तय करते समय इसे आधार बनाया जा सकता है । इस पहली राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट (NHDR) में 1981, 1991 तथा 2001 के लिए राज्यों तथा संघीय क्षेत्रों के HDI मूल्यों का अनुमान लगाया गया था। इस रिपोर्ट में विकास की दरें भिन्न-भिन्न थी । केरल का रैंक सबसे ऊपर था जबकि बिहार, मध्य प्रदेश, असम, राजस्थान तथा उत्तर प्रदेश (BIMARU) का रैंक सबसे नीचे था ।

निर्धनता की स्थिति को जानने के लिए रिपोर्ट में प्रस्तुत मानव निर्धनता सूचकांक (Human Poverty Index) निर्धनता के परंपरागत निर्धनता अनुपात (Poverty Ratio) से काफी मिलता-जुलता है । राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, जम्मू-कश्मीर आदि में मानव निर्धनता सूचकांक (HPI) में कमी आई है। वहीं बिहार, उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान में इसमें मामूली कमी आई है ।

उपभोक्ता व्यय को आर्थिक विकास का सूचक मानते हुए अपने देश की पहली राष्ट्रीय मानव विकास रिपोर्ट में यह बताया गया है कि विगत् कुछ वर्षों में देश की ग्रामीण जनता की व्यय क्षमता में कमी आई है जबकि शहरी क्षेत्रों में इसमें काफी वृद्धि हुई है ।

आधारिक संरचना
(Infrastructure)

आधारिक संरचना का मतलब उन सुविधाओं तथा सेवाओं से है जो देश के आर्थिक विकास के लिए सहायक होते हैं । **वे सभी तत्त्व, जैसे- बिजली, परिवहन, संचार, बैंकिंग, स्कूल, कॉलेज, अस्पताल आदि देश के आर्थिक विकास के आधार हैं, उन्हें देश की आधारिक संरचना (आधारभूत ढाँचा) कहा जाता है।** किसी देश के आर्थिक विकास में आधारिक संरचना का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जिस देश का आधारभूत ढाँचा जितना अधिक विकसित होगा, वह देश उतना ही अधिक विकसित होगा।

बिहार के विकास की स्थिति

बिहार का इतिहास काफी गौरवशाली रहा है । यही बिहार है जहाँ गौतम बुद्ध को ज्ञान प्राप्त हुआ था । महावीर ने शांति का संदेश यहीं दिया था । चन्द्रगुप्त, अशोक, शेरशाह, गुरुगोबिन्द सिंह, बाबू वीर कुँवर सिंह, देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद का जन्म इसी बिहार में हुआ था । बिहार में ही महात्मा गाँधी ने **"चम्पारण आंदोलन"** का बिगुल फूँका था । बिहार में ही लोकनायक जयप्रकाश ने **"संपूर्ण क्रांति"** का नारा दिया था । लोकगीतकार भिखारी ठाकुर का जन्म भी इसी बिहार में हुआ था ।

लेकिन वही बिहार आज कई तरह की समस्याओं का शिकार है । यहाँ गरीबी, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार तथा अशांति का माहौल है । **साधनों के मामले में धनी होते हुए भी बिहार की स्थिति दयनीय है** । आज बिहार अति पिछड़े राज्यों में गिना जाता है ।

बिहार के पिछड़ेपन के कारण- आर्थिक दृष्टि से बिहार के पिछड़ेपन के कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार है-

1. तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या- बिहार में जनसंख्या काफी तेजी से बढ़ रही है। इसके चलते विकास के लिए साधन कम हो जाते हैं । अधिकांश साधन जनसंख्या के भरण-पोषण में चला जाता है ।

बिहार के पिछड़ेपन के कारण

1. तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या
2. आधारिक संरचना का अभाव
3. कृषि पर निर्भरता
4. बाढ़ तथा सूखा से क्षति
5. औद्योगिक पिछड़ापन
6. गरीबी
7. खराब विधि व्यवस्था
8. कुशल प्रशासन का अभाव

2. आधारिक संरचना का अभाव- किसी भी देश या राज्य के विकास के लिए आधारिक संरचना का होना जरूरी होता है। लेकिन बिहार इस मामले में पीछे हैं । राज्य में सड़क, बिजली एवं सिंचाई का अभाव है । साथ ही शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाएँ भी कम है। इस वजह से भी बिहार में पिछड़ेपन की स्थिति कायम है ।

3. कृषि पर निर्भरता - बिहार की

अर्थव्यवस्था पूरी तरह कृषि पर आधारित है । यहाँ की अधिकांश जनता कृषि पर ही निर्भर है। लेकिन हमारी कृषि की भी हालत ठीक नहीं है। हमारी कृषि काफी पिछड़ी हुई है । इसके चलते उपज कम होती है ।

4. बाढ़ तथा सूखा से क्षति - बिहार में खासकर उत्तरी बिहार में नेपाल से आए जल से बाढ़ आती है । हर साल कम या अधिक बाढ़ का आना बिहार में तय है । पिछले साल 2008 में कोसी बाढ़ का प्रलय हमारे सामने है । इससे कितने जान-माल की क्षति हुई । इस साल 2009 में भी नेपाल से आए जल से बागमती नदी में बाढ़ देखने को मिला । इसके आसपास के इलाके सीतामढ़ी, दरभंगा, मधुबनी आदि जगहों में फसल की काफी बर्बादी हुई । इसे चित्र सं॰-1.2 द्वारा समझाया गया है -

चित्र 1.2 बाढ़ की स्थिति

इसी तरह सूखे की मार दक्षिणी बिहार को झेलनी पड़ती है । इससे हमारे किसानों को अकाल जैसी स्थिति का सामना करना पड़ता है । इसे चित्र सं॰ 1.3 द्वारा समझाने का प्रयास किया गया है।

चित्र 1.3 सूखा की स्थिति

इस तरह अपना बिहार बाढ़ तथा सूखा दोनों की चपेट में एक साथ रहता है ।

5. औद्योगिक पिछड़ापन– किसी भी देश या राज्य के लिए उद्योगों का विकास जरूरी होता है । लेकिन बिहार में औद्योगिक विकास कुछ दिखता ही नहीं है । यहाँ के सभी खनिज क्षेत्र एवं बड़े उद्योग तथा प्रतिष्ठित अभियांत्रिकी संस्थाएँ सभी झारखण्ड चले गए । इस कारण बिहार में कार्यशील औद्योगिक इकाइयों की संख्या नगण्य ही रह गई है।

6. गरीबी– बिहार एक ऐसा राज्य है जहाँ गरीबी का भार काफी अधिक है । राज्य में प्रतिव्यक्ति आय राष्ट्रीय औसत के आधे से भी कम है । इसके चलते भी बिहार पिछड़ा है । बिहार में निर्धनता का दुष्चक्र है ।

7. खराब विधि व्यवस्था– किसी भी देश या राज्य के लिए शांति तथा सुव्यवस्था जरूरी होती है । लेकिन बिहार में वर्षों तक कानून व्यवस्था कमजोर स्थिति में थी जिसके चलते नागरिक शांतिपूर्वक उद्योग नहीं चला पा रहा था । इस तरह खराब विधि व्यवस्था भी बिहार के पिछड़ेपन का एक महत्वपूर्ण कारण बन गया है ।

8. कुशल प्रशासन का आभाव– बिहार की प्रशासनिक स्थिति ऐसी हो गई है जिसमें पारदर्शिता का अभाव है । इसके कारण आए दिन भ्रष्टाचार के अनेक उदाहरण सामने आए हैं।

तालिका 1.5 बिहार की स्थिति

देश	बिहार	भारत
जनसंख्या 2001	8.29 करोड़	102.9 करोड़
जनसंख्या वृद्धि दर	2.5 प्रतिशत	1.9 प्रतिशत
साक्षरता दर कुल	47.53 प्रतिशत	65.4 प्रतिशत
साक्षरता पुरुष	60.3 प्रतिशत	75.8 प्रतिशत
साक्षरता स्त्री	33.5 प्रतिशत	54.1 प्रतिशत
वार्षिक विकास दर	2.7 प्रतिशत	6.0 प्रतिशत
कृषि विकास दर	1.5 प्रतिशत	2.7 प्रतिशत
कृषि पर जनसंख्या की निर्भरता	73 प्रतिशत	60.0 प्रतिशत
गरीबी रेखा के नीचे जनसंख्या	42.6 प्रतिशत	26.0 प्रतिशत
प्रतिव्यक्ति आय	3948 रुपये	13226 रुपये

स्रोत– विभिन्न सरकारी दस्तावेज

तत्कालीन राज्यपाल ने राष्ट्रीय विकास परिषद में 27 जून, 2005को अपने अभिभाषण में बिहार की आर्थिक स्थिति का जो लेखा प्रस्तुत किया था वह उपरोक्त तालिका में स्पष्ट किया गया है। उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि बिहार में आर्थिक विकास की गति काफी धीमी है, किन्तु वर्तमान में केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (C.S.O.) **के आकलन** में जहाँ घरेलू उत्पाद (GDP) 2003-04 में नकारात्मक (Negative) -5.15 प्रतिशत था वहीं 2004-05 से 2008-09 के बीच सकारात्मक (Positive) 11.03 प्रतिशत हो गया जो देश के सबसे तेजी से विकास कर रहे गुजरात से कुछ अंकों से दूसरे नम्बर पर आ गया । गुजरात का उपरोक्त अवधि में विकास दर 11.05 प्रतिशत रहा जबकि बिहार का 11.03 प्रतिशत रहा है । बिहार के विकास के इस गति को कुछ अर्थशास्त्री 'आश्चर्य का अर्थशास्त्र' (Miracle Economics) भी कहते हैं ।

बिहार के पिछड़ेपन को दूर करने के उपाय- आर्थिक विकास की गति को तेज करके ही बिहार की स्थिति में सुधार किया जा सकता है । बिहार में आर्थिक विकास की गति को तेज करने के लिए बिहार के पिछड़ेपन को दूर करना काफी जरूरी है । पूर्व राष्ट्रपति डॉ० ए० पी० जे० अब्दुल कलाम ने कहा था कि "**बिहार के विकास के बिना भारत का विकास संभव नहीं है।**" बिहार देश का एक बड़ा राज्य है और इसके विकास की गति में तेजी आने से भारत का विकास भी संभव होगा ।

बिहार में पिछड़ेपन को दूर करने के लिए निम्न उपाय किए जा सकते हैं-

1. जनसंख्या पर नियंत्रण- राज्य में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या पर रोक लगाया जाए। परिवार नियोजन कार्यक्रमों को लागू किया जाए । इसके लिए राज्य की जनता एवं खास करके महिलाओं में शिक्षा का प्रचार किया जाए ।

2. कृषि का तेजी से विकास - बिहार में कृषि ही जीवन का आधार है । अतः कृषि में नए यंत्रों का प्रयोग किया जाए। उत्तम खाद, उत्तम बीज का प्रयोग किया जाए ताकि उपज में वृद्धि लायी जा सके । इस तरह कृषि का तेजी से विकास कर बिहार का आर्थिक विकास किया जा सकता है ।

3. बाढ़ पर नियंत्रण - बिहार के विकास में बाढ़ एक बहुत बड़ा बाधक है । फसल का बहुत बड़ा भाग बाढ़ के चलते बर्बाद हो जाता है । जानमाल की भी काफी क्षति होती है। उत्तरी

बिहार की अधिकांश नदियाँ हिमालय से निकलती है इसलिए नेपाल सरकार के सहयोग से बाढ़ नियंत्रण को सफल बनाया जा सकता है।

दुर्भाग्य से बिहार का दूसरा भाग सूखे की चपेट में रहता है अत: सिंचाई की पर्याप्त सुविधा को उपलब्ध करा इस दु:खद स्थिति से छुटकारा पाया जा सकता है ।

4. आधारिक संरचना का विकास- बिहार में बिजली की काफी कमी है । अत: बिजली का उत्पादन बढ़ाया जाए। सड़क-व्यवस्था में सुधार लाया जाए। शिक्षा एवं स्वास्थ्य सुविधाओं में सुधार लाया जाए जिससे विकास की प्रक्रिया और अधिक आगे बढ़ सके।

बिहार के पिछड़ेपन को दूर करने के उपाय

1. जनसंख्या पर नियंत्रण
2. कृषि का तेजी से विकास
3. बाढ़ पर नियंत्रण
4. आधारिक संरचना का विकास
5. उद्योगों का विकास
6. गरीबी दूर करना
7. शांति व्यवस्था की स्थापना
8. स्वच्छ तथा ईमानदार प्रशासन
9. केन्द्र से अधिक मात्रा में संसाधनों का हस्तांतरण

5. उद्योगों का विकास- बिहार से झारखण्ड के अलग होने से यह राज्य लगभग उद्योग विहीन हो गया था । मुख्यत: चीनी मिलें बिहार के हिस्से में रह गई थीं जो अधिकतर बन्द पड़ी थीं । लेकिन विगत् कुछ वर्षों से देश के विभिन्न भागों से तथा विदेशों से पूँजी निवेश लाने के अनवरत प्रयास किए जा रहे हैं ताकि वर्तमान में जर्जर अवस्था के उद्योगों का पुनर्विकास किया जा सके ।

6. गरीबी दूर करना- बिहार में गरीबी का सबसे अधिक प्रभाव है । गरीबी-रेखा के नीचे लगभग 42 प्रतिशत से भी अधिक लोग यहाँ जीवन-बसर कर रहे हैं। इनके लिए रोजगार की व्यवस्था की जाए। स्व-रोजगार को बढ़ावा देने के लिए इन्हें प्रशिक्षण (Training) दिया जाए।

7. शांति व्यवस्था की स्थापना- बिहार में शांति का माहौल कायम कर व्यापारियों में विश्वास जगाया जा सकता है तथा आर्थिक विकास की गति को तेज किया जा सकता है।

8. स्वच्छ तथा ईमानदार प्रशासन बिहार के आर्थिक विकास के लिए स्वच्छ, कुशल

तथा ईमानदार प्रशासन जरूरी है ।

9. केन्द्र से अधिक मात्रा में संसाधनों का हस्तांतरण-बिहार के विकास के लिए केन्द्र से अधिक मात्रा में संसाधनों के हस्तांतरण (Transfer of Resources) की जरूरत है। कुछ राज्यों को **विशेष राज्य का दर्जा** देकर उन्हें अधिक मात्रा में केन्द्रीय सहायता दी जाती है । **विशेष राज्य का दर्जा प्राप्त होने के कारण उत्तर-पूर्व के राज्यों को विशेष सहायता मिलती रही है।**

चूँकि बिहार आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा माना जाता रहा है । **15 नवम्बर 2000 को बिहार से झारखण्ड के अलग हो जाने के बाद खनिज बाहुल्य क्षेत्र झारखण्ड में चले गए और बिहार के पास केवल उर्वरक भूमि तथा कुछ ही उद्योग रह गए ।** बिहार की अत्यधिक जनसंख्या का कृषि पर निर्भरता, सिंचाई की सुविधा का अभाव, जनसंख्या में तेजी से वृद्धि तथा गरीबी जैसी अनेक समस्याएँ यहाँ उपस्थित है । अक्सर बिहार का उत्तरी भाग बाढ़ से तबाह रहता है तो दक्षिणी भाग सूखा से ग्रस्त रहता है । पिछले साल 2008 में कोसी की भयंकर बाढ़ का प्रकोप झेलना पड़ा । ऐसी परिस्थिति में सड़क, बिजली, नहर, स्वास्थ्य के साधनों इत्यादि के विकास के लिए अधिक धन की जरूरत है । अपने आंतरिक संसाधनों से इसकी पूर्ति नहीं की जा सकती है । इसलिए इन दिनों बिहार को विशेष राज्य का दर्जा देने की माँग जोरों से की जा रही है । इस संदर्भ में राजनीतिक प्रयास काफी किए जा रहे हैं । विशेष राज्य का दर्जा मिलने से राज्य को केन्द्र के द्वारा विकास के मद में अधिक सहायता तथा करों से रियायत मिलने लगेगी जिससे बिहार के विकास में गति आने की संभावना है । लेकिन बिहार को विशेष राज्य का दर्जा देने में केन्द्र सरकार के समक्ष अनेक व्यावहारिक तथा प्रशासनिक समस्याएँ आ रही हैं ।

देश के आर्थिक विकास में बिहार के विकास की भूमिका

बिहार देश का एक बड़ा राज्य है । भौगोलिक क्षेत्रफल तथा जनसंख्या दोनों ही दृष्टिकोण से बिहार का स्थान भारत में अपना एक अलग महत्त्व रखता है । इसलिए कहा जाता है कि **''यदि भारत का विकास करना है तो बिहार का विकास करना आवश्यक है।''**

चाहे राजनीतिक साझेदारी की बात हो अथवा विकास के मापदंड को स्थापित करने की

बात हो, अब बिहार को नजर अंदाज नहीं कर सकते । एक प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **कुज्नेत्स** (Kuznets) ने विश्व के संदर्भ में यह कहा था कि "गरीबी कैन्सर (Cancer) रोग की तरह है । जिस तरह शरीर के एक छोटे-से भाग में हुआ कैन्सर पूरे शरीर को विषाक्त कर देता है। ठीक उसी तरह किसी एक भाग की गरीबी पूरे विश्व की संपन्नता के लिए घातक होती है।"

उपरोक्त कथन की सार्थकता इस बात में है कि बिहार को पिछड़ा और गरीब रखकर हम भारतवर्ष के विकास एवं समृद्धि की कल्पना नहीं कर सकते ।

बिहार देश का एक ऐसा राज्य है जहाँ अत्यधिक उर्वरक भूमि (Fertile Land) है । हिमालय से निकलने वाली नदियों में अनवरत जल-प्रवाह होता रहता है । यहाँ धरती के नीचे कम सतह पर ही जल प्राप्त हो जाते हैं। यदि बिहार की नदियों को परस्पर जोड़ (River-inter-linking) कर जल संसाधन के उपयोग की योजना को लागू कर दिया जाए तो उत्तरी बिहार को बाढ़ की विभीषिका से बचाया जा सकता है तथा दक्षिणी बिहार को सिंचाई की सुविधा के द्वारा सूखे से राहत दिलायी जा सकती है।

बिहार में दक्ष मानव संसाधनों की कमी नहीं है। न केवल वर्तमान के प्रौद्योगिकी (Technology) क्षेत्र में बिहार की भागीदारी अधिक है बल्कि यहाँ के कम पढ़े-लिखे मजदूरों ने भी दूसरे राज्यों में जाकर वहाँ के विकास को फलीभूत बनाया है । देश के सूचना प्रौद्योगिकी (Information Tcchnology) में तथा पंजाब के कृषि विकास में बिहार के मानव संसाधनों का प्रमुख योगदान रहा है ।

देश के आर्थिक विकास के प्रत्येक क्षेत्र में बिहारियों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। यहाँ के प्राकृतिक संसाधन तथा कर्मठ मानव संसाधन के योगदान से बिहार की कृषि और कृषि-जन्य या कृषि-जनित उद्योगों (Agro-Based Industry) के विकास से राज्य का विकास किया जा सकता है। हाल के वर्षों में बिहार के विकास में गति आई है। केन्द्रीय साँख्यिकी संगठन (C.S.O.) ने बिहार का

कृषि-जनित उद्योग

ऐसे उद्योग जो कृषि उत्पादन पर आश्रित होते हैं अथवा जिनके उत्पादन में कृषि क्षेत्र से कच्चा माल आता है उसे कृषि-जनित उद्योग कहते हैं । उदाहरण के लिए आम से अचार बनाना, टमाटर से टमाटर सॉस बनाना आदि ।

वर्तमान विकास दर 11.03 प्रतिशत माना है जो देश में गुजरात (11.5%) के बाद दूसरा है ।

विगत् वर्षों में भारत के विकास की गति में तेजी आई है । विकास की गति के कारण ही वर्त्तमान दौर की आर्थिक मंदी का दुष्प्रभाव भारत की अर्थव्यवस्था पर कम हुआ है । यह संतोष की बात है कि विगत् वर्षों में बिहार के विकास के लिए कारगर प्रयत्न किए जा रहे हैं । बिहार में प्रगति के इस दौर की प्रशंसा देश भर में की जाने लगी है। यदि देश और बिहार कंधे से कंधा मिलाकर विकास की क्रिया के वर्तमान दौर को कारगर करे तो इक्कीसवीं शताब्दी में आर्थिक दृष्टिकोण से भारत विश्व के अग्रणी देशों में आ जाएगा । अत: स्पष्ट है कि देश के आर्थिक विकास में बिहार के आर्थिक विकास की भूमिका महत्त्वपूर्ण है ।

मूलभूत आवश्यकताएँ एवं विकास का संबंध

देश के नागरिकों के रहने के लिए मकान, खाने के लिए रोटी तथा शरीर ढँकने के लिए कपड़ा उनकी न्यूनतम मूलभूत आवश्यकता है । हर समय सत्ता के गलियारे में रोटी, कपड़ा और मकान का नारा जोरों से बुलन्द किया जाता है ताकि देश के विकास द्वारा लोगों की न्यूनतम आवश्यकता को पूरा किया जा सके । देश के गरीब लोगों की आकांक्षा इन न्यूनतम मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्त्ति करना रहता है । यद्यपि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद विगत् साठ से अधिक वर्षों में देश में विकास के बहुत सारे कार्यक्रम चलाए गए हैं । देश की बढ़ती हुई जनसंख्या विकास के मार्ग में एक बहुत बड़ी बाधा है । अत: विकास की दर बढ़ने के बावजूद भी गरीबी का उन्मूलन नहीं हो पाया है । इसके कारण **गरीबी-रेखा (poverty line)** के नीचे रहनेवाले लोगों की संख्या में अपेक्षित कमी

> **गरीबी-रेखा** (Poverty Line)- गरीबी को निर्धारित करने के लिए योजना आयोग द्वारा सीमांकन (Border Line) किया गया है । गरीबी-रेखा कैलोरी मापदण्ड पर आधारित है । ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 कैलोरी तथा शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निर्धारित किया गया है । अर्थशास्त्र में गरीबी की माप की यह एक काल्पनिक रेखा है । इस रेखा (Line) से नीचे के लोगों को गरीबी रेखा के नीचे (Below Poverty Line) माना जाता है । इसे संक्षेप में BPL भी कहा जाता है ।

मनरेगा (MGNREGA) ग्रामीण रोजगार देने की यह एक राष्ट्रीय योजना है । इसके अन्तर्गत ग्रामीण मजदूरों को साल में कम-से-कम 100 दिनों के लिए रोजगार देने की व्यवस्था है । इसके लिए न्यूनत्तम मजदूरी निर्धारित है ।

नहीं आयी है ।

समुचित न्यायपूर्ण **सार्वजनिक वितरण प्रणाली** (Public Distribution System) से लोगों को खाने के लिए रोटी उपलब्ध हो सकती है । देश में रोजगार के द्वारा नागरिकों की आय में वृद्धि की जा सकती है जिससे उन्हें कपड़ा और मकान उपलब्ध होगा। देश के ग्रामीण क्षेत्रों के गरीब मजदूरों के लिए राष्ट्रीय रोजगार देने की योजना बनाई गयी है । यह योजना (Scheme) महात्मा गांधी राष्ट्रीय राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act) के तहत शुरू की गई है । इसे संक्षेप में **"MGNREGA" (मनरेगा)** कहा जाता है । ग्रामीण रोजगार देने की इस स्कीम को विश्व का सबसे बड़ा रोजगार योजना माना जाता है।

विकास की अवधारणा से हमारा मतलब देश के सभी क्षेत्रों और सभी वर्गों के विकास से है । सभी क्षेत्रों से हमारा मतलब कृषि, उद्योग, व्यवसाय आदि से है तथा सभी वर्गों के विकास से हमारा मतलब निष्पक्ष रूप से तथा बिना भेद-भाव किए हुए सम्पूर्ण समाज के विकास से है । इन दिनों सभी वर्गों के सम्यक् विकास की अवधारणा महत्त्वपूर्ण हो गई है जिसे हम आर्थिक शब्दावली में **''Inclusive Growth''** कहते हैं । इस प्रकार के विकास के द्वारा हमारा प्रयास लोगों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति कराना होता है।

सारांश

- भारतीय अर्थव्यवस्था का वर्तमान स्वरूप कोई एक दिन की संरचना नहीं है । इसकी मूल सूत्र की जड़े काफी गहरी है । अंग्रेजी शासन के पहले भारत को **''सोने की चिड़िया''** कहा जाता था । लेकिन अंग्रेजी शासन के लगभग 200 वर्षों में भारतीय अर्थव्यवस्था का काफी शोषण हुआ ।
- अर्थव्यवस्था आजीविका अर्जन की एक प्रणाली है ।
- अर्थव्यवस्था की संरचना का मतलब विभिन्न उत्पादन क्षेत्रों में इसके विभाजन से है। भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचना को तीन भागों में बाँटा गया है- (i) प्राथमिक क्षेत्र, (ii) द्वितीयक क्षेत्र तथा (iii) तृतीयक क्षेत्र ।

- आज विश्व में तीन प्रकार की अर्थव्यवस्था पाई जाती है - (i) पूँजीवादी अर्थव्यवस्था, (ii) समाजवादी अर्थव्यवस्था तथा (iii) मिश्रित अर्थव्यवस्था। भारत में मिश्रित अर्थव्यवस्था है।
- आर्थिक विकास (Economic Development) एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा दीर्घकाल में किसी अर्थव्यवस्था की वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है।
- भारत में आर्थिक विकास का श्रेय नियोजन को दिया जा सकता है।
- आर्थिक नियोजन का अर्थ राष्ट्र की प्राथमिकताओं के अनुसार देश के संसाधनों का विभिन्न विकासात्मक क्रियाओं में प्रयोग करना है।
- आर्थिक विकास की माप करने के लिए प्रतिव्यक्ति आय को सबसे उचित सूचकांक माना जाता है।
- संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) द्वारा प्रकाशित मानव विकास रिपोर्ट (Human Development Report- HDR) विभिन्न देशों की तुलना लोगों के शैक्षिक-स्तर, उनकी स्वास्थ्य स्थिति और प्रतिव्यक्ति आय के आधार पर करती है।
- साधनों के मामले में धनी होते हुए भी बिहार की स्थिति दयनीय है। आज बिहार पिछड़ा हुआ राज्य माना जाता है। इसके अनेक कारण हैं। हरेक साल बाढ़ तथा सूखा का प्रकोप इस राज्य को झेलना पड़ता है।
- आर्थिक विकास की गति को तेज करके बिहार की स्थिति में सुधार किया जा सकता है। पूर्व राष्ट्रपति ए० पी० जे० अब्दुल कलाम ने ठीक ही कहा था कि "बिहार के विकास के बिना भारत का विकास संभव नहीं है।"
- आजकल बिहार को "विशेष राज्य का दर्जा" देने की माँग केन्द्र सरकार से की जा रही है। यदि केन्द्र सरकार बिहारवासियों की यह माँग मान लेती है तो बिहार को विशेष आर्थिक पैकेज मिल सकता है। इस विशेष आर्थिक सहायता से बिहार अपनी स्थिति में सुधारकर अपना आर्थिक विकास कर सकता है।
- बिहार को विशेष राज्य का दर्जा देने के क्षेत्र में केन्द्र सरकार के समक्ष अनेक व्यावहारिक तथा प्रशासनिक समस्याएँ आ रही हैं।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. **निम्न को प्राथमिक क्षेत्र कहा जाता है।**

(क) सेवा क्षेत्र (ख) कृषि क्षेत्र

(ग) औद्योगिक क्षेत्र (घ) इनमें से कोई नहीं

2. **इनमें कौन-से देश में मिश्रित अर्थव्यवस्था है ?**

(क) अमेरिका (ख) चीन

(ग) भारत (घ) इनमें से सभी

3. **भारत में योजना आयोग का गठन कब किया गया था ?**

(क) 15 मार्च 1950 (ख) 15 सितम्बर 1950

(ग) 15 अक्टूबर 1951 (घ) इनमें से कोई नहीं

4. **जिस देश की राष्ट्रीय आय अधिक होता है वह देश कहलाता है।**

(क) अविकसित (ख) विकसित

(ग) अर्द्ध-विकसित (घ) इनमें से कोई नहीं

5. **इनमें से किसे पिछड़ा राज्य कहा जाता है ?**

(क) पंजाब (ख) केरल (ग) बिहार (घ) दिल्ली

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें ।

1. भारत अंग्रेजी शासन का एक .... था ।
2. अंग्रेजों ने भारतीय अर्थव्यवस्था का .... किया ।
3. अर्थव्यवस्था आजीविका अर्जन की .... है ।
4. द्वितीयक क्षेत्र को .... क्षेत्र कहा जाता है ।
5. आर्थिक विकास आवश्यक रूप से .... की प्रक्रिया है ।
6. भारत में आर्थिक विकास का श्रेय .... को दिया जा सकता है ।

7. आर्थिक विकास की माप करने के लिए .... को सबसे उचित सूचकांक माना जाता है ।
8. साधनों के मामले में धनी होते हुए भी बिहार की स्थिति .... है ।
9. बिहार में .... ही जीवन का आधार है ।
10. बिहार के विकास में .... एक बहुत बड़ा बाधक है ।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short-Answer Questions)

1. अर्थव्यवस्था किसे कहते हैं ?
2. मिश्रित अर्थव्यवस्था क्या है ?
3. सतत् विकास क्या है ?
4. आर्थिक नियोजन क्या है ?
5. मानव विकास रिपोर्ट (Human Development Report) क्या है ?
6. आधारिक संरचना (Infrastructure) पर प्रकाश डालें ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long-Answer Questions)

1. अर्थव्यवस्था की संरचना (Structure of Economy) से क्या समझते हैं ? इन्हें कितने भागों में बाँटा गया है ?
2. आर्थिक विकास क्या है ? आर्थिक विकास तथा आर्थिक वृद्धि में अंतर बतावें।
3. आर्थिक विकास की माप कुछ सूचकांकों के द्वारा करें ।
4. बिहार के आर्थिक पिछड़ेपन के क्या कारण हैं ? बिहार के पिछड़ेपन दूर करने के लिए कुछ मुख्य उपाय बतावें ।

परियोजना कार्य (Project Work)

1. अपने गाँव या शहर के आर्थिक विकास के संदर्भ में एक परियोजना प्रस्तुत करें।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

I. 1. (ख) 2. (ग) 3. (क) 4. (ख) 5. (ग)

II. 1. उपनिवेश 2. शोषण 3. प्रणाली 4. औद्योगिक 5. परिवर्तन 6. नियोजन 7. प्रतिव्यक्ति आय 8. दयनीय 9. कृषि 10. बाढ़

*

इकाई- 1

2
राज्य एवं राष्ट्र की आय

आय (Income)

हम सभी देखते हैं कि समाज का हर व्यक्ति अपने परिश्रम के द्वारा जो अर्जित करता है, वह अर्जित सम्पत्ति उसकी आय मानी जाती है । व्यक्ति को प्राप्त होने वाली आय मुद्रा (रुपये/पैसे) के रूप में, अथवा वस्तुओं के रूप में भी हो सकती है । अर्जित सम्पत्ति की मौद्रिक अभिव्यक्ति आय में होती है । लोगों के द्वारा अपने परिश्रम के फलस्वरूप जो धन अथवा सम्पत्ति प्राप्त होती है उसे हम आय के रूप में व्यक्त करते हैं ।

किसी भी अर्थव्यवस्था के लिए उसके नागरिकों की व्यक्तिगत अथवा सामाजिक आय ही सम्पन्नता अथवा विपन्नता का प्रतीक है । आय वह मापदंड है, जिसके द्वारा देश के आर्थिक विकास की स्थिति का आकलन किया जाता है । देश अथवा राज्य को आय के आधार पर ही उसे विकसित अथवा विकासशील श्रेणी में रखा जाता है । भारत के राज्यों में गोवा, दिल्ली और हरियाणा आय के आधार पर ही समृद्ध माना जाता है, वहीं दूसरी ओर आय के आधार पर जहाँ बिहार, उड़ीसा और मध्य प्रदेश विकास के निचली श्रेणी का राज्य माना जाता है । इसी प्रकार विश्व के देशों में संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान जैसे देशों को समृद्ध मानना और भारत को विकास के निचले पाये पर आय के आधार पर ही रखा जाता है। यह एक अलग बात है कि विगत वर्षों में विकास के दर के कारण भारत तेजी से समृद्ध देशों की श्रेणी की ओर बढ़ता जा रहा है ।

आय :

जब कोई व्यक्ति किसी प्रकार का शारीरिक अथवा मानसिक कार्य करता है और उन कार्यों के बदले में जो पारिश्रमिक मिलता है, उसे उस व्यक्ति की **आय** कहते हैं।

जिस प्रकार वस्तुओं और सेवाओं के उत्पादन के क्षेत्र में हम देखते हैं कि भूमि का **पारिश्रमिक 'लगान' के रूप में, श्रम का पारिश्रमिक 'मजदूरी' के रूप में, पूँजी का पारिश्रमिक 'ब्याज' के रूप में, व्यवस्थापक का पारिश्रमिक 'वेतन' के रूप में एवं उद्यमी का पारिश्रमिक 'लाभ' या 'हानि' के रूप में ही वह उसके आय को प्रकट करता है ।**

बिहार की आय (Income of Bihar)

बिहार अत्यंत गरीब एवं पिछड़ा हुआ राज्य है, जहाँ गरीबी की व्यापक प्रवृत्ति निरन्तर मौजूद रही है । देश में निर्धनता अनुपात के आँकड़े योजना आयोग ने मार्च, 2009 में जारी किए हैं । इन आँकड़ों के अनुसार बिहार पूरे देश में ओडिशा राज्य के बाद सर्वाधिक गरीब राज्य है। यहाँ की 41.4 प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा के नीचे गुजर-बसर करती है। बिहार राज्य की प्रतिव्यक्ति आय पूरे देशभर में न्यूनतम है, जिसके चलते बचत निम्न स्तर पर है। कम बचत के कारण पूँजी निर्माण दर कम होता है । कम पूँजी निर्माण दर के कारण विनियोग भी कम होता है, जिसके परिणामस्वरूप बिहार में प्रति व्यक्ति आय पुन: निम्न स्तर पर कायम रहती है । ठीक इसके विपरीत भारत के विकसित राज्यों, जैसे-गोवा, दिल्ली आदि में जहाँ प्रति व्यक्ति आय ऊँचा है, बचत एवं विनियोग अधिक है तथा पूँजी निर्माण दर ऊँचा है, जिसके परिणामस्बरूप हर वर्ष प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो जाती है। **सामान्यत: हम यह जानते हैं कि गरीबी गरीबी को जन्म देती है। इसी कथन को प्रसिद्ध अर्थशास्त्री रैगनर नर्क्स (Ragnar Nurkse) ने गरीबी के कुचक्र (Vicious Circle of Poverty) के रूप में व्यक्त किया है।** जिसका सार यह है कि गरीब इसलिए गरीब है कि उनमें गरीबी है, गरीबी के कारण उनकी आय कम होती है, अशिक्षा और अज्ञानता के कारण बच्चों की पैदाईश (जन्म) अधिक होता है, फलत: उनकीअगली पीढ़ी अधिक

> **आओ जाने :**
>
> रैगनर नर्क्स (Ragnar Nurkse) ने गरीबी के कुचक्र की धारणा को बतलाया था। बिहार राज्य भी गरीबी के कुचक्र का शिकार है। जिस कारण बिहार की प्रति व्यक्ति आय भी पूरे भारत वर्ष में न्यूनतम है।

गरीब हो जाती है। गरीबी का यह कुचक्र अनवरत चलता रहता है। इसका आशय यह है कि गरीबी ही गरीबी को जन्म देती है ।

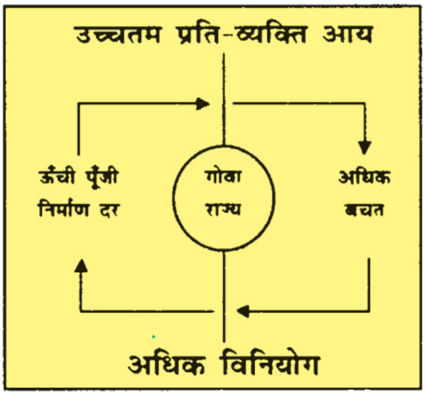

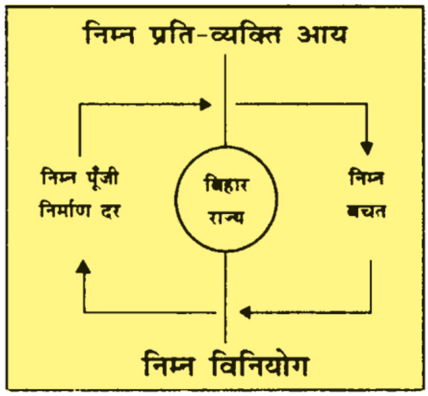

भारत के सभी 28 राज्यों एवं 8 केन्द्र शासित प्रदेशों में सर्वाधिक प्रति व्यक्ति आय चंडीगढ़ का है, तथा इस मामले में उसका शीर्ष स्थान विगत पाँच वर्षों से बना हुआ है । देश के आय के मानक को निर्धारित करने वाली संस्था जिसे डायरेक्टोरेट ऑफ इकोनॉमिक्स एण्ड स्टेटिस्टिक्स (Directorate of Economics and Statistics) कहते हैं, उसके द्वारा 16 सितम्बर, 2008 को जारी किए गए इन आँकड़ों के अनुसार सन् 2006-07 में चंडीगढ़ में प्रति व्यक्ति आय 70361 रुपए रही है । जबकि देश के केवल 28 राज्यों की चर्चा करें तो इनमें सर्वाधिक प्रति व्यक्ति आय वाला राज्य गोवा व दिल्ली का बताया गया है। **निदेशालय के ताजा आँकड़ों में गोवा में प्रति व्यक्ति आय 54,850 रुपए तथा दिल्ली में यह 50,565 रुपए बताई गई है और तीसरे स्थान पर इस बार हरियाणा ने पंजाब को पीछे छोड़ दिया है।**'2008-09' में बिहार में केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (C.S.O.) के अनुसार (11.03) प्रतिशत राष्ट्रीय आय में वृद्धि दर है जो गुजरात (11.05) प्रतिशत के बाद दूसरा है । इस तरह अब बिहार भी पिछड़ापन का चोला त्याग कर विकास की ओर उन्मुख है ।

आओ जाने :

निदेशालय की इस रिपोर्ट के अनुसार सन् 2008-09 में भारत के प्रति व्यक्ति आय 25,494 रुपए है । जबकि बिहार का प्रति व्यक्ति आय सन् 2005-06 में 6,610 रुपए है । बिहार के कुल 38 जिलों में, सर्वाधिक प्रति व्यक्ति आय-पटना एवं न्यूनतम प्रति व्यक्ति आय-शिवहर जिले का है ।

राष्ट्रीय आय (National Income)

अर्थशास्त्र में राष्ट्रीय आय की धारणा बहुत ही महत्त्वपूर्ण पहलू है। किसी देश का आर्थिक विकास उसकी राष्ट्रीय आय पर निर्भर करता है तथा आर्थिक प्रगति को मापने का सर्वोत्तम साधन भी राष्ट्रीय आय ही है। जहाँ राष्ट्र की सम्पूर्ण आय उत्पादन के विभिन्न साधनों के सम्यक् प्रयास से होता है। प्रत्येक साधन की भागेदारी उत्पादन की क्रिया में होती है, फलत: उत्पादित की हुई वस्तुओं से प्राप्त आय को सभी साधनों के बीच में वितरित किया जाता है। अर्थशास्त्र में वितरण (Distrubution) की धारणा राष्ट्रीय आय के आँकलन में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है, जिसे हम उत्पादन के विभिन्न साधनों के भागीदारी में हिस्सा लेने को कहते हैं। वास्तव में उत्पत्ति के विभिन्न साधनों के सहयोग से राष्ट्रीय आय की प्राप्ति होती है, और राष्ट्रीय आय को पुन: इन साधनों के बीच वितरित कर दिया जाता है। अब हम राष्ट्रीय आय का विस्तारपूर्वक अध्ययन करेंगे।

आओ जाने :

राष्ट्रीय आय का मतलब किसी देश में एक वर्ष में उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं के कुल मूल्य से लगाया जाता है।

दूसरे शब्दों में वर्ष भर में किसी देश में अर्जित आय की कुल मात्रा को **राष्ट्रीय आय (National Income)** कहा जाता है।

जिस प्रकार व्यक्तियों के समूह से प्रक्षेत्र (Area) का निर्माण होता है, प्रक्षेत्रों के समूह से राज्य एवं राज्यों के समूह से देश का निर्माण होता है, उसी प्रकार श्रम एवं पूँजी के सहयोग एवं उपलब्ध प्राकृतिक साधनों के उपयोग से जो भौतिक (जिसे मूल्य के रूप में आँका जाता है) और अभौतिक (ऐसी सेवाएँ जो अदृश्य रूप से संसाधनों की वृद्धि करता है) के कुल मूल्य को ही **राष्ट्रीय आय** कहते हैं।

बच्चों आपने देखा होगा कि प्राय: गाँवों और शहरों में खेत और कल-कारखानों के द्वारा भौतिक वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है और उसी तरह शिक्षक, डॉक्टर, इंजीनियर, कर्मचारी-पदाधिकारी एवं समाज के अन्य वर्ग के लोग अपनी सेवाओं से राष्ट्र को सुसम्पन्न करते हैं, इस तरह खेत-खलिहानों से उत्पन्न तथा ज्ञान एवं दक्षता से किए गए उत्पादनों को **राष्ट्रीय**

आय कहेंगे । जब इन सभी भौतिक और अभौतिक सेवाओं से प्राप्त आय का कुल रूप से आँकलन किया जाता है, तब उसे कुल उत्पादन कहते हैं और उत्पादन के क्रम में किए गए खर्चों को घटा देने के बाद जो बचता है, उसे शुद्ध राष्ट्रीय आय (Net National Income) कहते हैं । अर्थशास्त्र में कुल उत्पाद और शुद्ध उत्पाद दोनों ही अवधारणाओं का अपना ही महत्त्व है।

इसी क्रम में राष्ट्रीय आय को स्पष्ट करने के लिए कुछ प्रसिद्ध अर्थशास्त्रियों की परिभाषा को हम निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत करेंगे ।

प्रो० अलफ्रेड मार्शल (Prof. Alfered Marshall) के अनुसार "किसी देश की श्रम एवं पूँजी का उसके प्राकृतिक साधनों पर प्रयोग करने से प्रतिवर्ष भौतिक तथा अभौतिक वस्तुओं पर विभिन्न प्रकार की सेवाओं का जो शुद्ध समूह उत्पन्न होता है, उसे **राष्ट्रीय आय** कहते हैं।" (The labour and capital of a country acting on its natural resources produce annually a certain net aggregate of commodities, material and immaterial, including services of all kinds is called National Income.)

जहाँ प्रो० मार्शल की परिभाषा से हमें यह स्पष्ट होता है कि राष्ट्रीय आय के अन्तर्गत हम उन सभी वस्तुओं और सेवाओं को लेते हैं, जिनका उत्पादन प्राय: एक साल के अन्तर्गत श्रम एवं पूँजी, प्राकृतिक साधनों के सहयोग से करते हैं ।

> **आओ जाने :**
>
> **यदि देश की कुछ पूँजी विदेशों में लगा दी जाती है तो उससे प्राप्त आय को भी राष्ट्रीय आय में जोड़ दिया जाता है ।**

प्रो० पीगू (Prof. Pigou) ने राष्ट्रीय आय को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है।

"राष्ट्रीय लाभांश किसी समाज की वस्तुनिष्ठ अथवा भौतिक आय का वह भाग है, जिसमें विदेशों से प्राप्त आय भी सम्मिलित होती है, और जिसे मुद्रा के रूप में माप हो सकती है ।" (National dividend is that part of the objective income of the community, including of course income derived from aborad, which can be measured in money.)

एक अन्य प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **प्रो० फिशर** (Prof. Fisher) ने राष्ट्रीय आय की परिभाषा देते हुए कहा है कि "वास्तविक राष्ट्रीय आय वार्षिक शुद्ध उत्पादन का वह भाग है, जिसका उस वर्ष के अन्तर्गत प्रत्यक्ष रूप से उपभोग किया जाता है ।" (The true National income is that part of annual net producc which is directly consumed during that year.)

तीसा की भयानक आर्थिक मंदी (Great Depression of Thises 1929-33) से उबारने के नियामक **प्रो० केन्स** (Prof. Keynes) ने राष्ट्रीय आय की धारणा का नये सिरे से विचार किया है । इनके अनुसार राष्ट्रीय आय को उपभोक्ता वस्तुओं तथा विनियोग वस्तुओं पर किए गए कुल व्यय के योग के रूप में व्यक्त किया जाता है।

आओ जाने :

भारत में सांख्यिकी विभाग के अंतर्गत केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (Central Statistical Organisation) राष्ट्रीय आय के आँकलन के लिए उत्तरदायी है । इस कार्य में राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (National Sample Survey Organisation) केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन की सहायता करता है ।

फार्मूले के रूप में

$$Y = C + I$$

जहाँ, Y = राष्ट्रीय आय (National Income)

C = उपभोग व्यय (Consumption Expenditure)

I = विनियोग (Investment)

अब हमें राष्ट्रीय आय की धारणा को स्पष्ट करना चाहिए जिससे यह पता चले कि राष्ट्रीय आय के अंतर्गत किन-किन प्रकारों की आयों की व्याख्या करते हैं । राष्ट्रीय आय की धारणा को हम निम्नलिखित आयामों के द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं ।

राष्ट्रीय आय की धारणा
1. सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product)
2. कुल या सकल राष्ट्रीय उत्पादन (Gross National Product)
3. शुद्ध राष्ट्रीय उत्पादन (Net National Product)

1. **सकल घरेलू उत्पाद** **(Gross Domestic Product)** - किसी देश में किसी दिए हुए वर्ष में वस्तुओं और सेवाओं की जो कुल मात्रा उत्पादित की जाती है, उसे सकल घरेलू उत्पाद (GDP) कहा जाता है । (The total quantity of goods and services produced in an economy in a given year is called Gross Domestic Product.)

> **सकल घरेलू उत्पाद :**
>
> एक देश की सीमा के अन्दर किसी भी दी गई समयावधि, प्राय: एक वर्ष (लेखा वर्ष) में उत्पादित समस्त अंतिम वस्तुओं तथा सेवाओं का कुल बाजार या मौद्रिक मूल्य, उस देश का सकल घरेलू उत्पाद (GDP) कहा जाता है ।

2. **कुल या सकल राष्ट्रीय उत्पादन** **(Gross National Product)**- किसी देश में एक साल के अन्तर्गत जितनी वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन होता है उनके मौद्रिक मूल्य को कुल राष्ट्रीय उत्पादन (GNP) कहते हैं । यहाँ ध्यान रखना चाहिए कि कुल राष्ट्रीय उत्पादन (GNP) तथा सकल घरेलू उत्पादन (GDP) में अन्तर है ।

कुल राष्ट्रीय उत्पादन का पता लगाने के लिए सकल घरेलू उत्पादन में देशवासियों द्वारा विदेशों में उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं के मूल्य को जोड़ दिया जाता है तथा विदेशियों द्वारा देश में उत्पादित वस्तुओं के मूल्य को घटा दिया जाता है ।

3. **शुद्ध राष्ट्रीय उत्पादन** **(Net National Product)**- कुल राष्ट्रीय उत्पादन को प्राप्त करने के लिए हमें कुछ खर्च करना पड़ता है । अत: कुल राष्ट्रीय उत्पादन में से इन खर्चों को घटा देने से जो शेष बचता है वह शुद्ध राष्ट्रीय उत्पादन (NNP) कहलाता है। उत्पादन के बीच इसी का वितरण किया जाता है । कुल राष्ट्रीय उत्पादन (GNP) में से कच्चे माल की कीमत, पूँजी की घिसावट एवं मरम्मत पर किए गए व्यय, कर एवं बीमा का व्यय घटा देने से जो बचता है उसे 'शुद्ध राष्ट्रीय उत्पादन' (NNP) कहते हैं ।

भारत का राष्ट्रीय आय-ऐतिहासिक परिवेश

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व भारत में राष्ट्रीय आय का अनुमान लगाने के लिए कोई विशेष प्रयत्न नहीं किए गए थे, भारत में सबसे पहले सन् 1868 ई० में **दादा भाई नौरोजी** (Dadabhai

Naoroji) ने राष्ट्रीय आय का अनुमान लगाया था । उन्होंने अपनी पुस्तक 'Poverty and Un-British Rule in India' में प्रति-व्यक्ति वार्षिक आय 20 रुपए बताया । इसके बाद अनैक विद्वानों ने व्यक्तिगत रूप से भारत की राष्ट्रीय आय तथा प्रति-व्यक्ति आय का अनुमान लगाया। **प्रसिद्ध अर्थशास्त्री Dr. V. K. R. V. Rao के द्वारा 1925-29** के बीच में भारत का राष्ट्रीय आय का आँकड़ा सर्वाधिक प्रचलित था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने अगस्त 1949 ई० में **प्रो० पी० सी० महालनोबिस** (P.C. Mahalanobise) की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय आय समिति का गठन किया था, जिसका उद्देश्य भारत की राष्ट्रीय आय के संबंध में अनुमान लगाना था। इस समिति ने अप्रैल 1951 में अपनी प्रथम रिपोर्ट प्रस्तुत की थी । इसमें सन् 1948-49 के लिए देश की कुल राष्ट्रीय आय 8,650 करोड़ रुपए बताई गई तथा प्रति-व्यक्ति आय 246.9 रुपए बताई गई । सन् 1954 के बाद राष्ट्रीय आय के आँकड़ों का संकलन करने के लिए सरकार ने **केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन** (Central Statistical Organisation) की स्थापना की । यह संस्था नियमित रूप से राष्ट्रीय आय के आँकड़े प्रकाशित करती है, राष्ट्रीय आय के सृजन में अर्थव्यवस्था के तीनों क्षेत्रों का विशेष योगदान होता है ।

प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income)

भारत जैसे बड़े देश में, जहाँ जनसंख्या काफी तेजी से बढ़ रही है । यहाँ प्रति-व्यक्ति आय कम है, अशिक्षा का स्तर ज्यादा है एवं भाषा, जीवन शैली और संस्कृति की बहुतायत है । इस बात का अहसास निरन्तर बढ़ता जा रहा है कि विभिन्न आर्थिक-सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हम अपनी **प्रति-व्यक्ति**

प्रति व्यक्ति आय :

राष्ट्रीय आय में देश की कुल जनसंख्या से भाग देने पर जो भागफल आता है उसे **प्रति-व्यक्ति आय** कहते हैं । इसका आकलन निम्न प्रकार से की जाती है :

$$\text{प्रति व्यक्ति आय (Per Capita Income)} = \frac{\text{राष्ट्रीय आय (National Income)}}{\text{देश की कुल जनसंख्या (Total Population of the Country)}}$$

आओ जानें :

भारत की राष्ट्रीय आय काफी कम है तथा प्रति-व्यक्ति आय का स्तर भी बहुत नीचा है। विश्व विकास रिपोर्ट (World Development Report-2009) के अनुसार वर्ष 2007 में भारत की प्रति-व्यक्ति आय 950 डॉलर था । जहाँ भारत की प्रति-व्यक्ति आय अमेरिका के प्रति-व्यक्ति आय का लगभग 1/48 है । इसी प्रकार हम विश्व के कुछ देशों के प्रति व्यक्ति आय को निम्न प्रकार से स्पष्ट करते हैं ।

अमेरिका का	प्रति	व्यति	आय	= 46,040 डॉलर
इंगलैंड	"	"	"	= 42,740 डॉलर
चीन	"	"	"	= 2,360 डॉलर
बंग्लादेश	"	"	"	= 870 डॉलर

आय में वृद्धि करें। ऐसा करके ही हम अपने जीवन को खुशहाल बना सकते हैं, तथा अपना **जीवन-स्तर** (standard of living) ऊँचा कर सकते हैं ।

यद्यपि पंचवर्षीय योजनाओं में ग्रामीण अर्थव्यवस्था की कायापलट के लिए अनेक उपाय किए गए हैं, पर जनसंख्या में भारी वृद्धि तथा अन्य व्यवसायों में उस गति से विकास न होने के कारण विगत् वर्षों में भूमि पर जनसंख्या का भार निरन्तर बढ़ता गया है, जिससे गरीबी और बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो गई । आज के आधुनिक युग में कृषि क्षेत्र में हुए सुधार, विज्ञान-प्रौद्योगिकी एवं अन्य क्षेत्रों में हो रहे गुणात्मक विकास के पश्चात् भी लोगों को रोजगार प्राप्त नहीं हो पाता है, जिस कारण स्वभावत: यह बेरोजगारी प्रति-व्यक्ति आय को कम करके गरीबी को बढ़ावा देती है । ठीक इसी परिपेक्ष्य में इस अतिरिक्त श्रमशक्ति के बोझ को कम करके और उसे गैर कृषि क्षेत्रों में रोजगार प्रदान करके कृषि-उद्योग, बेरोजगारी उन्मूलन और राष्ट्रीय विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं ।

राष्ट्रीय आय की गणना (Measurement of National Income)

जैसा कि हम जानते हैं कि वस्तुओं तथा सेवाओं का उत्पादन, विभिन्न साधनों के सामूहिक प्रयत्नों का ही परिणाम है । उत्पादन प्रक्रिया के अन्तर्गत उत्पादन के साधनों को लगान, मजदूरी, ब्याज तथा लाभ के रूप में आय प्राप्त होती है । इस अर्जित आय के स्वामी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वस्तुओं तथा सेवाओं की माँग करते हैं । माँग की यह वृद्धि उत्पादन वृद्धि को प्रोत्साहित करती है और आर्थिक क्रिया का चक्रीय रूप पूरा हो जाता है ।

इस कथन को निम्न चित्र के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है ।

उत्पादन → आय सृजन —मांँग→ व्यय → पुनः उत्पादन वृद्धि प्रेरेणा

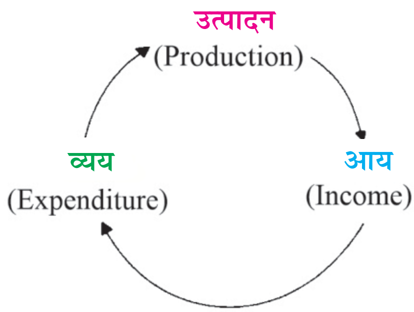

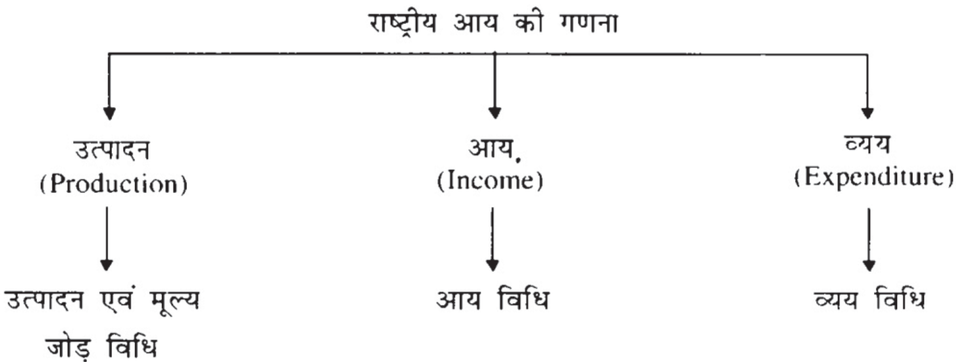

राष्ट्रीय आय की गणना अनेक प्रकार से की जाती है । चूँकि राष्ट्र के व्यक्तियों की आय उत्पादन के माध्यम से अथवा मौद्रिक आय के माध्यम से प्राप्त होती है, इसलिए इसकी गणना जब उत्पादन के योग के द्वारा की जाती है तो उसे **उत्पादन गणना विधि** (Census of Production Method) कहते हैं। जब राष्ट्र के व्यक्तियों की आय के आधार पर राष्ट्रीय आय की गणना की जाती है तो उस गणना विधि को **आय गणना विधि** (Census of Income Method) कहा जाता है । प्राप्त की गई आय व्यक्ति अपने उपभोग के लिए व्यय भी करता है इसलिए राष्ट्रीय आय की गणना लोगों के व्यय के माप से की जाती है, राष्ट्रीय आय की मापने की इस प्रक्रिया को व्यय गणना विधि (Census of Expenditure Method) कहते हैं । हम देखते हैं कि उत्पादन की हुई वस्तुओं का मूल्य

आओ जाने :

राष्ट्रीय आय राष्ट्र के आर्थिक स्थिति के आँकलन का सर्वाधिक विश्वसनीय मापदंड है ।

विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्तियों के द्वारा किए गए प्रयास से बढ़ जाता है, ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय आय की गणना को **मूल्य योग विधि (Census of Value Added Method)** कहते हैं। अन्त में व्यवसायिक संरचना के आधार पर राष्ट्रीय आय की गणना की जाती है, व्यवसायिक आधार पर की गई गणना को **व्यवसायिक गणना विधि (Census of Occupation Method)** कहते हैं ।

यद्यपि राष्ट्रीय आय की गणना उपरोक्त पाँच तरीकों से होती है, फिर भी आर्थिक दृष्टिकोण से अर्थशास्त्र में उत्पादन गणना विधि और आय गणना विधि सहज, वैज्ञानिक और व्यवहारिक तरीका है, जिसके आधार पर राष्ट्रीय आय की गणना की जाती है ।

राष्ट्रीय आय की गणना में कठिनाइयाँ (Difficulties in the Measurement of National Income)

किसी भी राष्ट्र की आर्थिक स्थिति को जानने के लिए उस देश की राष्ट्रीय आय को जानना आवश्यक होता है । राष्ट्रीय आय देश के आर्थिक विकास का सहज मापदंड है, जो उस देश के प्रति-व्यक्ति आय के योग से निकाला जाता है । राष्ट्रीय आय के आधार पर ही विश्व के विभिन्न देशों को हम विकसित, विकासशील और अर्धविकसित राष्ट्रों की श्रेणी में मूल्यांकन करते हैं । यद्यपि राष्ट्रीय आय राष्ट्र की आर्थिक स्थिति को आँकने का सर्वमान्य माप है । फिर भी हमें व्यवहारिक रूप में राष्ट्रीय आय की गणना करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, जिसे संक्षिप्त में हम निम्न प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं ।

(i) **आँकड़ों को एकत्र करने में कठिनाई** (Difficulty in collecting data)- पूरे देश के लोगों की आय को हम उत्पादन के रूप में या उसकी आय के रूप में आँकते हैं, और इस आँकड़ों को एकत्र करने में अनेक कठिनाइयाँ आती हैं । यदि सही आँकड़े उपलब्ध नहीं हो तो राष्ट्र के विकास की सही स्थिति नहीं प्राप्त होती है ।

(ii) **दोहरी गणना की सम्भावना** (Possibility of double counting)- पूरे राष्ट्र के लोगों के उत्पादन अथवा आय के आँकड़ों को एकत्र करना सहज नहीं होता है । भौगोलिक और मानवीय संसाधन की संरचना ऐसी होती है कि कभी-कभी एक ही आय या उत्पाद को

दो स्थान पर अंकित कर दिया जाता है, जिस कारण वास्तविक आय से अधिक आय दिखने लगती है।

(iii) मूल्य के मापने में कठिनाई (Difficulty in measuring the value)- बाजार की स्थिति में प्रायः हम यह देखते हैं कि एक ही वस्तु का कई व्यापारिक स्थितियों से गुजरने के कारण उस वस्तु के मूल्य में विभिन्नता आती है । वस्तु की कीमत की यह विभिन्नता इसलिए होती है कि विक्रेताओं के एक वर्ग से दूसरे वर्ग तक जाने में उसका यातायात का खर्च, विक्रय व्यवस्था (विज्ञापन) का खर्च और विक्रेताओं की मुनाफे की राशि उसमें जुट जाती है। **उदाहरण**– चीनी का उत्पाद मूल्य कारखानों में कम होता है, जब वह थोक विक्रेताओं के पास जाता है तो उसके मूल्य में बढ़ोत्तरी होती है और अंत में खुदरा विक्रेताओं के पास जाते-जाते उसकी कीमत पूर्व की अपेक्षा काफी अधिक हो जाती है । ऐसी स्थिति में अक्सर विक्रय के दो बिन्दुओं पर अलग-अलग रूप से आँकड़ों को जोड़ने से राष्ट्रीय आय की भ्रामक स्थिति पैदा होने की संभावना रहती है ।

राष्ट्रीय आय की गणना करते समय उपरोक्त बातों पर ध्यान देने से आँकड़ा स्पष्ट, व्यवहारिक और विश्वसनीय प्राप्त होते हैं । जैसा कि हम जानते हैं कि राष्ट्रीय आय के आँकड़ों के संग्रहण के क्रम में यह आवश्यक होता है कि पूरे राष्ट्र के लिए एक ही मापदंड अपनाया जाए जिससे राष्ट्र की आर्थिक स्थिति का सही मूल्यांकन किया जा सके।

विकास में राष्ट्रीय एवं प्रति-व्यक्ति आय का योगदान (Contribution of National and Per Capita Income in Economic Development)

किसी भी राष्ट्र की सम्पन्नता अथवा विपन्नता वहाँ के लोगों की प्रति-व्यक्ति आय या संयुक्त रूप से सभी व्यक्तियों के आय के योग जिसे राष्ट्रीय आय कहते हैं के माध्यम से जाना जाता है । राष्ट्र के विकास के लिए जो भी प्रयास किए जाते हैं वह उस राष्ट्र की सीमा क्षेत्र के अन्दर रहनेवाले लोगों की उत्पादकता अथवा उनकी आय को बढ़ाने के माध्यम से किए जाते है। वर्तमान युग में प्रत्येक देश अपने-अपने तरीके से विकास की योजना बनाता है, जिसका लक्ष्य

राष्ट्र के उपलब्ध साधनों की क्षमता को बढ़ाकर अधिक आय प्राप्त करना होता है । इसी तरह शिक्षा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पूँजी विनियोग के द्वारा रोजगार का सृजन किया जाता है, जिससे लोगों की आय में वृद्धि होती है । आर्थिक विकास करने के लिए मुख्य रूप से उत्पाद तथा आय में वृद्धि की जाती है । वस्तुओं का अधिक उत्पादन तथा व्यक्तियों की आय अधिकतम होने पर ही हम राष्ट्र में उच्चतम आर्थिक विकास की स्थिति पा सकते हैं । अत: हम यह कह सकते हैं कि राष्ट्रीय आय और प्रति-व्यक्ति आय ही राष्ट्र के आर्थिक विकास का सही मापदंड है । बिना उत्पाद को बढ़ाए लोगों की आय में वृद्धि नहीं हो सकती है और न ही आर्थिक विकास हो सकता है ।

राष्ट्रीय आय एवं प्रति-व्यक्ति आय में परिवर्तन होने से इसका प्रभाव लोगों के जीवन-स्तर पर पड़ता है । राष्ट्रीय आय वास्तव में देश के अंदर पूरे वर्ष भर में उत्पादित शुद्ध उत्पत्ति (Net Product) को कहते हैं । लेकिन उत्पत्ति में वृद्धि तभी होगी जब उत्पादन में अधिक श्रमिकों को लगाया जाए । इस प्रकार जैसे-जैसे उत्पादन में वृद्धि होगी वैसे-वैसे बेरोजगार लोगों को अधिक रोजगार मिलेगा, श्रमिकों का वेतन बढ़ेगा, उनकी आय बढ़ेगी तथा उनका जीवन-स्तर पूर्व की अपेक्षा बेहतर होगा । इस प्रकार प्रति-व्यक्ति आय में वृद्धि होने से व्यक्तियों का विकास संभव हो सकेगा । यदि इस प्रकार राष्ट्रीय आय के सूचकांक (Index) में वृद्धि होती है तो इससे लोगों के आर्थिक विकास में अवश्य ही वृद्धि होगी ।

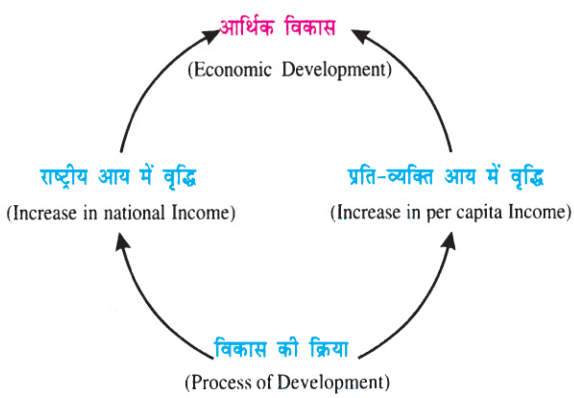

अबतक हमने पढ़ा है कि राष्ट्रीय आय में केवल उन्हीं सेवाओं को शामिल किया जाता है जिन्हें मुद्रा के रूप में आंका जाता है अथवा जिनके लिए भुगतान किया जाता है, जिन सेवाओं के लिए भुगतान नहीं किया जाता उनकी गणना राष्ट्रीय आय में नहीं की जाती । उदाहरण- यदि कोई

नर्स (Nurse) अपने बच्चे की सेवा करती है तो उसकी गणना राष्ट्रीय आय में नहीं होगी, लेकिन वही नर्स अस्पताल में काम करती है तो उसकी गणना राष्ट्रीय आय में की जाएगी। इस गणना के पश्चात् विकास की क्रिया सामान्य तौर पर चलती रहेगी ।

यदि विकास की क्रिया के तहत् राष्ट्रीय आय एवं प्रति-व्यक्ति आय में वृद्धि हो रही है तो गरीबों द्वारा प्राप्त आय में कमी नहीं होनी चाहिए, क्योंकि यदि बढ़ी हुई आय का सब हिस्सा अमीरों के पास चला जाएगा तो राष्ट्रीय आय में वृद्धि होते हुए भी संतुलित आर्थिक विकास नहीं होगा । इसी कारण इन दिनों सरकार के द्वारा समावेशी विकास (Inclusive Growth) पर बल दिया जा रहा है ।

जिस अनुपात में राष्ट्रीय आय में वृद्धि हो रही हो उसी अनुपात में या उससे अधिक अनुपात में यदि जनसंख्या में वृद्धि हो रही हो तो समाज का आर्थिक विकास नहीं बढ़ सकता । फिर भी इन परिस्थितियों के बावजूद यदि राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है तो लोगों के आर्थिक विकास में साधारण तौर पर वृद्धि देखी जा सकती है ।

समय एवं आय में परिवर्तन के साथ गरीबों की रुचि एवं स्वभाव परिष्कृत होता है तथा अपनी बढ़ी हुई आय का वे सदुपयोग करते हैं । इस प्रकार उनके आर्थिक विकास में अवश्य ही वृद्धि होती है । अतः हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि चंद परिस्थितियों को छोड़कर यदि राष्ट्रीय आय एवं प्रति-व्यक्ति आय में वृद्धि होती है तो समाज के आर्थिक विकास में भी वृद्धि होगी तथा राष्ट्रीय आय एवं प्रति-व्यक्ति आय में कमी होने से समाज के आर्थिक विकास में भी कमी होगी।

सारांश :

- पूरे भारत में सबसे कम प्रति-व्यक्ति आय वाला राज्य बिहार है ।
- वर्तमान में केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन (CSO) के आँकलन में जहाँ कुल घरेलू उत्पाद (GDP) 2003-04 में नकारात्मक (Negative) - 5.15 प्रतिशत था वही 2004-05 से 2008-09 के बीच सकारात्मक (Positive) 11.03 प्रतिशत हो गया जो बिहार के विकास का अच्छा संकेत है ।
- राष्ट्रीय आय किसी भी देश के आर्थिक विकास का सर्वाधिक वैज्ञानिक और मान्य आँकड़ा है । प्रत्येक देश में ऐसी संस्थाएँ हैं जो उस देश की आय के प्रमाणित आँकड़ों को प्रस्तुत करती है ।
- प्रति-व्यक्ति आय = किसी अवधि विशेष में राष्ट्रीय आय और राष्ट्रीय जनसंख्या का अनुपात।
- भारत में राष्ट्रीय आय की गणना की सर्वमान्य प्रमाणित संस्था केंद्रिय सांख्यिकीय संगठन (CSO) है ।
- भारत में राष्ट्रीय आय की गणना के प्रारंभिक प्रयास में सर्वाधिक चर्चित उद्योगपति दादा भाई नैरोजी ने सन् 1967-68 में अपने आँकड़ों के अनुसार बतलाया कि भारत का प्रति-व्यक्ति आय सन् (1968) में 20 रुपये थी ।
- राष्ट्रीय आय के गणना के अनेक प्रयास किए गए किन्तु प्रसिद्ध अर्थशास्त्री Dr. V.K. R.V. Rao के द्वारा सन् 1925-29 के बीच दिया गया आँकड़ा सर्वाधिक प्रचलित था ।
- सकल घरेलू उत्पाद प्रायः एक वर्ष में उत्पादित समस्त अंतिम वस्तुओं तथा सेवाओं का कुल बाजार या मौद्रिक मूल्य उस देश का सकल घरेलू उत्पाद कहा जाता है ।
- राष्ट्रीय आय की गणना के आर्थिक दृष्टिकोण से उत्पादन गणना विधि और आय गणना विधि सहज, वैज्ञानिक और व्यवहारिक तरीका है ।
- राष्ट्रीय आय की गणना में कठिनाइयाँ– (i) आँकड़ों को एकत्र करने में कठिनाई, (ii) दोहरी गणना की संभावना, (iii) मूल्य मापने में कठिनाई ।
- विकास की क्रिया के माध्यम से राष्ट्रीय आय में वृद्धि एवं प्रति-व्यक्ति आय में वृद्धि से ही आर्थिक विकास की स्थिति सम्पन्न हो पाती है ।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. **सन् 2008-09 के अनुसार भारत की औसत प्रति व्यक्ति आय है ।**

   (क) 22,553 रुपये (ख) 25,494 रुपये
   (ग) 6,610 रुपये (घ) 54,850 रुपये

2. **भारत में वित्तीय वर्ष कहा जाता है ?**

   (क) 1 जनवरी से 31 दिसंबर तक (ख) 1 जुलाई से 30 जून तक
   (ग) 1 अप्रैल से 31 मार्च तक (घ) 1 सितंबर से 31 अगस्त तक

3. **भारत में किस राज्य की प्रति-व्यक्ति आय सर्वाधिक है ?**

   (क) बिहार (ख) पंजाब (ग) हरियाणा (घ) गोवा

4. **बिहार के किस जिले का प्रति-व्यक्ति आय सर्वाधिक है ?**

   (क) पटना (ख) गया (ग) शिवहर (घ) नालंदा

5. **उत्पादन एवं आय गणना विधि आर्थिक दृष्टिकोण से है ।**

   (क) सहज (ख) वैज्ञानिक (ग) व्यवहारिक (घ) उपयुक्त तीनों

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें ।

1. बिहार की ········ प्रतिशत आबादी गरीबी रेखा के नीचे गुजर-बसर करती है।
2. उत्पादन, आय एवं ················ एक चक्रीय समूह का निर्माण करते हैं ।
3. राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने से प्रति-व्यक्ति आय में ············· होती है ।
4. राष्ट्रीय आय एवं प्रति-व्यक्ति आय में वृद्धि होने से ······ की क्रिया पूरी होती है ।
5. बिहार में वर्ष 2008-09 के बीच कुल घरेलू उत्पाद ······ प्रतिशत हो गया ।

III. सही एवं गलत कथन की पहचान करें ।

1. राष्ट्रीय आय एक दिए हुए समय में किसी अर्थव्यवस्था की उत्पादन शक्ति को मापती है।
2. उत्पादन, आय एवं व्यय एक चक्रीय समूह का निर्माण नहीं करती है ।
3. भारत की प्रति-व्यक्ति आय अमेरिका की प्रति-व्यक्ति आय से अधिक है ।
4. दादा भाई नैरोजी के अनुसार सन् 1968 में भारत की प्रति-व्यक्ति आय 20 रुपये थी ।
5. बिहार की प्रति-व्यक्ति आय में कृषि क्षेत्र का योगदान सर्वाधिक है ।

IV. संक्षिप्त रूप को पूरा करें-

(i) G.D.P. (ii) P.C.I. (iii) N.S.S.O. (iv) C.S.O.

(v) G.N.P. (vi) N.N.P. (vii) N.I. (viii) E.D.I.

V. लघु उत्तरीय प्रश्न (Short-Answer Question)

1. आय से आप क्या समझते हैं ?
2. सकल घरेलू उत्पाद से आप क्या समझते हैं ?
3. प्रति-व्यक्ति आय क्या है ?
4. भारत में सर्वप्रथम राष्ट्रीय आय की गणना कब और किनके द्वारा की गई थी ?
5. भारत में राष्ट्रीय आय की गणना किस संस्था के द्वारा होती है ?
6. राष्ट्रीय आय की गणना में होनेवाली कठिनाइयों का वर्णन करें ?
7. आय का गरीबी के साथ संबंध स्थापित करें?

VI. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long- Answer Questions)

1. स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत सरकार ने कब और किस उद्देश्य से राष्ट्रीय आय समिति का गठन किया ?
2. राष्ट्रीय आय की परिभाषा दें । इसकी गणना की प्रमुख विधियाँ कौन-कौन सी हैं?

3. प्रति-व्यक्ति आय और राष्ट्रीय आय में अंतर स्पष्ट करें ?

4. राष्ट्रीय आय में वृद्धि भारतीय विकास के लिए किस तरह से लाभप्रद है, वर्णन करें?

5. विकास में प्रति-व्यक्ति आय पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें ?

6. क्या प्रति-व्यक्ति आय में वृद्धि राष्ट्रीय आय को प्रभावित करती है वर्णन करें ?

VII. परियोजना कार्य (Project Work)

1. छात्र चार्ट के माध्यम से अपने परिवार के आय के स्रोतों का वर्णन करें ?

2. कक्षा के छात्रों को दो समूहों में विभाजित करते हुए राष्ट्रीय आय एवं प्रति-व्यक्ति आय के बारे में अपनी कक्षा में एक वाद-विवाद आयोजित करें ?

3. छात्र आप अपने परिवार की कुल मासिक आय एवं उस आय पर आश्रितों (परिवार के कुल सदस्यों) पर होने वाले खर्चों की एक सारणी बनाएँ ?

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

I.	1. (ख)	2. (ग)	3. (घ)	4. (क)	5. (घ)
II.	1. 41.4	2. व्यय	3. वृद्धि	4. विकास	5. 11.03
III.	1. सही	2. गलत	3. गलत	4. सही	5. सही

*

इकाई- 3

3

मुद्रा, बचत एवं साख

आज के युग में मुद्रा की भूमिका काफी बढ़ गई है । आज का समस्त आर्थिक ढाँचा मुद्रा पर ही निर्भर है । मुद्रा को हटा देने पर संभवत: आर्थिक व्यवस्था लड़खड़ा सकती है । वर्तमान युग में उत्पादन, उपभोग, विनिमय, वितरण इत्यादि से संबंधित क्रियाएँ मुद्रा के द्वारा ही प्रभावित होती है । इस तरह मुद्रा हमारे जीवन का एक आवश्यक अंग हो गई है । आधुनिक समाज को मुद्रा से अनेक लाभ प्राप्त है और इस कारण मुद्रा की उपयोगिता बहुत अधिक है । **मार्शल** (Marshall) ने ठीक ही कहा है कि "आधुनिक युग की प्रगति का श्रेय मुद्रा को ही है"। **ट्रेस्कॉट** (Trescott) के अनुसार, "यदि मुद्रा हमारी अर्थव्यवस्था का हृदय नहीं तो रक्त प्रवाह अवश्य है ।" (If money is not the heart of our economic system, it can certainly be considered its blood stream.) इस तरह मुद्रा हमारी अर्थव्यवस्था की जीवन-शक्ति है। आधुनिक युग में बचत एवं साख का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

मुद्रा का इतिहास

आर्थिक तथा व्यावसायिक क्षेत्र में मुद्रा का स्थान बहुत ही महत्त्वपूर्ण है । यह आधुनिक अर्थव्यवस्था की रीढ़ मानी जाती है । **सच पूछा** जाए तो मुद्रा के विकास का इतिहास मानव सभ्यता के विकास का इतिहास कहा **जा सकता है** । सभ्यता के प्रारंभिक अवस्था में जब मनुष्य की आवश्यकताएँ सीमित थीं तब वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति अपने आप के उत्पादन से कर लिया करता था । लेकिन लोगों की संख्या में वृद्धि के साथ ही उनकी आवश्यकताओं में भी वृद्धि होने लगी । अब स्वयं के उत्पादन से मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति होने में कठिनाई महसूस की जाने लगी । अब वे आपस में एक-दूसरे के द्वारा उत्पादित की हुई चीजों अथवा वस्तुओं के आदान-प्रदान से अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने लगे । अधिकांश

आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए आज दूसरे व्यक्तियों पर निर्भर होना पड़ता है । आज प्राय: प्रत्येक मनुष्य किसी एक कार्य में ही अपना समय लगाता है । इससे जो आय प्राप्त होता है उससे अन्य वस्तुएँ प्राप्त कर लेता है । अत: आज विनिमय का महत्त्व काफी बढ़ गया है ।

विनिमय के स्वरूप (Forms of Exchange) - विनिमय के दो रूप हैं -

(i) वस्तु विनिमय प्रणाली तथा (Barter System) (ii) मौद्रिक विनिमय प्रणाली (Monctary System)।

(i) वस्तु विनिमय प्रणाली (Barter System)

वस्तु विनिमय प्रणाली उस प्रणाली को कहा जाता है जिसमें एक वस्तु के बदले में दूसरी वस्तु का आदान-प्रदान होता है । दूसरे शब्दों में, "किसी एक वस्तु का किसी दूसरी वस्तु के साथ बिना मुद्रा के प्रत्यक्ष रूप से लेन-देन वस्तु विनिमय प्रणाली कहलाता है।" (The act of direct exchange of one commodity for another without the mediation of money is known as Barter-system) । उदाहरण के लिए, गेहूँ से चावल बदलना, सब्जी से तेल बदलना, दूध से दही बदलना आदि । यह प्रणाली पुराने जमाने में प्रचलित थी । व्यावहारिक रूप से इस प्रणाली में लोगों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयाँ (Difficulties of Barter System) - वस्तु विनिमय प्रणाली में मनुष्य को निम्नलिखित कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था :-

1. आवश्यकता के दोहरे संयोग का अभाव (Lack of double coincidence of wants)- वस्तु विनिमय प्रणाली की यह प्रमुख कठिनाई थी । आवश्यकता के दोहरे संयोग का मतलब है कि एक की जरूरत दूसरे से मेल खा जाए लेकिन ऐसा कभी संयोग ही होता था कि किसी की जरूरत किसी से मेल खा जाए । ऐसी स्थिति में विनिमय में कठिनाई होती है। आवश्यकता के दोहरे संयोग के अभाव को एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है । **लेफ्टीनेन्ट केमेरोन** (Lieutenant Cameron) अफ्रीका में एक नदी पार करना चाहता था । नाविक नदी पार करने के लिए हाथी-दाँत माँगता था जो उसके पास नहीं था । केमेरोन को पता लगा कि एक-दूसरे व्यक्ति के पास हाथी-दाँत है जो उसके बदले में कपड़ा चाहता है लेकिन

केमेरोन के पास कपड़ा भी नहीं था। कुछ समय बाद केमेरोन को पता चला कि तीसरे व्यक्ति के पास कपड़ा है और इसके बदले में वह तार (wire) चाहता है । सौभाग्य से केमेरोन के पास तार था । उसने तार देकर कपड़ा लिया, कपड़ा देकर हाथी-दाँत लिया तथा हाथी-दाँत देकर नदी पार की । इस तरह दोहरे संयोग के अभाव में उसका बहुत समय बर्बाद हुआ ।

वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयाँ

1. आवश्यकता के दोहरे संयोग का अभाव
2. मूल्य के सामान्य मापक का अभाव
3. मूल्य-संचय का अभाव
4. सह-विभाजन का अभाव
5. भविष्य के भुगतान की कठिनाई
6. मूल्य हस्तांतरण की समस्या

2. मूल्य के सामान्य मापक का अभाव (Lack of common measure of value)-वस्तु विनिमय प्रणाली की दूसरी बड़ी कठिनाई मूल्य के मापने से संबंधित थी । कोई ऐसा सर्वमान्य मापक नहीं था जिसकी सहायता से सभी प्रकार के वस्तुओं एवं सेवाओं के मूल्य को ठीक प्रकार से मापा जा सके । उदाहरण के लिए, एक सेर चावल के बदले में कितना घी दिया जाए ? एक गाय के बदले में कितनी बकरियाँ दी जायें ? इत्यादि ।

3. मूल्य संचय का अभाव (Lack of store of value)- वस्तु विनिमय प्रणाली में लोगों के द्वारा उत्पादित वस्तुओं के संचय की असुविधा थी । व्यवहार में व्यक्ति कुछ ऐसी वस्तुओं का उत्पादन करता है जो शीघ्र नष्ट हो जाती है । ऐसी शीघ्र नष्ट होने वाली वस्तुएँ जैसे- मछली, फल, सब्जी इत्यादि का लंबी अवधि तक संचय करना कठिन था ।

4. सह-विभाजन का अभाव (Lack of divisibility)- कुछ वस्तुएँ ऐसी होती हैं जिनका विभाजन नहीं किया जा सकता है । यदि उनका विभाजन कर दिया जाए तो उनकी उपयोगिता नष्ट हो जाती है । वस्तु विनिमय प्रणाली में यह कठिनाई उस समय होती थी जब एक गाय के बदले में तीन-चार वस्तुएँ लेनी होती थी और वे वस्तुएँ अलग-अलग व्यक्तियों के पास थी । इस स्थिति में गाय के तीन-चार टुकड़े नहीं किए जा सकते क्योंकि ऐसा करने से गाय की उपयोगिता ही समाप्त हो सकती है । ऐसी स्थिति में विनिमय का कार्य नहीं हो सकता।

5. भविष्य के भुगतान की कठिनाई (Difficulty of future payment) - वस्तु विनिमय प्रणाली में उधार लेने तथा देने में कठिनाई होती थी । मान लिया जाए कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से दो वर्षों के लिए एक गाय उधार देता था और इस अवधि के बीतने पर वह गाय को लौटा देता था । लेकिन इन दो वर्षों के अंदर उधार लेनेवाला व्यक्ति गाय का दूध पिया तथा उसके गोबर को जलावन में उपयोग किया । इस तरह इस प्रणाली में उधार देने वाले को घाटा होता था जबकि उधार लेने वाला फायदे में रहता था ।

6. मूल्य हस्तांतरण की समस्या (Problem of transfer of value) - वस्तु विनिमय प्रणाली में मूल्य के हस्तांतरण में कठिनाई होती थी । कठिनाई उस समय और अधिक हो बढ़ जाती थी जब कोई व्यक्ति एक स्थान को छोड़कर दूसरे स्थान पर बसना चाहता । ऐसी स्थिति में उसे अपनी सम्पत्ति छोड़कर जाना पड़ता था, क्योंकि उसे बेचना कठिन था ।

(ii) मौद्रिक विनिमय प्रणाली (Monetary System)

वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों के कारण मनुष्य के द्वारा ऐसी व्यवस्था की आवश्यकता हुई जो उन्हें बाजार व्यवस्था में लाने के क्रम में इन कठिनाइयों का समाधान दे सके। इन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के लिए मुद्रा का आविष्कार किया गया । मुद्रा के आविष्कार से मनुष्य के व्यापारिक जीवन में सुविधापूर्वक आदान-प्रदान की स्थिति संभव हो सकी । **मुद्रा का आविष्कार मनुष्य की सबसे बड़ी उपलब्धि है** । सुप्रसिद्ध विद्वान **क्राउथर (Crowther)** ने ठीक ही कहा है कि "जिस तरह यंत्रशास्त्र (Mechanics) में चक्र, विज्ञान में अग्नि और राजनीतिशास्त्र में मत (vote) का स्थान है, वही स्थान मानव के आर्थिक जीवन में मुद्रा का है ।" मनुष्य के सामाजिक एवं व्यावसायिक जीवन का संचालन मुद्रा के माध्यम से ही होता है। मुद्रा के आविष्कार से वस्तु विनिमय प्रणाली की सारी कठिनाइयों का समाधान हो गया । इस संदर्भ में क्राउथर (Crowther) ने ठीक ही कहा है कि **"मनुष्य के सभी आविष्कारों में मुद्रा का आविष्कार एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है"** (Money is one of the most fundamental of all man's inventions)।

मौद्रिक प्रणाली में विनिमय का सारा कार्य मुद्रा की सहायता से होने लगा है । इस प्रणाली में पहले कोई व्यक्ति अपनी वस्तु या सेवा को बेचकर मुद्रा प्राप्त करता है और फिर उस मुद्रा से अपनी जरूरत की अन्य वस्तुएँ प्राप्त करता है । चूँकि इस प्रणाली में मुद्रा विनिमय के माध्यम का कार्य करती है । इसलिए इसे मौद्रिक विनिमय प्रणाली कहा जाता है । **वास्तव में मुद्रा के विकास का इतिहास एक तरह से मानव-सभ्यता के विकास का ही इतिहास है ।** (The development of Money is, in a way, an epitome of the history of human civilization.)

विश्व की मुद्राएँ - निम्न तालिका में 3.1 विश्व के कुछ देशों की मुद्रा को दिखाया गया है-

तालिका 3.1 विश्व की मुद्राएँ

	देश	मुद्रा
1.	भारत	रुपया
2.	पाकिस्तान	रुपया
3.	बांगला देश	टका
4.	नेपाल	रुपया
5.	अमेरिका	डॉलर
6.	इंगलैंड	पॉण्ड
7.	रूस	रूबल
8.	सिंगापुर	डॉलर
9.	अफगानिस्तान	अफगानी
10.	इरान	रियाल
11.	इराक	दिनार
12.	स्वीडेन	क्रोना

मुद्रा के कार्य

आधुनिक समय में मुद्रा बहुत से कार्यों को संपन्न करती है तथा इसके कार्यों में क्रमशः वृद्धि होती जा रही है । साधारण मुद्रा के निम्न चार कार्यों को ही अत्यधिक महत्त्व दिया जाता

है । वे हैं- 1. विनिमय का माध्यम, 2. मूल्य का मापक, 3. विलंबित भुगतान का मान, 4. मूल्य का संचय । मुद्रा के इन चार कार्यों को प्राय: अँग्रेजी की एक कविता द्वारा निम्न प्रकार से व्यक्त किया जाता है –

Money is a matter of functions four.

A medium, a measure, a standard, a store.

हिन्दी में इसे निम्न तरह से कहा जा सकता है-

मुद्रा के हैं चार कार्य महान्,

माध्यम, मापन, संचय, भुगतान ।

लेकिन आजकल अर्थशास्त्रियों द्वारा मुद्रा के और भी बहुत-से कार्य बतलाये गये हैं । संक्षेप में, मुद्रा के कुछ प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं -

1. विनिमय का माध्यम (Medium of exchange)- मुद्रा विनिमय का एक माध्यम है। क्रय तथा विक्रय दोनों में ही मुद्रा मध्यस्थ का कार्य करती है । मुद्रा के आविष्कार के कारण अब आवश्यकताओं के दोहरे संयोग के अभाव की कठिनाई उत्पन्न नहीं होती । अब वस्तु या सेवा को बेचकर मुद्रा प्राप्त की जाती है तथा मुद्रा से अपनी जरूरत की अन्य वस्तुएँ खरीदी जाती है । इस तरह मुद्रा ने विनिमय के कार्य को बहुत ही आसान बना दिया है । चूँकि मुद्रा विधिग्राह्य (Legal Tender) भी होती है। इस कारण इसे स्वीकार करने में कोई कठिनाई नहीं उत्पन्न होती है । मुद्रा के द्वारा किसी भी समय विनिमय किया जा सकता है ।

2. मूल्य का मापक (Measure of value)- मुद्रा मूल्य का मापक है । मुद्रा के द्वारा वस्तुओं का मूल्यांकन करना सरल हो गया है । वस्तु विनिमय प्रणाली में एक कठिनाई यह थी कि वस्तुओं का सही तौर पर मूल्यांकन नहीं हो पाता था । मुद्रा ने इस कठिनाई को दूर कर दिया है । किस वस्तु का कितना मूल्य होगा? मुद्रा द्वारा यह पता लगाना सरल हो गया है। चूँकि प्रत्येक वस्तु को मापने के लिए एक मापदण्ड होता है । वस्तुओं का मूल्य मापने का मापदण्ड मुद्रा ही है । मुद्रा के इस महत्त्वपूर्ण कार्य के कारण विनिमय करने की सुविधा हो गयी है क्योंकि बिना मूल्यांकन के विनिमय का कार्य उचित रूप से संपादित नहीं हो सकता है ।

3. विलंबित भुगतान का मान (Standard of deferred payment)- आधुनिक युग में बहुत से आर्थिक कार्य उधार पर होते है और उसका भुगतान बाद में किया जाता है। दूसरे शब्दों में, भुगतान विलंबित या स्थगित होता है। मुद्रा विलंबित भुगतान का एक सरल साधन है। इसके द्वारा ऋण के भुगतान करने में भी काफी सुविधा हो गई है। मान लीजिए, राम ने श्याम से एक साल के लिए 100 रुपये उधार लिया। अवधि समाप्त हो जाने पर राम श्याम को 100 रुपये मुद्रा के रूप में वापस कर दे सकता है। इस तरह मुद्रा के रूप में ऋण के भुगतान तथा विलंबित भुगतान की सुविधा हो गई। चूकि **साख अथवा उधार (credit) आधुनिक व्यवसाय की रीढ़ है** और मुद्रा ने उधार देने तथा लेने के कार्य को काफी सरल बना दिया है। इस तरह की सुविधा वस्तु विनिमय प्रणाली में नहीं थी।

4. मूल्य का संचय (Store of value)- मनुष्य भविष्य के लिए कुछ बचाकर रखना चाहता है। वर्तमान आवश्यकताओं के साथ ही साथ भविष्य की आवश्यकताएँ भी महत्त्वपूर्ण है। इस कारण, यह जरूरी है कि भविष्य के लिए कुछ बचा करके रखा जाए। मुद्रा में यह गुण और विशेषता है कि इसे संचित या जमा करके रखी जा सकती। वस्तु विनिमय प्रणाली में संचय करके रखने की कठिनाई थी। वस्तुओं के सड़-गल जाने या नष्ट हो जाने का डर बना रहता था। लेकिन मुद्रा ने इस कठिनाई को दूर कर दिया है। मुद्रा को हम बहुत दिनों तक संचित करके रख सकते हैं। लंबी अवधि तक संचित करके रखने पर भी मुद्रा खराब नहीं होती।

5. क्रय-शक्ति का हस्तांतरण (Transfer of purchasing power)- मुद्रा का एक आवश्यक कार्य क्रय-शक्ति का हस्तांतरण भी है। आर्थिक विकास के साथ-ही-साथ विनिमय के क्षेत्र में भी विस्तार होता चला गया है। वस्तुओं का क्रय-विक्रय अब दूर-दूर तक होने लगा है। इस कारण क्रय-शक्ति को एक स्थान से दूसरे स्थान को हस्तांतरित करने की जरूरत महसूस की गई। चूँकि मुद्रा में सामान्य स्वीकृति का गुण विद्यमान है। अतः कोई भी व्यक्ति किसी एक स्थान पर अपनी संपत्ति बेचकर किसी अन्य स्थान पर नयी संपत्ति खरीद सकता है। इसके अलावे, मुद्रा के ही रूप में धन का लेन-देन होता है। अतः मुद्रा के माध्यम से क्रय-शक्ति को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरित किया जा सकता है।

6. साख का आधार (Basis of credit)- वर्तमान समय में मुद्रा साख के आधार पर कार्य करती है । मुद्रा के कारण ही साख पत्रों का प्रयोग बड़े पैमाने पर होता है । बिना मुद्रा के साख पत्र जैसे-चेक, ड्राफ्ट, हुण्डी आदि प्रचलन में नहीं रह सकते । उदाहरण के लिए, जमा कर्त्ता चेक (Cheque) का प्रयोग तभी कर सकता है, जब बैंक में उसके खाता (Account) में पर्याप्त मुद्रा हो । व्यापारिक बैंक भी साख का सृजन नकद कोष (Cash Reserve) के आधार पर ही कर सकते हैं । यदि नकद मुद्रा का कोष अधिक है तो अधिक साख का निर्माण हो सकता है । नकद मुद्रा के कोष में कमी होने से साख की मात्रा भी कम हो जाती है । इस तरह मुद्रा साख के आधार पर कार्य करती है ।

मुद्रा है क्या ?

व्यावहारिक जीवन के हरेक क्षण में हमें मुद्रा का उपयोग करना पड़ता है । मुद्रा कहने से सामान्यत: सभी व्यक्ति समझने लगते हैं कि धातु अथवा कागज का बना वह वस्तु जो हमारे दिनचर्या में आय उपलब्ध कराता है यह वस्तु और सेवाओं के आदान-प्रदान में सुविधा उपलब्ध कराता है । मुद्रा के अर्थ को समझने के लिए हमें अपने दैनिक जीवन के उन कार्यों को देखना होगा जिसका संपादन हम देश अथवा विदेश में वस्तु और सेवाओं के क्रय-विक्रय के माध्यम के रूप में करते हैं । मुद्रा के विकास को देखने के क्रम में हमने देखा कि सभ्यता के प्रारंभिक अवस्था में वस्तु जैसे-बकरी, गाय, गेहूँ, चमड़ा आदि का उपयोग विनिमय के माध्यम के रूप में होता था। बाद में चमड़ा, पत्थर, कौड़ी, सोना एवं चाँदी तथा कागज के बने मुद्रा का उपयोग होने लगा । आजकल तो अधिकतर भुगतान पत्र-मुद्रा तथा चेक के द्वारा होता है ।

साधारण बोलचाल की भाषा में मुद्रा का अर्थ धातु के बने सिक्कों से समझा जाता है । मुद्रा शब्द का प्रयोग मुहर या चिह्न के अर्थ में भी किया जाता है । यही कारण है कि जिस वस्तु पर सरकारी चिह्न या मुहर लगाया जाता था, उसे मुद्रा कहा जाता था । अर्थशास्त्र में मुद्रा की अनेक परिभाषाएँ दी गई हैं । कुछ परिभाषाएँ संकुचित है तो कुछ विस्तृत हैं तथा कुछ परिभाषाएँ अन्य बातों पर आधारित है । **प्रो० हार्टले विदर्स** (Hartley Withers) ने बताया है कि **"मुद्रा वह है जो मुद्रा का कार्य करती है"** (Money is what money does) ।

कोलबर्न (Coulborn) का कहना है कि 'मुद्रा वह है जो मूल्य का मापक और भुगतान का साधन है'' (Money may be defined as the means of valuation of payment)। **नैप** (Knapp) के अनुसार **''कोई भी वस्तु जो राज्य द्वारा मुद्रा घोषित की जाती है, मुद्रा कहलाती है''** (Any thing which is declared money by the state becomes money)। **सेलिगमैन** (Seligman) का कहना है कि **''मुद्रा वह वस्तु है जिसे सामान्य स्वीकृति प्राप्त है''** (Money is one thing that possesses general acceptability) । निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि सामान्य स्वीकृति प्राप्त विधि ग्राह्य (Legal Tender) एवं स्वतंत्र रूप से प्रचलित कोई भी वस्तु जो विनिमय के माध्यम, मूल्य के सामान्य मापक, ऋण के भुगतान का मापदंड तथा संचय के साधन के रूप में कार्य करती है, मुद्रा कहलाती है ।

आर्थिक विकास के वर्तमान युग में अर्थव्यवस्था में तरक्की होने के क्रम में तथा वर्तमान वैश्वीकरण (Globalisation) के युग में आदान-प्रदान की समस्त क्रिया पत्र मुद्रा (Paper Money), चेक (Cheque) आदि साख मुद्रा द्वारा हो रहा है । प्लास्टिक मुद्रा जिसे हम **एटीएम-सह डेबिट कार्ड (ATM- Cum Debit Card) तथा क्रेडिट कार्ड (Credit Card)** कहते हैं, इसके द्वारा भी आज विनिमय की क्रिया संपादित की जाने लगी है । अब **कम्प्यूटर (Computer)** के इस दौर में **कोर बैंकिंग (Core-Banking)** के प्रचलन के कारण कुछ ही क्षणों में देश या विदेश के एक से दूसरे भाग में मुद्रा का हस्तांतरण बिना किसी कठिनाई के किया जाने लगा है ।

मुद्रा के क्रमिक विकास को तालिका 3.1 के द्वारा स्पष्ट किया गया है–

तालिका 3.1 मुद्रा का विकास

1. वस्तु विनिमय (Barter)
2. वस्तु-मुद्रा (Commodity Money)
3. धात्विक मुद्रा (Mettallic Money)
4. सिक्के (Coins)
5. पत्र मुद्रा (Paper Money)
6. साख मुद्रा (Credit Money)

तालिका 3.1 से निम्न बातें सामने आती हैं-

(Barter)- इसमें वस्तु का वस्तु से लेन-देन होता है ।

2. वस्तु-मुद्रा (Commodity Money)- प्रारंभिक काल में किसी एक वस्तु को मुद्रा के कार्य संपन्न करने के लिए चुन लिया गया था । शिकारी युग (Hunting Age) में खाल या चमड़ा, पशुपालन युग (Pastoral Age) में कोई पशु जैसे-गाय या बकरी तथा कृषि युग में कोई अनाज जैसे-कपास, गेहूँ आदि को मुद्रा का कार्य संपन्न करने के लिए चुना गया तथा इन्हें मुद्रा के रूप में प्रयोग किया गया ।

3. धात्विक मुद्रा (Mettalic Money)- वस्तु मुद्रा द्वारा विनिमय करने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था । अब धातुओं का प्रयोग मुद्रा के रूप में होने लगा । मुद्रा जो पीतल और ताँबा इत्यादि धातुओं से बना होता है, उसे धात्विक मुद्रा कहते हैं ।

4. सिक्के (Coins)- धातु मुद्रा के प्रयोग में भी धीरे-धीरे कुछ कठिनाइयाँ आने लगी। इन कठिनाइयों को दूर करने के लिए सिक्के का प्रयोग किया जाने लगा । सोने-चाँदी आदि से बना वह वस्तु जो देश की सार्वभौम सरकार की मुहर से चालित होता है उसे सिक्का कहते हैं। सिक्के को निम्न चित्र 3.1 में दिखाया गया है ।

चित्र 3.1 सिक्के

5. पत्र मुद्रा (Paper Money)- सिक्का-मुद्रा में भी कुछ दोष थे । इन्हें एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाने में कठिनाई होती थी । इसलिए पत्र मुद्रा का प्रचलन हुआ । वर्तमान समय

में विश्व के प्राय: सभी देशों में पत्र-मुद्रा का ही प्रचलन है । देश की सरकार तथा देश के केन्द्रीय बैंक के द्वारा जो कागज का नोट (Note) प्रचलित किया जाता है, उसे पत्र-मुद्रा कहते हैं । चूँकि यह कागज का बना होता है । इसलिए इसे कागजी मुद्रा भी कहा जाता है । **भारत में एक रुपया के कागजी नोट अथवा सभी सिक्के केन्द्र सरकार के वित्त विभाग के द्वारा चलाया जाता है ।** दो रुपए या इससे अधिक के सभी कागजी नोट देश के केन्द्रीय बैंक-रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (Reserve Bank of India) के द्वारा चलाये जाते हैं । इस तरह अपने देश में केन्द्रीय सरकार एक रुपये के नोट जारी करती है तथा रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया 2, 5, 10, 20, 50, 100, 200 तथा 500 रुपये के नोट जारी करती है । भारत एवं अमेरीका में प्रचलित रुपये के कुछ नमूने को चित्र 3.2 द्वारा दिखाया गया है।

चित्र 3.2 : भारत में प्रचलित पत्र-मुद्रा

6. साख मुद्रा (Credit Money)- आर्थिक विकास के साथ साख-मुद्रा का भी उपयोग होने लगा । आधुनिक समय में चेक, हुण्डी आदि विभिन्न प्रकार के साख-पत्र मुद्रा का कार्य करते हैं । इनको साख-मुद्रा कहा जा सकता है । अन्तर्राष्ट्रीय लेन-देन अधिकांश रूप से साख-मुद्रा द्वारा होता है । देश के आंतरिक व्यापार में भी धातु या पत्र-मुद्रा की अपेक्षा चेक

(Cheque) तथा हुण्डी आदि साख-पत्रों का अधिक उपयोग होता है ।

प्लास्टिक मुद्रा (Plastic Money)- आजकल प्लास्टिक मुद्रा का प्रचलन जोरों पर है । प्लास्टिक मुद्रा में एटीएम सह-डेबिट कार्ड तथा क्रेडिट कार्ड प्रसिद्ध है ।

(i) एटीएम सह-डेबिड कार्ड (ATM-cum-Debit Card)- आर्थिक विकास के इस दौर में बैंकिंग संस्थाओं के द्वारा प्लास्टिक के एक टुकड़े को भी मुद्रा के रूप में उपयोग किया जाने लगा है । प्लास्टिक के मुद्रा का एक रूप एटीएम है । एटीएम का अर्थ है- **स्वचालित टेलर मशीन** (Automatic Teller Machine) । यह मशीन 24 घंटे रुपये निकालने तथा जमा करने की सेवा प्रदान कराता है । भारत में सभी बड़े-बड़े व्यावसायिक बैंक जैसे- स्टेट बैंक, इलाहाबाद बैंक, आई० सी० आई० सी० आई (ICICI) बैंक आदि द्वारा यह सुविधा अपने ग्राहकों को उपलब्ध करायी जाती है । निम्न चित्र 3.3 में स्टेट बैंक ऑफ इंडिया के एटीएम केन्द्र को दिखाया गया है ।

चित्र 3.3 : एटीएम केन्द्र

उपरोक्त चित्र में हमने ATM केन्द्र को देखा । अब ATM से रुपया निकालने के लिए ATM-Cum-Debit Card होना चाहिए । ATM-Cum-Debit Card को चित्र 3.4 में दिखाया

गया है -

चित्र 3.4 : एटीएम कार्ड

उपरोक्त चित्र 3.4 में ATM कार्ड को देखा । एटीएम कार्ड मिलने के बाद एक गुप्त पिन नं० होता है जिसकी सहायता से ATM कार्ड को एटीएम मशीन में डालने के बाद रुपया निकाला जा सकता है । एटीएम मशीन से रुपया कैसे निकाला जाता है ? इसे निम्न चित्र 3.5 में दिखाया गया है-

चित्र 3.5 : ATM मशीन

(ii) क्रेडिट कार्ड (Credit Card)- क्रेडिट कार्ड भी प्लास्टिक मुद्रा का एक रूप है। विश्व में प्रचलित क्रेडिट कार्डो में VISA, मास्टर कार्ड, अमेरिकन एक्सप्रेस आदि प्रसिद्ध है। क्रेडिट कार्ड के अन्तर्गत ग्राहक की वित्तीय स्थिति को देखते हुए बैंक उसकी साख की एक राशि निर्धारित कर देती है जिसके अन्तर्गत वह अपने क्रेडिट कार्ड के माध्यम से निर्धारित धनराशि के अन्दर वस्तुओं और सेवाओं को खरीद सकता है । चित्र 3.6 में क्रेडिट कार्ड को दिखाया गया है-

चित्र 3.6 : क्रेडिट कार्ड

मुद्रा का आर्थिक महत्त्व

आधुनिक आर्थिक व्यवस्था में मुद्रा का काफी महत्त्व है । यदि मुद्रा को वर्तमान समाज से हटा दिया जाए तो हमारी सारी आर्थिक व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो जाएगी । यदि मुद्रा न होती तो विश्व के विभिन्न देशों में इतनी आर्थिक प्रगति कभी भी संभव नहीं होती । चाहे पूँजीवादी अर्थव्यवस्था हो या समाजवादी अर्थव्यवस्था हो या मिश्रित अर्थव्यवस्था हो, सभी में मुद्रा आर्थिक विकास के मार्ग में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है । मुद्रा के आर्थिक महत्त्व के बारे में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **ट्रेस्कॉट** (Trescott) ने कहा है कि **''यदि मुद्रा हमारी अर्थव्यवस्था का हृदय नहीं तो रक्त-स्त्रोत तो अवश्य है ।''** आज का आर्थिक जगत मुद्रा के बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता । इसलिए **प्रो0 मार्शल** (Marshall) ने कहा है, कि

''मुद्रा वह धूरी है जिसके चारों तरफ संपूर्ण आर्थिक विज्ञान चक्कर काटता है'' (Money is the pivot around which the whole economic science clusters) । मुद्रा के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए **क्राउथर** (Crowther) ने कहा है कि **''ज्ञान की प्रत्येक शाखा की अपनी-अपनी मूल खोज होती है जैसे यंत्रशास्त्र में चक्र (Wheel), विज्ञान में अग्नि (Fire), राजनीतिशास्त्र में वोट (vote) । ठीक इसी प्रकार, मनुष्य के आर्थिक एवं व्यावसायिक जीवन में मुद्रा सर्वाधिक उपयोगी आविष्कार है जिस पर संपूर्ण व्यवस्था ही आधारित है ।''** वास्तव में, मुद्रा मानव का एक महत्त्वपूर्ण आविष्कार है। अँग्रेजी की निम्न पंक्तियाँ मुद्रा के महत्त्व को स्पष्ट करती है-

"Money ! Money !! Money!!!
Brighter Than Shunshine,
Sweeter Than Honey."

इसे हिन्दी में निम्न तरह से स्पष्ट किया जा सकता है-

''मुद्रा ! मुद्रा !! मुद्रा !!!
सूर्य-प्रकाश से भी अधिक चमकीला,
मधु से भी अधिक मीठा ।''

अत: स्पष्ट है कि आधुनिक जीवन प्रत्येक दिशा में मुद्रा के द्वारा प्रभावित होता है । प्रो० पीगू (Pigou) का यह कहना सही लगता है कि **''आधुनिक विश्व में उद्योग मुद्रा रूपी वस्त्र धारण किए हुए हैं''** (In the modern world industry is closely enfolded in the garment of money.)।

मुद्रा से लाभ

मुद्रा हमारे लिए काफी लाभदायक है । मुद्रा से पूरे मानव समाज को लाभ पहुँचता है । अर्थशास्त्र की सभी शाखाओं जैसे-उपभोग, उत्पादन, विनिमय, वितरण तथा राजस्व में मुद्रा का महत्त्वपूर्ण स्थान है । मुद्रा के कुछ प्रमुख लाभ निम्न है-

1. मुद्रा से उपभोक्ता को लाभ- मुद्रा के आविष्कार से उपभोक्ता को बहुत लाभ हुआ

है । प्रत्येक उपभोक्ता मुद्रा से अपनी इच्छानुसार वस्तुओं को खरीद सकता है । यह सुविधा वस्तु विनिमय प्रणाली में नहीं थी ।

मुद्रा उपभोक्ता की माँग का आधार है । जिस व्यक्ति के पास मुद्रा अधिक है वह वस्तुओं एवं सेवाओं की माँग अधिक कर सकता है । मुद्रा का अभाव माँग की मात्रा को घटा देता है।

मुद्रा से लाभ

1. मुद्रा से उपभोक्ता को लाभ
2. मुद्रा से उत्पादक को लाभ
3. मुद्रा और साख
4. वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों का निराकरण
5. मुद्रा और पूँजी की तरलता
6. मुद्रा और पूँजी की गतिशीलता
7. मुद्रा और पूँजी निर्माण
8. मुद्रा और बड़े पैमाने के उद्योग
9. मुद्रा और आर्थिक प्रगति
10. मुद्रा और सामाजिक कल्याण

2. मुद्रा से उत्पादक को लाभ- उत्पादक को मुद्रा से अधिक लाभ हुआ है। मुद्रा की सहायता से उन्हें उत्पादन के साधनों की आवश्यक मात्रा जुटाने, कच्चे माल को खरीदने तथा संचित रखने तथा समय-समय पर पूँजी की उधार प्राप्त करने में सहायता मिलती है । उत्पादन लागत कितनी होगी, वस्तु का संभावित मूल्य क्या होगा एवं लाभ की मात्रा क्या होगी? बिना मुद्रा के ये सारी गणनाएँ असंभव है ।

3. मुद्रा और साख- मुद्रा ने साख प्रणाली को संभव बनाया है । आधुनिक व्यवसाय का सारा ढाँचा, साख पर आधारित है । बैंक लोगों की छोटी-छोटी बचतों को इकट्ठा कर लेते हैं तथा उद्योगों को वह मुद्रा उधार दे देते हैं । इस तरह मुद्रा साख का आधार है ।

4. वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों का निराकरण- मुद्रा के आविष्कार से वस्तु विनिमय प्रणाली की सारी कठिनाइयाँ दूर हो गयी है । अब मुद्रा के कारण विनिमय आसान हो गया है।

5. मुद्रा और पूँजी की तरलता- मुद्रा ने पूँजी की तरलता प्रदान की है, क्योंकि इसको प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार कर लेता है । मुद्रा के रूप में पूँजी को किसी भी उपयोग में लगाया जा

सकता है । जिस व्यक्ति के पास मुद्रा है वह किसी भी समय अपनी जरूरत की चीजों को खरीद सकता है और अपनी आवश्यकता की संतुष्टि कर सकता है ।

6. मुद्रा और पूँजी की गतिशीलता- मुद्रा के आविष्कार से पूँजी की गतिशीलता में वृद्धि हुई है । अब पूँजी को न केवल एक ही देश में एक स्थान से दूसरे स्थान को भेजा जा सकता है बल्कि एक देश से दूसरे देश में इसका स्थानांतरण संभव हो सका है । बैंकों के साख-पत्रों ने तो पूँजी की गतिशीलता में काफी वृद्धि की है । इसके चलते वाणिज्य-व्यापार का विकास संभव हो सका है ।

7. मुद्रा और पूँजी निर्माण- मुद्रा तरल संपत्ति है । इसे बैंक में जमाकर सुरक्षित रखा जा सकता है और ब्याज भी प्राप्त किया जा सकता है । किसी उद्योग धंधों में पूँजी विनियोग करके पूँजी निर्माण में अधिक वृद्धि की जा सकती है । इस तरह मुद्रा पूँजी निर्माण का एक अच्छा साधन है ।

8. मुद्रा और बड़े पैमाने के उद्योग मुद्रा के होने से आज बड़े-बड़े उद्योग स्थापित हो सके हैं तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन संभव हो सका है ।

9. मुद्रा और आर्थिक प्रगति- मुद्रा किसी देश की आर्थिक प्रगति का सूचक है।

10. मुद्रा और सामाजिक कल्याण- मुद्रा द्वारा किसी देश की राष्ट्रीय आय तथा प्रति-व्यक्ति आय की माप होती है । यदि प्रति-व्यक्ति आय बढ़ती है तो देश आर्थिक कल्याण की ओर अग्रसर होता है । मुद्रा द्वारा सामाजिक कल्याण को मापा जा सकता है ।

मुद्रा के उपरोक्त लाभों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि आर्थिक जीवन में मुद्रा का कितना महत्त्व है । यह मजदूर, किसान, डॉक्टर, प्रोफेसर, इंजीनियर, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ तथा समाजशास्त्री से लेकर साधु तक की आवश्यकताएँ पूरा करने का सबसे उत्तम साधन है । मुद्रा ने आर्थिक जीवन में बहुत सेवा प्रदान की है । इसलिए यह कहना उचित लगता है कि **''मुद्रा एक अच्छा सेवक है''** (Money is a good servant) ।

बचत क्या है ?

समाज की कुल आय को वस्तुओं एवं सेवाओं पर खर्च किया जाता है । वस्तुओं को दो भागों में बाँटा जा सकता है- (i) कुछ ऐसी वस्तुएँ होती है जिनका हम क्षणिक या तत्काल उपभोग करते हैं । इन्हें **चालू वस्तुएं (Current Goods)** कहा जाता है । (ii) कुछ ऐसी वस्तुएँ होती हैं जो उत्पादन के कार्य में प्रयोग की जाती है । इन्हें **टिकाऊ वस्तुएँ (Durable Goods)** कहा जाता है । इस तरह समाज की कुल आय को इन्हीं दो तरह की वस्तुओं को खरीदने में खर्च किया जाता है । कुल आय का वह भाग जो चालू वस्तुओं पर खर्च किया जाता है उसे उपभोग (consumption) कहते हैं तथा कुल आय का वह भाग जो टिकाऊ वस्तुओं पर खर्च किया जाता है उसे बचत (Saving) कहते हैं । अत: स्पष्ट है कि **आय (Income) तथा उपभोग (Consumption) का अंतर बचत कहलाता है** । इसे निम्न सूत्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है –

Saving = Income - Consumption.

बचत दो प्रकार का होता है - (i) नगद बचत (Saving in Cash) तथा (ii) वस्तु-संचय (Saving in Goods). कुल आय का कुछ ऐसा भी अंश होता है जो किसी भी प्रकार की वस्तु पर व्यय नहीं किया जाता है । इसे संचय या नगद बचत कहते हैं जबकि वस्तु संचय को विनियोग (Investment) कहा जाता है । **क्राउथर (Crowther)** ने कहा है कि **" किसी व्यक्ति की बचत उसकी आय का वह भाग है जो उपभोग की वस्तुओं पर व्यय नहीं की जाती है"** (A man's saving is that part of his income which is not spent on consumption goods) । अर्थशास्त्रियों का कहना है कि अर्थव्यवस्था के स्थायित्व एवं विकास के लिए बचत एवं विनियोग का एक-दूसरे के बराबर होना जरूरी है । इसे सूत्र के द्वारा निम्न तरह से व्यक्त किया जा सकता है–

S = I अर्थात् बचत = विनियोग

साख क्या है ?

साख का अर्थ है– विश्वास या भरोसा । जिस व्यक्ति पर जितना ही अधिक विश्वास

या भरोसा किया जाता है उसकी साख उतनी ही अधिक होती है । अर्थशास्त्र में साख का मतलब ऋण लौटाने या भुगतान करने की क्षमता में विश्वास से होता है । यदि हम कहें कि अरुण की साख बाजार में अधिक है तो इसका मतलब है कि उसकी ऋण लौटाने की शक्ति में लोगों को अधिक विश्वास है । इसी विश्वास के आधार पर एक व्यक्ति या संस्था दूसरे व्यक्ति या संस्था को उधार देता है । **प्रो0 जीड** (Gide) के अनुसार **" साख एक ऐसा विनिमय कार्य है जो एक निश्चित अवधि के बाद भुगतान करने के बाद पूरा हो जाता है"** (Credit is an exchange which is complete after the expiry of a certain period of time after payment)। **साख में दो पक्ष होते हैं –(i) ऋणदाता (Creditor) तथा (ii) ऋणी (Debtor)।** ऋणदाता ऋणी को कुछ वस्तुएँ या धन उधार देता है जिसका तत्कालीन भुगतान उसे प्राप्त नहीं होता है । यह काम विश्वास के आधार पर होता है । रुपयों की जो राशि उधार ली जाती है, उसका भुगतान कुछ समय बाद कर दिया जाता है । जो वस्तुएँ एवं सेवाएँ उधार ली जाती है उनका भी भुगतान इसी प्रकार होता है । चूँकि साख का आधार है – ऋणी पर विश्वास एवं भरोसा । अत: बिना विश्वास और भरोसे के उधार लेन-देन नहीं हो पायेगा । इस तरह यह स्पष्ट होता है कि किसी दिये हुए समय में ऋणी रुपये, सेवाएँ या वस्तुएँ साख के आधार पर प्राप्त करता है और एक निश्चित अवधि के बाद उतनी ही मुद्रा ब्याज सहित लौटाने का वादा करता है ।

साख का आधार

साख के मुख्य आधार निम्न हैं –

1. विश्वास (Confidence)– साख का मुख्य आधार विश्वास है । साख देने वाला या ऋणदाता (Creditor) उधार देने को तभी तैयार होता है जब उसे विश्वास होता है कि ऋणी (Debtor) समय पर रुपया लौटा देगा ।

2. चरित्र (Character)– ऋणी का चरित्र भी उसकी साख का एक महत्वपूर्ण आधार होता है । यदि ऋणी चरित्रवान तथा ईमानदार हैं तो उसे ऋण मिलने में दिक्कत नहीं होती। दूसरी ओर चरित्रहीन व्यक्तियों की साख कम होती हैं और उन्हें कोई ऋण देने के लिए तैयार नहीं होता ।

3. चुकाने की क्षमता (Capacity to Repay)– व्यक्ति की भुगतान करने की क्षमता या योग्यता भी उसकी साख को प्रभावित करती है । ऋणदाता किसी व्यक्ति को उधार तब देता हैं जब उसे उस व्यक्ति के भुगतान करने की क्षमता पर पूरा विश्वास हो । इस तरह किसी व्यक्ति की साख उस व्यक्ति के भुगतान करने की क्षमता पर निर्भर करती है ।

4. पूँजी एवं संपत्ति (Capital and Wealth)– ऋणदाता पूँजी तथा संपत्ति की जमानत के आधार पर ही ऋण देता है । अत: जिस व्यक्ति के पास जितनी ही अधिक पूँजी अथवा संपत्ति होती है, उसे उतना ही अधिक ऋण मिल सकता है ।

5. ऋण की अवधि (Period of Loan)– ऋण की अवधि का प्रभाव भी साख पर पड़ता है । ऋणदाता दीर्घकालीन ऋण देने में घबराते हैं क्योंकि उन्हें संदेह रहता है कि दीर्घकाल में ऋणी की क्षमता, चरित्र और आर्थिक स्थिति में परिवर्तन हो जाए । इसलिए ऋणदाता अल्पकालीन ऋण देना अधिक पसंद करते हैं ।

इस तरह साख के उपरोक्त आधार हैं या आवश्यक तत्व (Essential Elements) हैं । साख के प्रमुख आधार को हम अँग्रेजी में निम्न तरह से व्यक्त करते हैं – **"A person's credit depends on four 'Cs'; confidence, character, capacity and capital."**

साख पत्र

साख पत्र से हमारा मतलब उन साधनों से है जिनका उपयोग साख मुद्रा के रूप में किया जाता है । साख पत्र के आधार पर साख या ऋण का आदान-प्रदान होता है । वे वस्तुओं एवं सेवाओं के क्रय-विक्रय में विनिमय के माध्यम का कार्य करते हैं । अत: साख पत्र ठीक मुद्रा की तरह कार्य करते हैं । लेकिन **मुद्रा एवं साख पत्रों में एक प्रमुख अंतर यह है कि मुद्रा कानूनी ग्राह्य (Legal Tender) होते हैं, जबकि साख पत्रों को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं रहती है।** अत: साख पत्रों के लेन-देन के कार्य में स्वीकार करने के लिए किसी को भी बाध्य नहीं किया जा सकता ।

ऐसे साख पत्र कई प्रकार के होते हैं – 1. चेक, 2. विनिमय बिल, 3. बैंक ड्राफ्ट, 4. हुण्डी, 5. प्रतिज्ञा पत्र, 6. यात्री चेक, 7. पुस्तकीय साख तथा 8. साख प्रमाण पत्र ।

इनमें से कुछ प्रमुख साख पत्रों के बारे में जान लेना आवश्यक है ।

1. चेक (Cheque)– चेक सबसे अधिक प्रचलित साख पत्र है । चेक एक प्रकार का लिखित आदेश है जो बैंक में रुपया जमा करनेवाला अपने बैंक को देता है कि उसमें लिखित रकम उसमें लिखित व्यक्ति को दे दी जाए । चित्र 3.7 में चेक के नमूने को दिखाया गया है ।

चित्र 3.7 : चेक

2. बैंक ड्राफ्ट (Bank Draft)– बैंक ड्राफ्ट वह पत्र है जो एक बैंक अपनी किसी शाखा या अन्य किसी बैंक को आदेश देता है कि उस पत्र में लिखी हुई रकम उसमें अंकित व्यक्ति को दे दी जाए । बैंक ड्राफ्ट के द्वारा आसानी से कम खर्च में ही रुपया एक स्थान से दूसरे स्थान भेजा जा सकता है । Bank Draft देशी तथा विदेशी दोनों ही प्रकार का होता है। चित्र 3.8 में Bank Draft के नमूने को दिखाया गया है –

चित्र 3.8 : बैंक ड्राफ्ट

3. यात्री चेक (Traveller's Cheque)– यात्रियों की सुविधा के लिए यात्री चेक बैंकों द्वारा जारी किये जाते हैं । कोई भी यात्री बैंक में निश्चित रकम जमा कर देने पर यात्री चेक प्राप्त कर सकता है। प्रत्येक यात्री चेक पत्र पर एक निश्चित रकम छपी रहती है। यात्री बैंक की किसी भी शाखा में यात्री चेक प्रस्तुत कर मुद्रा प्राप्त कर सकता है । इस चेक पर यात्री के हस्ताक्षर के नमूने (Specimen) भी अंकित रहते हैं जिसके चलते कोई दूसरा व्यक्ति रुपया नहीं प्राप्त कर सकता है ।

4. प्रतिज्ञा पत्र (Promissory)– यह भी एक प्रकार का साख पत्र होता है । इस पत्र में ऋणी की माँग पर या एक निश्चित अवधि के बाद उसमें अंकित रकम ब्याज सहित देने का वादा किया जाता है ।

आधुनिक समय में साख तथा साख पत्रों का महत्त्व काफी बढ़ गया है ।

सारांश

- मुद्रा हमारे जीवन का एक आवश्यक अंग हो गई है । आधुनिक युग की प्रगति का श्रेय मुद्रा को ही दिया जा सकता है ।
- मुद्रा के विकास का इतिहास मानव सभ्यता के विकास का इतिहास है ।
- विनिमय के दो रूप हैं – (i) वस्तु विनिमय प्रणाली तथा (ii) मौद्रिक विनिमय प्रणाली।
- वस्तु विनिमय प्रणाली में अनेक कठिनाइयाँ थी । इन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के लिए मुद्रा का आविष्कार किया गया । मुद्रा के आविष्कार से वस्तु विनिमय प्रणाली की सारी कठिनाइयों का समाधान हो गया ।
- मुद्रा के हैं चार कार्य महान्; माध्यम, मापन, संचय, भुगतान ।
- सामान्य स्वीकृति प्राप्त, विधि ग्राह्य (Legal Tender) एवं स्वतंत्र रूप से प्रचलित कोई भी वस्तु जो विनिमय के माध्यम, मूल्य के सामान्य मापक, ऋण के भुगतान का मापदण्ड तथा संचय के साधन के रूप में कार्य करती है, मुद्रा कहलाती है ।
- भारत में एक रुपया के कागजी नोट अथवा सभी सिक्के केन्द्र सरकार के वित्त विभाग

द्वारा चलाया जाता है जबकि दो रुपये या इससे अधिक के सभी कागजी नोट देश के केन्द्रीय बैंक (रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया) के द्वारा चलाए जाते हैं ।

- आजकल **प्लास्टिक** मुद्रा का प्रचलन काफी हो रहा है। प्लास्टिक मुद्रा में एटीएम सह-डेबिट **कार्ड** तथा **क्रेडिट** कार्ड **प्रसिद्ध** है। इसके द्वारा विनिमय का कार्य काफी आसान हो गया है ।
- मुद्रा वह धुरी है जिसके चारों तरफ संपूर्ण आर्थिक विज्ञान चक्कर काटता है ।
- "Money ! Money !! Money!!!

  Brighter Than Shunshine,

  Sweeter Than Honey."
- आय तथा उपभोग का अंतर बचत कहलाता है ।
- साख एक ऐसा विनिमय कार्य है जो एक निश्चित अवधि के बाद भुगतान करने के बाद पूरा हो जाता है ।
- साख-पत्र से हमारा मतलब उन साधनों से है जिनका उपयोग साख-मुद्रा के रूप में किया जाता है ।
- साख पत्र कई प्रकार के होते हैं - 1. चेक, 2. विनिमय बिल, 3. बैंक ड्राफ्ट, 4. हुण्डी, 5. प्रतिज्ञा पत्र, 6. यात्री चेक, 7. पुस्तकीय साख तथा 8. साख प्रमाण पत्र ।
- साख-पत्र ठीक मुद्रा की तरह कार्य करते हैं लेकिन इन दोनों में एक प्रमुख अंतर यह है कि मुद्रा कानूनी ग्राह्य (Legal Tender) होते हैं जबकि साख पत्रों को कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं रहती है ।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

रिक्त स्थानों की पूर्ति करें ।

1. आधुनिक युग की प्रगति का श्रेय .... को ही है ।
2. मुद्रा हमारी अर्थव्यवस्था की .... है ।
3. मुद्रा के विकास का इतिहास मानव-सभ्यता के विकास का .... है ।

4. एक वस्तु के बदले में दूसरी वस्तु के आदान-प्रदान को .... प्रणाली कहा जाता है ।
5. मुद्रा का आविष्कार मनुष्य की सबसे बड़ी .... है ।
6. मुद्रा, विनिमय का .... है ।
7. प्लास्टिक मुद्रा के चलते विनिमय का कार्य .... हो गया है ।
8. मुद्रा एक अच्छा .... है ।
9. आय तथा उपभोग का अंतर .... कहलाता है ।
10. साख का मुख्य आधार .... है ।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short- Answer Questions)

1. वस्तु-विनिमय क्या है ?
2. मौद्रिक प्रणाली क्या है ?
3. मुद्रा की परिभाषा दें ।
4. ATM क्या है ?
5. Credit Card क्या है ?
6. बचत क्या है ?
7. साख क्या है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long- Answer Questions)

1. वस्तु विनिमय प्रणाली की कठिनाइयों पर प्रकाश डालें ।
2. मुद्रा के कार्यों पर प्रकाश डालें ।
3. मुद्रा के आर्थिक महत्त्व पर प्रकाश डालें ।
4. मुद्रा के विकास पर प्रकाश डालें ।
5. साख-पत्र क्या है ? कुछ प्रमुख साख पत्रों पर प्रकाश डालें ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

1. मुद्रा	2. जीवन-शक्ति	3. इतिहास	4. वस्तु-विनिमय
5. उपलब्धि	6. माध्यम	7. सरल	8. सेवक
9. बचत	10. विश्वास		

*

इकाई- 4

4

हमारी वित्तीय संस्थाएँ

हम देख चुके हैं कि मुद्रा की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए हमें साख अथवा ऋण की जरूरत पड़ती है । हमारे रोजमर्रा के जीवन में जो साख अथवा ऋण की आवश्यकता होती है, उसकी पूर्ति राज्य के वित्तीय संस्थानों के द्वारा संपन्न होती है । आज के आर्थिक जीवन में साख अथवा ऋण की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। किसी भी आर्थिक क्रिया को संपन्न करने के लिए व्यक्ति विशेष चाहे वह कितना भी बड़ा साधन संपन्न क्यों न हो वह अपने उपलब्ध साधनों के माध्यम से अपने औद्योगिक और व्यावसायिक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकता । स्वाभाविक रूप से ऐसे वित्तीय प्रबंधन के लिए उन्हें सरकारी अथवा अर्द्धसरकारी वित्तीय संस्थानों पर निर्भर करना पड़ता है । यहाँ यह ध्यान रखने योग्य बात है कि वित्तीय संस्थाएँ या तो सरकार द्वारा स्थापित एवं संचालित होती है अथवा लोगों के सहयोग एवं सहभागिता के माध्यम से भी स्थापित होती है, जिसे हम अर्द्धसरकारी वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं। उदाहरण के लिए एक ओर जहाँ सरकार द्वारा स्थापित अथवा सम्पोषित बैंकिंग संस्था साख या ऋण की उपलब्धि कराता है, वहीं अर्द्धसरकारी संस्थाओं में सहकारिता के आधार पर स्थापित संस्थाएँ कृषि क्षेत्र में साख को उपलब्ध कराती है । बिहार के संदर्भ में बिस्कोमान (BISCOMAUN) जैसी सहकारिता के संदर्भ में ऐसी संस्था है जो खासकर कृषि क्षेत्र में साख या ऋण की उपलब्धि कराती है । देश के अन्य राज्यों में भी इसी तर्ज पर सहकारिता की शीर्ष संस्था काम कर रही है । ऐसी संस्थाएँ बैंकिंग व्यवस्था के सहकारिता क्षेत्र की संस्थाएँ कही जाती है । वर्तमान में बांग्लादेश में सूक्ष्म वित्तीय संस्थाओं (Micro Financing) की सफलता से प्रेरित होकर हमारे यहाँ भी ऐसे प्रयास किए जा रहे हैं, जिससे छोटे स्तर पर आपसी सहयोग के माध्यम से साख अथवा ऋण की उपलब्धता गाँवों के छोटे गरीब किसानों के लिए

कराई जाए।

इस अध्याय में हम वित्तीय संस्थाएँ की विस्तृत चर्चा करेंगे जो हमारे नित्य जीवन में साख अथवा ऋण को उपलब्ध कराती है।

वित्तीय संस्थाएँ (Financial Institutions)

वित्तीय संस्थाएँ मौद्रिक क्षेत्र में देश अथवा राज्य की ऐसी संस्थाओं को कहते हैं, जो लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने हेतु साख एवं मुद्रा संबंधी कार्यों का संपादन करती है । वित्तीय संस्थान के द्वारा कृषि, उद्योग, व्यापार जैसे आर्थिक कार्यों के लिए मौद्रिक प्रबंधन किया जाता है । ये संस्थाएँ समाज के आर्थिक विकास के लिए उनकी आवश्यकता के अनुरूप अल्पकालीन, मध्यकालीन और दीर्घकालीन साख अथवा ऋण की सुविधा प्रदान करती है । किसी भी आर्थिक और व्यवसायिक कार्य के संपादन के लिए रुपये-पैसे की आवश्यकता होती है । किसी भी उद्यमी के पास इतना अधिक आर्थिक साधन नहीं होते कि वे अपने बलबूते पर अपने व्यवसाय को चला सकें । ऐसे परिस्थिति में वित्तीय संस्थाएँ उनके लिए उनकी आवश्यकता एवं मांग के अनुरूप वित्तीय साधन उपलब्ध कराती है ।

वित्तीय संस्थाएँ (Financial Institutions)

हमारे देश की वे संस्थाएँ जो आर्थिक विकास के लिए उद्यम (Enterprise) एवं व्यवसाय (Business) की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्त्ति करती है ऐसी संस्थाओं को वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं । मुख्यत: ये वित्तीय संस्थाएँ राज्य संपोषित होती है और देश के केन्द्रीय बैंक जिसे हम रिर्जव बैंक ऑफ इंडिया (RBI) कहते हैं, के दिशा निर्देश के अन्तर्गत एक निश्चित मापदंड पर काम करती हैं ।

सरकारी वित्तीय संस्थाएँ (Government Financial Institutions)

सरकार द्वारा स्थापित एवं संपोषित वित्तीय संस्थाओं को सरकारी वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं। जैसे – स्टेट बैंक ऑफ इंडिया (SBI), सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया (CBI), पंजाब नेशनल बैंक (PNB), इलाहाबाद बैंक इत्यादि ।

अर्द्ध सरकारी वित्तीय संस्थाएँ (Semi-Government Financial Institutions)

ऐसी वित्तीय संस्थाएँ जो सरकार के केन्द्रीय बैंक (रिर्जव बैंक ऑफ इंडिया) के निर्देशन में उनके द्वारा स्थापित मापदंडों पर समाज के लोगों की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्त्ति करती है । उसे हम अर्द्धसरकारी वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं । जैसे – क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, बिहार राज्य कॉपरेटिव बैंक इत्यादि ।

सूक्ष्म वित्तीय संस्थाएँ (Micro Financial Institutions)

छोटे पैमाने पर गरीब जरूरतमंद लोगों को स्वयं सेवी संस्था के माध्यम से कम ब्याज पर साख अथवा ऋण की व्यवस्था करने वाली संस्था को सूक्ष्म-वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं । इस संदर्भ में अपने पड़ोसी देश बांग्लादेश के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित **प्रो० मो० युनुस** का प्रयास सराहनीय है । जो गरीब ग्रामीणों के लिए सूक्ष्म वित्त प्रबंधन के माध्यम से उनके विकास कार्यों में सहयोग किया है और जिसका प्रयोग बिहार के ग्रामीण अपेक्षित क्षेत्रों में भी किया जाना चाहिए ।

उपरोक्त बातों से स्पष्ट है कि देश के आर्थिक विकास के लिए जितनी पूँजी की आवश्यकता होती है उसकी व्यवस्था वित्तीय संस्थाओं के द्वारा किया जाता है । यहाँ यह ध्यान देने योग्य बात है कि एक निश्चित कानूनी मापदंड के आधार पर ही ये वित्तीय संस्थाएँ अपने ग्राहकों को वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्त्ति करती है । वे समस्त व्यक्ति अथवा व्यावसायिक प्रतिष्ठान जो विकास के काम में लगे हुए हैं और जो अपने कार्यों के लिए रुपए-पैसे की संस्थागत माँग करते हैं वे सभी इन वित्तीय संस्थाओं के ग्राहक हैं । अतः आर्थिक विकास के लिए वित्तीय संस्थाओं की सहभागिता आवश्यक है जिसके बिना विकास की क्रिया संपन्न नहीं की जा सकती ।

वित्तीय संस्थाएँ के प्रकार (Kinds of financial institutions)- वित्तीय संस्थाएँ मुख्यतः दो प्रकार की होती है-

(क) राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ (National Financial Institutions)

(ख) राज्य स्तरीय वित्तीय संस्थाएँ (State-level Financial Institutions)

सर्वप्रथम यहाँ राष्ट्रीय स्तर पर वित्तीय संस्थानों की चर्चा करेंगे-

राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ (National Financial Institutions)

ऐसी वित्तीय संस्थाएँ जो देश के लिए वित्तीय और साख नीतियों का निर्धारण एवं निर्देशन करती है तथा राष्ट्रीय स्तर पर वित्त प्रबंधन के कार्यों का संपादन करती है उसे हम **राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ** कहते हैं ।

इनके दो महत्त्वपूर्ण अंग होते हैं -

(क) भारतीय मुद्रा बाजार (Indian Money Market)

(ख) भारतीय पूँजी बाजार (Indian Capital Market)

अपने देश के ऐसे मौद्रिक बाजार जहाँ उद्योग एवं व्यवसाय के क्षेत्र के लिए अल्पकालीन एवं मध्यकालीन वित्तीय व्यवस्था एवं प्रबंधन किया जाता है उसे भारतीय मुद्रा बाजार कहते हैं। भारतीय पूँजी बाजार में भी उद्योग और व्यवसाय के लिए दीर्घकालीन वित्तीय व्यवस्था और प्रबंधन की व्यवस्था की जाती है ।

सामान्यत: भारतीय मुद्रा बाजार को संगठित और असंगठित क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है। संगठित क्षेत्र में वाणिज्य बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक एवं विदेशी बैंक शामिल किए जाते हैं जबकि असंगठित क्षेत्र में देशी बैंकर जिनमें गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ शामिल की जाती हैं ।

देश की संगठित बैंकिंग प्रणाली निम्नलिखित तीन प्रकार की बैंकिंग व्यवस्था के रूप में कार्यशील है -

1. केन्द्रीय बैंक (Central Bank)- भारत में रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (RBI) देश की केन्द्रीय बैंक है । यह देश की शीर्ष बैंकिंग संस्था के रूप में बैंकिंग, वित्तीय और आर्थिक क्रियाओं के दिशा-निर्देश एवं संचालन में सहयोग देती है ।

2. वाणिज्य बैंक (Commercial Bank)- देश में अनेक वाणिज्य बैंकों के द्वारा बैंकिंग एवं वित्तीय क्रियाओं का संचालन होता है । अधिकतर वाणिज्य बैंक सरकार के सीधे नियंत्रण में काम करते हैं जिसे राष्ट्रीयकृत वाणिज्य बैंक कहते हैं और अन्य ऐसे भी वाणिज्य बैंक है जो निजी क्षेत्र की वाणिज्य बैंक कहे जाते हैं । ऐसे बैंक जिनके नाम के अंत में सीमित दायित्व (Ltd) जुड़ा होता है, वे बैंक निजी क्षेत्र की बैंक होती है ।

3. सहकारी बैंक (Co-Operative Bank) - सहकारिता क्षेत्र में आपसी सहयोग और सद्भावना के आधार पर भी अनेक वित्तीय संस्थाएँ कार्यशील हैं। सहकारी बैंक अलग-अलग राज्यों में अलग नाम से जाना जाता है । यद्यपि ये बैंक केन्द्रीय बैंक (RBI) के दिशा निर्देश पर काम करते हैं किन्तु इसकी व्यवस्था का संचालन राज्य सरकारों के द्वारा किया जाता है ।

उपर्युक्त वित्तीय संस्थाओं के द्वारा भारत के उद्योगकर्त्ता एवं कृषक को वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है जिसके कारण यहाँ बहुत सारे औद्योगिक घरानों का विकास हुआ । खासकर बड़े-बड़े उद्योग इसके प्रमुख उदाहरण है । कृषक भी इन वित्तीय संस्थानों से लाभान्वित होते रहे हैं और इनके द्वारा उद्योग का विकास किया जा रहा है ।

संगठित बैंकिंग प्रणाली

1. केन्द्रीय बैंक -RBI देश का केन्द्रीय बैंक है । यह देश में शीर्ष बैंकिंग संस्था के रूप में कार्यरत है।

2. वाणिज्य बैंक - वाणिज्य बैंक के द्वारा बैंकिंग एवं वित्तीय क्रियाओं का संचालन होता है।

3. सहकारी बैंक- आपसी सहयोग और सद्भावना के आधार पर जो वित्तीय संस्थाएँ कार्यशील है उसे सहकारी बैंक कहते हैं, यद्यपि ये राज्य सरकारों के द्वारा संचालित होती हैं ।

भारतीय पूँजी बाजार (Indian Capital Market) -

भारतीय पूँजी बाजार मुख्यत: दीर्घकालीन पूँजी उपलब्ध कराता है । दीर्घकालीन पूँजी की माँग बड़े-बड़े उद्योग घराने एवं सार्वजनिक निर्माण कार्यों के लिए होता है । इसका वर्गीकरण इस प्रकार किया गया है-

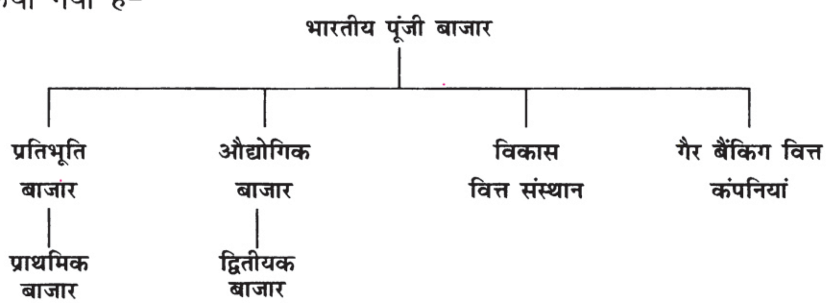

भारतीय पूँजी बाजार मूलत: इन्हीं चार वित्तीय संस्थानों पर आधारित है जिसके चलते राष्ट्र-स्तरीय सार्वजनिक विकास जैसे- सड़क, रेलवे, अस्पताल, शिक्षण-संस्थान, विद्युत-उत्पादन

संयंत्र एवं बड़े-बड़े निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के उद्योग संचालित किए जाते हैं । फलस्वरूप राष्ट्र के निर्माण में इन वित्तीय संस्थानों का काफी योगदान होता है ।

वित्तीय संस्थाएँ किसी भी देश का मेरूदंड (Back Bone) माना जाता है । देश के आर्थिक विकास के लिए सुसंगठित वित्तीय संस्थाओं का होना अति आवश्यक है । यह संतोष की बात है कि भारत की वित्तीय राजधानी (Financial-Capital) मुंबई में एक सुसंगठित पूँजी बाजार है जिसके माध्यम से औद्योगिक क्षेत्रों के लिए वित्त की व्यवस्था होती है । भारत का यह पूँजी बाजार इतना दृढ़ है कि वर्त्तमान में विश्वव्यापी आर्थिक मंदी का जो दौर चल रहा है उसमें विश्व के अन्य देशों की अपेक्षाकृत कम प्रभावित हुआ है । मुंबई के जिस जगह पर इस पूँजी बाजार का प्रधान क्षेत्र है उसे दलाल स्ट्रीट (Dalal Street) कहा जाता है । बिहार में अबतक स्वस्थ वित्तीय संस्थाओं का संगठन नहीं हो सका है जिसके कारण यहाँ का औद्योगिक विकास शिथिल रहा है । बिहार के लोगों के द्वारा जितने पैसे वाणिज्य बैंकों में जमा किए जाते हैं, उसका बहुत ही कम प्रतिशत यहाँ के कृषि और उद्योग के क्षेत्र में बैंकों के द्वारा ऋण के रूप में दिया जाता है। इस तरह स्वस्थ वित्तीय संस्थाओं के अभाव के कारण बिहार का आर्थिक विकास अधिक तेजी से नहीं हो सका है। विगत कुछ वर्षों में बिहार सरकार के अनवरत प्रयास से अब कृषि और उद्योग के क्षेत्र में बैंकों के द्वारा विनियोग की सीमा बढ़ाई गई है । किन्तु अभी भी यहाँ के आर्थिक विकास की आवश्यकता जनहित की अपेक्षा से बहुत कम है ।

राज्य स्तरीय वित्तीय संस्थाएँ (बिहार के संदर्भ में)

हम जानते हैं कि बिहार की अर्थव्यवस्था मुख्यत: कृषि पर आधारित है । जहाँ 87 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है तथा करीब 75 प्रतिशत लोग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि एवं उससे संबंधित लघु-कुटीर उद्योग से जुड़े हुए हैं । यहाँ के अधिकांश किसान छोटे या सीमांत किसान की श्रेणी में आते हैं जिनके पास आय (Income) की कमी है तथा वे अपना बचत (Saving) नहीं के बराबर कर पाते हैं । फलत: कृषि एवं उससे संबंधित उद्योगों में खुद अपेक्षित निवेश (Investment) नहीं कर पाते, इसके लिए उन्हें वित्तीय संस्थाओ द्वारा प्राप्त ऋण की जरूरत पड़ती है ।

राज्य में मुख्यत: **दो प्रकार की वित्तीय संस्थाएँ कार्यरत हैं-**

1. गैर-संस्थागत और 2. संस्थागत वित्तीय संस्थाएँ- इन्हीं के द्वारा साख या ऋण उपलब्ध कराया जाता है ।

राज्य स्तरीय वित्तीय संस्थाएँ

(क) गैर-संस्थागत (Non-Institutional)

- महाजन
- सेठ-साहुकार
- व्यापारी
- रिश्तेदार एवं अन्य

(ख) संस्थागत (Institutional)

- सहकारी बैंक
- प्राथमिक सहकारी समितियाँ
- भूमि विकास बैंक
- व्यावसायिक बैंक
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक
- नार्बाड एवं अन्य

गैर-संस्थागत वित्तीय संस्थाएँ (Non-Institutional Financial Institutions)

महाजन आज भी गाँवों में ऋण प्रदान करने वाला लोकप्रिय साधन माना जाता है क्योंकि इन महाजनों से कर्ज लेना सरल एवं सहज है । ऐसे महाजन व सेठ-साहुकार ग्रामीणों को उत्पादन एवं उपयोग संबंधी सभी कार्यों के लिए ऋण उपलब्ध कराते हैं। ऋण देने का आधार व्यक्ति से अमानत स्वरूप उनके जमीन, जेवर-जेवरात तथा अन्य कीमती सामानों को गिरवी रखते हैं । यदि समय पर ऋण का भुगतान नहीं किया जाता है तो अमानत स्वरूप रखे गए सामान गला दिया जाता है अथवा बेच दिया जाता है । अमानत के बदले ऋण लिए गए ब्याज की दर सरकारी ब्याज दर से काफी ज्यादा होती है । इसकी अदायगी यदि समय पर न किया जाए तो यह ऋण अदायगी काफी कष्टकारी हो जाता है ।

ग्रामीणों को सहज ऋण सुविधा गाँव के अन्य किसानों, रिश्तेदार इत्यादि से ब्याज अथवा बिना ब्याज का भी प्राप्त होता है । इस प्रकार गैर-संस्थागत स्रोत से ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण देने की कुल मात्रा लगभग 48 प्रतिशत है । इसे तुलनात्मक दृष्टिकोण से एक पाइ चार्ट के द्वारा निम्न प्रकार से दर्शाया जा सकता है-

भारत के ग्रामीण परिवारों में साख के स्रोत (2003) का औसतन आँकड़ा

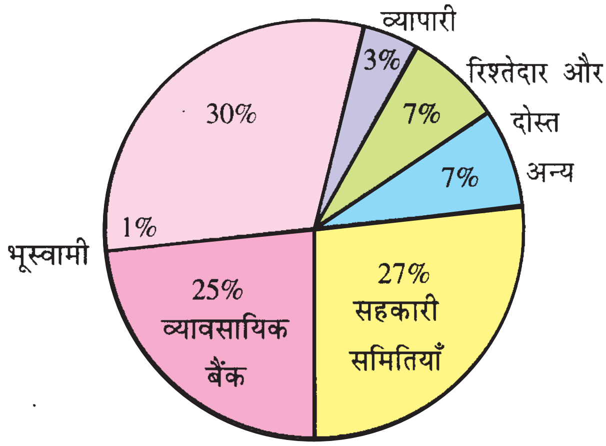

गैर-संस्थागत स्रोत द्वारा दिए गए ऋण पर आधारित कहानी

दीनदयाल एक गरीब खेतीहर मजदूर है । इसके परिवार में दो बच्चे एवं तीन लड़कियाँ हैं। अपने परिवार के भरण-पोषण के लिए पति-पत्नी खेतों में मजदूरी करता है । इस मजदूरी से किसी तरह परिवार को चला पाता है । इसकी अपनी जमीन मात्र 4 कट्ठा है। जिस पर साग-सब्जी उपजाता है । एक बार दीनदयाल की पत्नी जोरों से बीमार पड़ गई । गाँव में इलाज कराते-कराते थक गया । देहाती डॉक्टर ने इसे शहर ले जाकर इलाज कराने को कहा। दीनदयाल के पास उतने पैसे नहीं थे जिससे वह इलाज करा पाता । तब दीनदयाल ने अपनी जमीन को अपने ही किसान के पास गिरवी रख दिया । जमीन के ऊपर उसने 2000 (दो हजार रुपए) दस प्रतिशत प्रतिमाह के दर पर कर्ज सूद (ब्याज) के साथ लिया। इलाज कराकर जब वह शहर से लौटा तो दीनदयाल की हालत काफी खास्ता हो चुका था। उसने काफी दिनों तक किसान को पैसा वापस नहीं कर पा सका । फलतः किसान उसकी जमीन को अपने नाम पर करवा लिया ।

इस छोटे से कहानी से यह पता चलता है कि यद्यपि इस तरह के गैर-संस्थागत स्रोतों से ग्रामीण गरीबों को जरूरत पर ऋण तो उपलब्धा हो जाता है । किन्तु अत्यधिक सूद पर दर और महाजनों द्वारा किए गए अन्य प्रकार के यंत्रणा से गरीब मजदूरों का अत्यधिक शोषण होता है ।

संस्थागत वित्तीय स्रोत (Sources of Institutional Finance)

संस्थागत वित्तीय स्रोत के निम्नलिखित रूप है–

1. सहकारी बैंक (Co-operative Bank)– हमारे राज्य में सहकारी बैंक द्वारा उपलब्ध सहकारी साख व्यवस्था त्रिस्तरीय है–

A. गाँवों में प्राथमिक सहकारी साख समितियाँ

B. जिला स्तर पर केन्द्रीय सहकारी बैंक

C. राज्य स्तर पर राज्य सहकारी बैंक

इनके माध्यम से बिहार के किसानों को अल्पकालीन, मध्यकालीन तथा दीर्घकालीन ऋण की सुविधा उपलब्ध होती है । राज्य में 25 केन्द्रीय सहकारी बैंक जिला स्तर पर तथा राज्य स्तर पर एक बिहार राज्य सहकारी बैंक कार्यरत है ।

2. प्राथमिक सहकारी समितियाँ (Primary Co-operative Societies) – इसकी स्थापना कृषि क्षेत्र की अल्पकालीन ऋणों की आवश्यकता की पूर्ति के लिए की गई है । एक गाँव अथवा क्षेत्र के कोई भी कम से कम दस व्यक्ति मिलकर एक प्राथमिक साख समिति का निर्माण कर सकते हैं । ये समितियाँ **प्राथमिक कृषि साख समितियाँ** (Primary Agriculture Co-operative Societies PACS) भी कहलाती है तथा सामान्यत: यह उत्पादक कार्यों के लिए अल्पकालीन (एक वर्ष के लिए) ऋण देती है, परन्तु विशेष परिस्थिति में इनकी अवधि तीन वर्ष तक के लिए बढ़ाई जा सकती है । राज्य के **दसवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भिक प्रारूप के अनुसार, बिहार में 6842 प्राथमिक सहकारी कृषि साख समितियाँ कार्यरत हैं।**

3. भूमि विकास बैंक (Land Development Bank)- राज्य में किसानों को दीर्घकालीन ऋण प्रदान करने के लिए भूमि बंधक बैंक खोला गया था, जिसे अब भूमि विकास बैंक कहा जाता है। यह किसानों की भूमि को बंधक रखकर कृषि में स्थायी सुधार एवं विकास के लिए दीर्घकालीन ऋण प्रदान करता है । ट्रैक्टर, पावर टीलर, पंपिंग सेट, मकान बनाने या पुराने ऋणों का भुगतान, कृषि में स्थायी सुधार के लिए 15 से 20 वर्षों तक का ऋण भूमि विकास बैंक द्वारा प्राप्त होता है । प्राथमिक इकाई को सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक कहते हैं। राज्य के स्तर पर बिहार राज्य भूमि विकास बैंक कार्यरत हैं जिसे राज्य सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक कहा जाता है ।

4. व्यावसायिक बैंक (Commercial Bank)- देश में बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण की नीति (1968) तथा बाद में उनका राष्ट्रीयकरण (1969) के बाद व्यावसायिक बैंक अधिक मात्रा में किसानों को ऋण प्रदान करने लगे । बिहार राज्य में बैंकों की संख्या एवं उनकी शाखाओं का विस्तार हुआ है तथा उनके द्वारा कृषि क्षेत्र को दिए गए साख या ऋण का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है-

Agency- wise share in total agricultural credit, 2017

कृषि साख में संस्थागत स्त्रोतों की हिस्सेदारी, 2017

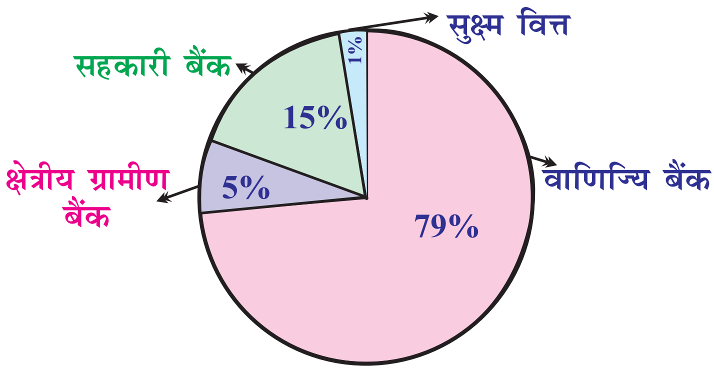

स्त्रोत- भारतीय रिजर्व बैंक एवं स्टेट फोकस पत्र बिहार 2002-03

यद्यपि राज्य में व्यावसायिक बैंकों के द्वारा किसानों को साख की सुविधा प्रदान की जा रही है, लेकिन वह जरूरत के अनुकूल नहीं है । 2000-01 में लक्ष्य का मात्र 44 प्रतिशत ही कृषि साख प्रदान किया गया । बिहार में अनुमानतः 700 करोड़ रुपये से अधिक की कृषि साख की जरूरत है, जबकि उपलब्धता मात्र 548 करोड़ रुपये की ही हुई ।

5. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक (Regional Rural Bank)- सीमान्त एवं छोटे किसानों, कारीगरों तथा अन्य कमजोर वर्ग के जरूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक देश में 1975 ई० में स्थापित किया गया । बिहार राज्य में भी एक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक उसी वर्ष स्थापित किया गया । देश में अभी 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्यरत हैं ।

पिछले कुछ वर्षों में बिहार में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक के द्वारा प्राप्त साख का संक्षिप्त ब्योरा दिया जा रहा है-

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक द्वारा राज्य में उपलब्ध साख

वर्ष	(लाख रुपए में)
मार्च 1992	43276
मार्च 1996	66360
मार्च 2001	107940

स्त्रोत- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अधिनियम 1976 में सुधार हेतु बनी कार्यकारी रिपोर्ट, भारत सरकार, वित्त विभाग, जून 2002

ऊपर के सारणी में दिए गए आँकड़ों से स्पष्ट है कि राज्य में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक जो साख की सुविधा प्रदान कर रहे हैं उसमें वृद्धि हो रही है, फिर भी छोटे एवं सीमांत किसान की जरूरतों को पूरा करने में वे सफल नहीं हुए हैं ।

6. नार्बाड (NABARD)- राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) देश में कृषि तथा ग्रामीण विकास के लिए पुनर्वित (Refinancing) प्रदान करनेवाली शिखर की संस्था है । यह कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए सरकारी संस्थाओं, व्यावसायिक बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को वित्त की सुविधा प्रदान करता है जो पुनः किसानों को यह सुविधा प्रदान करते हैं । बिहार राज्य में नाबार्ड ने 1998-99 से 2000-01 के बीच कुल 539.27 करोड़ रुपए का पुनर्वित सहायता प्रदान किया जिसमें 1998-99 में 172.30 करोड़ रुपए, 1999-2000 में 175.90 करोड़ रुपए तथा 2000-01 में 191.07 करोड़ रुपए दिए गए ।

इसके अतिरिक्त बिहार में किसानों को सरकार के द्वारा भी कुछ विशेष परिस्थितियाँ जैसे– बाढ़, सूखा, भूकम्प इत्यादि प्राकृतिक आपदा के बाद साख की सुविधा प्रदान की जाती है तथा अभी राज्य के सूक्ष्म वित्त (Micro-Financing) के द्वारा छोटे गरीब तबके के लोगों को छोटे पैमाने पर साख की सुविधा प्रदान की जाती है जो बहुत तेजी से बिहार राज्य में फल-फूल रहा है ।

व्यावसायिक बैंक का कार्य (Function of Commercial Bank)

हमारे देश में व्यावसायिक बैंक की प्रधानता है । ये अर्थव्यवस्था के बहुत महत्त्वपूर्ण अंग है । आज के युग में इसका इतना अधिक महत्त्व है कि जब कभी भी हम बैंक शब्द का प्रयोग बगैर किसी विशेषण के करते हैं तो इसका अर्थ सदा 'व्यावसायिक बैंक' से ही होता है । वास्तव में, व्यावसायिक बैंक विभिन्न प्रकार के कार्यों के द्वारा समाज एवं राष्ट्र की सेवा करते हैं ।

व्यावसायिक बैंक के प्रमुख कार्य उल्लेखनीय है–

1. जमा राशि को स्वीकार करना (Accepting Deposits)– व्यावसायिक बैंकों का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य अपने ग्राहकों से जमा के रूप में मुद्रा प्राप्त करना है । समाज में अधिकांश व्यक्ति अथवा संस्था अपनी आय का एक अंश बचाकर रखते हैं। अधिकांश लोग अपनी बचत को चोरी हो जाने के भय से अथवा ब्याज कमाने के उद्देश्य से किसी बैंक में ही जमा करते हैं । बैंक के लिए भी इस प्रकार का जमा विशेष महत्त्वपूर्ण होता है, क्योंकि इसी के आधार पर कर्ज देकर वे अपने लाभ का एक प्रमुख भाग प्राप्त करते हैं ।

व्यावसायिक बैंक के कार्य

1. जमा राशि को स्वीकार करना (Accepting Deposits)
2. ऋण प्रदान करना (Providing Loans)
3. सामान्य उपयोगिता संबंधी कार्य (General Utility Functions) तथा
4. ऐजेंसी संबंधी कार्य (Agency Functions) ।

व्यावसायिक बैंक प्रायः चार प्रकार से जमा राशि स्वीकार करते हैं–

(i) स्थायी जमा (Fixed Deposits)– स्थायी जमा खाते में रुपया एक निश्चित अवधि जैसे 1 वर्ष या इससे अधिक के लिए भी जमा किया जाता है । इस निश्चित अवधि के अंदर साधारणतया यह रकम नहीं निकाली जा सकती है । इस प्रकार के जमा को सावधि जमा (Time Deposits) भी कहा जाता है । इस अवधि के अंदर जमा किए गए राशि पर बैंक आकर्षक ब्याज भी देते हैं ।

(ii) चालू जमा (Current Deposits)– चालू जमा खाते में रुपया जमा करनेवाला अपनी इच्छानुसार रुपया जमा करता है अथवा निकाल सकता है । इसमें किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं रहता । सामान्तया इस प्रकार का जमा व्यापारियों तथा बड़ी-बड़ी संस्थाओं के लिए विशेष सुविधाजनक होता है। इसे माँग जमा (Demand Deposits) भी कहते हैं।

व्यावसायिक बैंक द्वारा स्वीकार किए गए जमा

(i) स्थायी जमा (Fixed Deposits)

(ii) चालू जमा (Current Deposits)

(iii) संचयी जमा (Saving Deposits) तथा

(iv) आवर्ती जमा (Recurring Deposits)

(iii) संचयी जमा (Saving Deposits)– इस प्रकार के खाते में रुपया जमा करनेवाला जब चाहे रुपया जमा कर सकता है, किन्तु रुपया निकालने का अधिकार सीमित रहता है, वह भी एक निश्चित रकम से अधिक नहीं । इसमें चेक की सुविधा भी प्रदान की जाती है।

(iv) आवर्ती जमा (Recurring Deposits)– इस प्रकार के खाते में व्यावसायिक बैंक साधारणतया अपने ग्राहकों से प्रतिमाह एक निश्चित रकम जमा के रूप में एक निश्चित अवधि जैसे 60 माह या 72 माह के लिए ग्रहण करता है और इसके बाद एक निश्चित रकम भी देता है। इसी प्रकार का एक अन्य जमा संचयी समयावधि जमा (Cumulative Time Deposit) भी होता है ।

2. ऋण प्रदान करना (Providing Loans)– व्यावसायिक बैंक का दूसरा मुख्य कार्य लोगों को ऋण प्रदान करना है । बैंक के पास जो रुपया जमा के रूप में आता है, उसमें से एक

निश्चित राशि नकद कोष में रखकर बाकी रुपया बैंक द्वारा दूसरे व्यक्तियों को उधार दे दिया जाता है । ये बैंक प्राय: उत्पादक कार्यों के लिए ऋण देते हैं तथा उचित जमानत (Security) की माँग करते हैं । ऋण की रकम प्राय: जमानत के मूल्य से कम होती है ।

व्यावसायिक बैंक निम्न प्रकार से ऋण प्रदान करते हैं –

(i) अभियाचित एवं अल्पकालिक ऋण (Loans at call and short notice)– इस प्रकार का ऋण अति अल्पकाल यानि एक दिन से लेकर एक सप्ताह तक के लिए या केवल माँगने पर वापस करने के लिए दिया जाता है । मुद्रा बाजार की संस्थाएँ साधारणतया इस प्रकार के ऋण की मांग करती हैं ।

व्यावसायिक बैंकों द्वारा दिए जाने वाले ऋण के प्रकार

(i) अभियाचित एवं अल्पकालिक ऋण (Loans at call and short notice)

(ii) नकद साख (Cash credit)

(iii) अधिविकर्ष (Overdraft)

(iv) विनिमय बिलों को भुनाना (Discounting of Bill of Exchange)

(v) ऋण एवं अग्रिम (Loans and Advances)

(ii) नकद साख (Cash credit)– इस प्रकार की व्यवस्था के अन्तर्गत बैंक अपने ग्राहकों को ऋण पत्र (Bonds), व्यापारिक माल अथवा अन्य स्वीकृत प्रतिभूतियों (Securities) के आधार पर ऋण देते हैं ।

(iii) अधिविकर्ष (Overdraft)– जब कभी भी कोई व्यावसायिक बैंक अपने ग्राहकों को उसके खाते में जमा रकम से अधिक रकम निकालने की सुविधा देता है तो उसे अधिविकर्ष की सुविधा कहते हैं । किन्तु इस अधिक रकम के लिए बैंक अपने ग्राहक से उचित जमानत भी लेता है । साथ ही, इस प्रकार का ऋण पर बैंक सूद भी बहुत अधिक लेता है ।

(iv) विनिमय बिलों को भुनाना (Discounting of Bill of Exchange)– व्यावसायिक बैंक विनिमय बिलों को भुनाकर भी ग्राहकों को ऋण प्रदान करता है । इस प्रकार के ऋण में बैंक बिलों में से कुछ कटौती करके बाकी राशि का भुगतान ऋणी को कर देता है। सामान्यत:

कटौती दर ब्याज दर के समान होती है ।

(v) ऋण एवं अग्रिम (Loans and Advances)– जब ऋण एक पूर्व निश्चित अवधि के लिए दिया जाता है तो उसे ऋण अथवा अग्रिम कहते हैं । इस प्रकार के ऋण के लिए बैंक उचित जमानत लेता है और इस पर ब्याज की दर भी अधिक रहती है ।

3. सामान्य उपयोगिता संबंधी कार्य (General Utility Functions)– इसके अतिरिक्त व्यावसायिक बैंक अन्य बहुत से कार्यों को भी संपन्न करते हैं जिन्हें सामान्य उपयोगिता संबंधी कार्य कहा जाता है। जैसे -

(i) यात्री चेक एवं साख प्रमाण पत्र जारी करना (Traveller's cheque and to issue letters of credit)– ये अपने ग्राहकों के लिए साख-पत्र एवं यात्री चेक भी जारी करते हैं जिसकी सहायता से व्यापारी विदेशों से भी सुगमतापूर्वक माल उधार खरीदते हैं । साख-पत्रों को जारी करके आधुनिक बैंक वस्तुओं तथा सेवाओं के विनिमय एवं आदान-प्रदान में भी सहायता प्रदान करते हैं ।

व्यावसायिक बैंकों द्वारा ग्राहकों को प्रदान की जानेवाली अन्य सेवाएँ

(i) यात्री चेक एवं साख प्रमाण पत्र जारी करना (Traveller's cheque and to issue letters of credit)

(ii) लॉकर की सुविधा (Locker Facilities)

(iii) ATM एवं क्रेडिट कार्ड सुविधा (ATM and Credit Card Facilities)

(iv) व्यापारिक सूचनाएँ एवं आँकड़े एकत्रीकरण (Collecting Business Inform-ations and Statistics)

(ii) लॉकर की सुविधा (Locker Facilities)– बैंक अपने ग्राहकों को लॉकर्स की सुविधा भी प्रदान करता है जिनमें लोग अपने सोने-चाँदी के जेवर तथा अन्य आवश्यक कागज पत्र सुरक्षित रख सकते हैं । इसका वार्षिक किराया बहुत कम होता है ।

(iii) ATM एवं क्रेडिट कार्ड सुविधा (ATM and Credit Card Facilities)– आधुनिक समय में बैंक अपने खाता धारकों को 24 घंटे धन निकालने की सुविधा के रूप में ATM सेवा दे रहे हैं । साथ ही क्रेडिट कार्ड की सुविधा प्रदान होने से ग्राहक विश्व में एक

निश्चित राशि तक खरिदारी करके कार्ड द्वारा भुगतान कर सकता है ।

(iv) **व्यापारिक सूचनाएँ एवं आँकड़े एकत्रीकरण** (Collecting Business Informations and Statistics)– बैंक आर्थिक स्थिति से परिचित होने के कारण व्यापार संबंधी सूचनाएँ एवं आँकड़े एकत्रित करके अपने ग्राहकों को वित्तीय मामलों पर सलाह देते हैं ।

4. **एजेंसी संबंधी कार्य** (Agency Functions)– वर्तमान समय में व्यावसायिक बैंक ग्राहकों की एजेंसी के रूप में सेवा करते हैं । इसके अन्तर्गत बैंक (a) चेक, बिल व ड्राफ्ट का संकलन, (b) ब्याज तथा लाभांश का संकलन तथा वितरण, (c) ब्याज, ऋण की किस्त, बीमे की किस्त का भुगतान, (d) प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय तथा (e) ड्राफ्ट तथा डाक द्वारा कोष का हस्तांतरण आदि क्रियाएँ करती हैं ।

सहकारिता और राज्य के विकास में भूमिका

सहकारिता (Co-operation)

पिछली शताब्दी के प्रारंभ से ही विश्व में निर्बल एवं निर्धन वर्ग के उत्थान के लिए सहकारिता का प्रचार तथा प्रसार प्रारंभ हुआ। सहकारिता का अर्थ है "एक साथ मिल-जुलकर कार्य करना" लेकिन, अर्थशास्त्र में इस शब्द का प्रयोग अधिक व्यापक अर्थ में किया जाता है, "सहकारिता वह संगठन है जिसके द्वारा दो या दो से अधिक व्यक्ति स्वेच्छापूर्वक मिल-जुलकर समान स्तरपर आर्थिक हितों की वृद्धि करते हैं । इस प्रकार सहकारिता उस आर्थिक व्यवस्था को कहते हैं जिसमें मनुष्य किसी आर्थिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए मिल-जुलकर कार्य करते हैं। सहकारिता का सिद्धांत यह भी बतलाता है कि विपन्न एवं शक्तिहीन व्यक्ति एक-दूसरे के साथ मिलकर व्यापारिक सहयोग के द्वारा ऐसे भौतिक लाभ अथवा सुख प्राप्त कर सके जो धनी और शक्ति-सम्पन्न व्यक्तियों को उपलब्ध हो और जिससे उनका नैतिक विकास हो। सहकारिता के द्वारा जीवन के ऐसे उच्च एवं अधिक समुन्नत स्तर की वास्तविक सिद्धि की आशा की जाती है जिसमें श्रेष्ठतम कृषि तथा समृद्ध जीवन संभव हो सके । अंततः इसका सिद्धांत **"सब प्रत्येक के लिए और प्रत्येक सबके लिए है।" (All for each and each for all)**।

मूलभूत-तत्त्व

इसके मुख्यतः तीन आधारभूत सिद्धांत हैं । एक तो यह कि यहाँ संगठन की सदस्यता

स्वैच्छिक होती है । लोग अपनी इच्छा से सहकारी संगठन के सदस्य बनते हैं । उनपर कोई बाहरी बंधन या दबाव नहीं होता ।

दूसरा, इसका प्रबंध व संचालन जनतंत्रात्मक आधार पर होता है । इसके सदस्यों के बीच पूँजी, हैसियत अथवा किसी अन्य आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जाता । वे एक-दूसरे के बराबर समझे जाते हैं और सबको एक जैसे अधिकार व अवसर प्राप्त होते हैं ।

तीसरा, इसके आर्थिक उद्देश्यों में नैतिक और सामाजिक तत्त्व भी शामिल रहते हैं । यह केवल आर्थिक लाभ कमाने के लिए ही नहीं, बल्कि नैतिक और सामाजिक पहलू से भी सदस्यों के हितलाभ के लिए कार्य करता है । इसका ध्येय दूसरों को लूट-खसोट करके धनवान बनाना नहीं है बल्कि आत्म-सहायता और पारस्परिक सहयोग द्वारा व्यक्ति और समूह के लाभ एवं सुख-समृद्धि को बढ़ाना है ।

भारत में सहकारिता का विकास

भारत में पिछली शताब्दी के प्रारम्भ में ही निर्धन तथा कमजोर वर्ग के लोगों के उत्थान एवं किसानों को सस्ती दर पर ऋण उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सहकारी समितियों की स्थापना पर जोर दिया जाने लगा । इसके लिए सर्वप्रथम 1904 ई० में एक **''सहकारिता साख समिति विधान''** पारित हुआ। जिसके अनुसार गाँव या नगर में कोई भी **दस व्यक्ति** मिलकर **सहकारी साख समिति** की स्थापना कर सकते थे ।

1904 के अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित होनेवाली सहकारी समितियों की कार्यप्रणाली में सुधार लाने तथा इसके क्षेत्र को विस्तृत रूप देने के लिए 1912 ई० में एक और अधिनियम बनाया गया । इस नए अधिनियम में ऋण के अतिरिक्त, अन्य उद्देश्यों के लिए सहकारी समितियाँ स्थापित करने एवं प्राथमिक समितियों की देखभाल के लिए केन्द्रीय संगठनों की स्थापना की व्यवस्था की गई । पुनः इसकी प्रगति की समीक्षा एवं इसके भावी विकास की रूपरेखा निर्धारित करने के उद्देश्य से **1914 ई0 में मेक्लेगन समिति** नियुक्त की गई । 1919 ई० के राजनीतिक सुधारों के अनुसार **सहकारिता प्रांतीय सरकारों का हस्तांतरित विषय** (Provincial Transferred Subject) बन गई । अतएव, इसके संचालन का भार अब राज्य सरकारों के हाथ में आ गया।

1929 ई० की महान आर्थिक मंदी ने इसके विकास पर विराम लगा दिया । लेकिन, 1935 ई० में हमारे भारत में रिर्जव बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना हुई । इसके अन्तर्गत एक कृषि साख विभाग (Agricultural Credit Department) का संगठन किया गया जिसका कार्य कृषि विकास के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करना एवं अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव भी प्रदान करने थे।

सहकारी बैंक

1. प्राथमिकी सहकारी समितियाँ
2. राज्य सहकारी बैंक
3. केन्द्रीय सहकारी बैंक

सहकारिता समितियों के वित्तीय आवश्यकता की पूत्ति सहकारी बैंक के द्वारा होता है । जो हमारे देश में तीन स्तर पर काम करते हैं । जिसे उक्त बॉक्स में दर्शाया गया है –

राज्य के विकास में भूमिका

बिहार भारत का एक पिछड़ा राज्य है । एकीकृत बिहार (झारखंड सहित) के समय इसके आर्थिक संसाधन अत्यधिक थे । परंतु राज्य बँटवारा के बाद यह सारी सम्पदा आज के बिहार से अलग हो गया । वह सारा भू-खंड जहाँ प्राकृतिक संपदाएँ केन्द्रित थी, वह राज्य बँटवारे के बाद झारखंड के पास चला गया । फलस्वरूप शेष बचे बिहार में कृषि-भूमि ही एक मात्र मूल साधन है । जिसपर बिहार की कुल जनसंख्या का 80 प्रतिशत आबादी निर्भर करता है । यहाँ की खेती भी मानसून पर आधारित है। सामान्यत: खेती में निवेश एक जुआ के समान माना जाता है । चूँकि खेती बिहारवासियों के जीविका का आधार है इसलिए आर्थिक तंगी के बावजूद भी बिहारी कृषक एवं मजदूर कृषि पर धन लगाने के लिए विवश है ।

बिहार में विशेषकर ग्रामीण स्तर पर धनकुट्टी, अगरबत्ती, बीड़ी निर्माण, जूता और ईंट बनाने जैसे महत्त्वपूर्ण रोजगार सहकारिता के सहयोग से चलायी जा रही है । इसके लिए राज्य स्तरीय सहकारी बैंक ऋण मुहैया कराती है । इस सहकारी बैंक से रोजगार में बढ़ावा ग्रामीण स्तर पर काफी हद तक किया जा रहा है । जहाँ भी इस तरह के रोजगार चलाये जा रहे हैं वहाँ की जनता पर अनुकूल आर्थिक प्रभाव देखने को मिल रहा है । फलस्वरूप व्यक्ति की आय धीरे-धीरे बढ़ रही है और लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा उठ रहा है ।

स्वयं-सहायता-समूह (Self-Help-Group)

गाँव, कस्बा और जिला के विकास में इसकी भूमिका

पिछले खण्ड में हमने देखा कि हमारे देश के निर्धन परिवार ऋण के लिए अभी भी ज्यादातर गैर-संस्थागत (Non-Institutional) स्रोतों पर निर्भर है । इसका एक तो यह भी कारण है कि भारत के कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में बैंक की सुविधा अभी भी नहीं है । तथा दूसरी ओर गैर-संस्थागत ऋणदाता जैसे – महाजन, सेठ साहुकार इत्यादि इन कर्जदारों को व्यक्तिगत स्तर पर जानते हैं और इस कारण अक्सर बिना ऋणाधार के भी ऋण देने के लिए तैयार हो जाते हैं। लेकिन ये महाजन ब्याज की दरें बहुत ऊँची रखते हैं । लेन-देन की लिखा-पढ़ी भी पूरी नहीं करते और निर्धन कर्जदारों को तंग करके उनका शोषण करने में कोई कसर नहीं छोड़ते ।

हाल के वर्षों में लोगों ने गरीबों को उधार देने के कुछ नए तरीके अपनाने की कोशिश की है । इनमें से एक विचार ग्रामीण क्षेत्र के गरीबों विशेषकर महिलाओं को छोटे-छोटे स्वयं-सहायता-समूहों में संगठित करने और उनकी बचत पूँजी को एकत्रित करने पर आधारित है ।

स्वयं-सहायता-समूह एक समान सामाजिक, आर्थिक स्तर के आस-पड़ोस के लोगों का एक ऐसा स्वैच्छिक और संस्थाई समूह है जो नियमबद्ध तरीके से संचालित हो आपसी सहयोग व संसाधनों से विकास के लिए प्रयासरत हो । जिससे जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके तथा वे अपने जीवन पर बेहतर नियंत्रण कर सके ।

स्वयं-सहायता समूह (Self Help Group)

स्वयं-सहायता- समूह वास्तव में ग्रामीण क्षेत्र में 15-20 व्यक्तियों (खासकर महिलाओं) का एक अनौपचारिक समूह होता है जो अपनी बचत तथा बैंकों से लघु ऋण लेकर अपने सदस्यों के पारिवारिक जरूरतों को पूरा करते हैं और विकास गतिविधियाँ चलाकर गाँवों का विकास और महिला सशक्तिकरण में योगदान करते हैं ।

इसे दिए गए चित्र संख्या 4.1 के माध्यम से आसानी पूर्वक समझा जा सकता है–

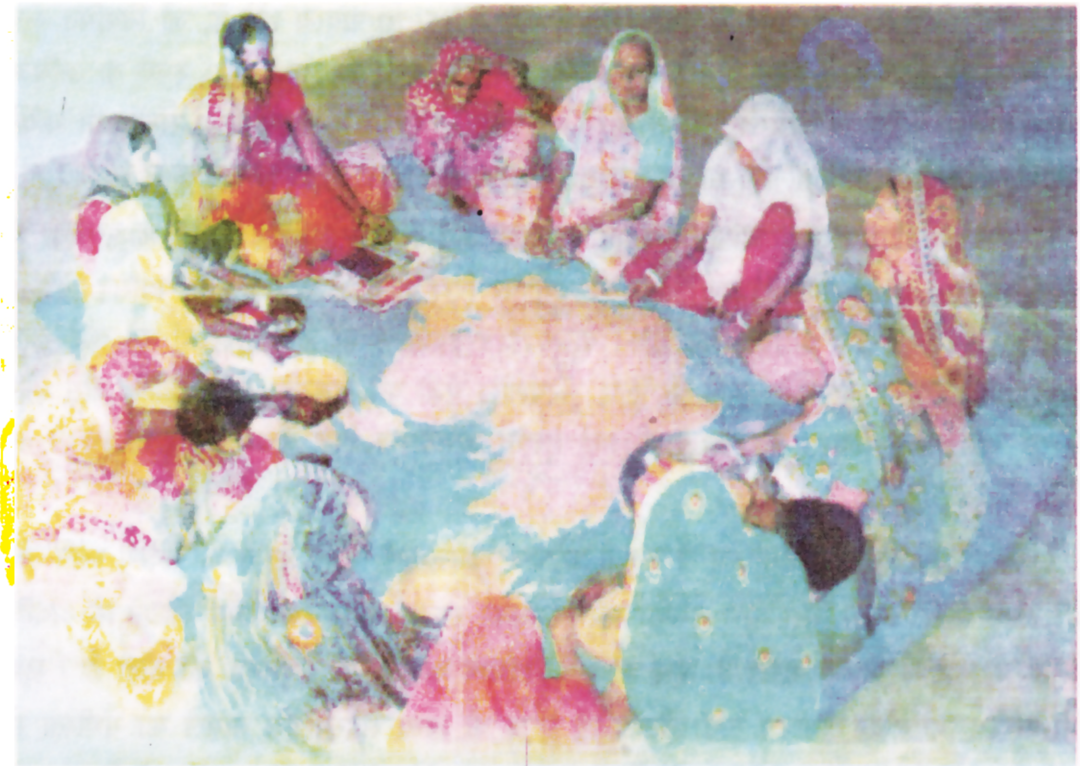

चित्र 4.1 : स्वयं सहायता समूह

ऐतिहासिक-पृष्ठभूमि

भारत में सर्वप्रथम इसकी शुरुआत व विकास कुछ स्वयंसेवी संगठनों ने ग्रामीण क्षेत्रों के व्यक्तियों को संगठित करके आय संबंधित गतिविधियों के संचालन के लिए 1980 के दशक के अंत में की । परन्तु 1990 के दशक की शुरुआत में **राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक** (NABARD) की पहल व विशेष रुचि लेने से स्वयं-सहायता-समूह पूरे देश में फैल गए। अब तो सभी सरकारी एवं गैर-सरकारी बैंक व आर्थिक व सामाजिक संगठन इसकी महत्ता को स्वीकार कर इसके विकास को प्रोत्साहित कर रहे हैं । पीढ़ी दर पीढ़ी गरीबी का दंश झेल रहे परिवारों को गरीबी से निजात दिलाने के लिए स्वयं सहायता समूह एक नयी आशा की किरण लेकर आया है ।

भूमिका

एक स्वयं सहायता समूह में एक-दूसरे के पड़ोसी 15-20 सदस्य होते हैं, जो नियमित रूप से मिलते हैं और बचत करते हैं । प्रति-व्यक्ति बचत 25 रुपए से लेकर 100 रुपए या अधिक हो सकते हैं । यह परिवारों की बचत करने की क्षमता पर निर्भर करता है । समूह इन कर्जों पर ब्याज लेता है लेकिन यह साहुकार द्वारा लिए जानेवाले ब्याज से कम होता है ।

एक या दो वर्षों के बाद अगर समूह नियमित रूप से बचत करता है, तो समूह बैंक से ऋण के योग्य हो जाता है । ऋण समूह के नाम पर दिया जाता है और इसका मकसद सदस्यों के लिए स्वरोजगार के अवसरों का सृजन करना है । उदाहरण के लिए, सदस्यों को छोटे-छोटे कर्ज अपनी गिरवी जमीन छुड़वाने के लिए, कार्यशील पूँजी की जरूरतें (बीज, खाद, बाँस और कपड़े खरीदने के लिए), घर बनाने, सिलाई मशीन, हथकरघा, पशु इत्यादि संपत्ति खरीदने के लिए दिए जाते हैं ।

बचत और ऋण गतिविधियों से संबंधी ज्यादातर महत्त्वपूर्ण निर्णय समूह के सदस्य स्वयं लेते हैं। समूह में दिए जाने वाले ऋण उसका लक्ष्य, उसकी रकम, ब्याज दर, वापस लौटाने के अवधि आदि के बारे में निर्णय करता है। इस ऋण को लौटाने की जिम्मेदारी समूह की होती है । एक भी सदस्य अगर ऋण वापस नहीं लौटाता तो समूह के अन्य सदस्य इस मामले को गंभीरता से लेते हैं। इसी कारण, बैंक निर्धन वर्ग के लोगों को ऋण देने के लिए तैयार हो जाते हैं, जब वे अपने को स्वयं सहायता समूहों में संगठित कर लेते हैं, यद्यपि उनके पास कोई ऋणाधार नहीं होता।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वयं सहायता समूह कर्जदारों को ऋणाधार की कमी की समस्या से उबारने में मदद करते हैं। उन्हें समयानुसार विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं के लिए एक उचित ब्याज दर पर ऋण मिल जाता है। इसके अतिरिक्त यह समूह गाँव, कस्बा और

स्वयं-सहायता समूह एवं सूक्ष्मवित योजना

सूक्ष्मवित्त योजना के द्वारा गाँव, कस्बा और जिला में गरीब परिवारों को स्वयं सहायता समूह से जोड़कर ऋण मुहैया कराया जाता है । इससे छोटे पैमाने पर साख अथवा ऋण की सुविधा प्रदान होती है ।

जिला के ग्रामीण क्षेत्रों के गरीबों को संगठित करने में मदद करते हैं । इससे न केवल महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वालम्बी हो जाती हैं, बल्कि समूह की नियमित बैठकों के जरिए लोगों को एक आम मंच मिलता है । जहाँ वह तरह-तरह के सामाजिक विषयों जैसे- स्वास्थ्य, पोषण और घरेलू हिंसा इत्यादि पर आपस में चर्चा कर पाती है ।

स्वयं-सहायता-समूह (Self-Help-Group) स्वयं-सहायता समूह को एक कहानी के माध्यम से भी समझा जा सकता है । नवादा जिला बिहार का एक अति पिछड़ा जिला है। इस जिला के अन्तर्गत गोबिंदपुर एक प्रखंड है जिसके चारों ओर प्राकृतिक छटाएँ अति ही रमणीय है । इस गाँव में एक पहाड़ी नदी भी है । जिसका नाम सकरी नदी है । इस नदी के किनारे एक छोटा-सा गाँव "दर्शन" है । इस गाँव की मिट्टी का कटाव प्रतिवर्ष बाढ़ के कारण होता जा रहा है । यहाँ के लोगों की मुख्य पेशा कृषि मजदूरी है । खेती-बारी के बाद बचे हुए समय में यहाँ के लोग मजदूरी के लिए इधर-उधर भटकते हैं। इस गाँव की 20 महिलाओं ने एक समूह का निर्माण किया। समूह बनाने के बाद सभी महिलाओं ने प्रखंड से संपर्क कर पंजाब नेशनल बैंक से 15000/- रुपये का ऋण प्राप्त कर गाँव में ही सभी ने मिलकर टोकरी बनाने का कार्य प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार इस समूह के सहयोग से यह उद्योग चल पड़ा । प्रारंभ में समूह के द्वारा निर्मित टोकरी से लगभग 6000/- (छः हजार) रुपये का लाभ हुआ । इन रुपयों को सभी महिलाओं ने अपने-अपने नाम से बैंक में खाता खोलवाकर बराबर-बराबर मुनाफा आपस में बाँट लिया, फलस्वरूप 300/- (तीन सौ) रुपये प्रत्येक महिलाओं को आमदनी हुई । अब ये सारी महिलाएँ स्वरोजगार के द्वारा स्वयं सहायता समूह निर्माण कर अपनी आर्थिक दशा सुधारने लगीं । आज समूह इस प्रखण्ड का अग्रणी स्वयं सहायता समूह (Self Helf-Group) है और प्रखण्ड स्तर पर काफी नाम कमा रहा है ।

इस कहानी को चित्र संख्या 4.2 के माध्यम से आसानी से समझा जा सकता है-

चित्र 4.2 : स्वयं सहायता समूह के द्वारा टोकरी निर्माण करती महिलाएँ

उपरोक्त चित्र संख्या 4.2 में स्वयं सहायता समूह के माध्यम से टोकरी बनाती हुई महिलाओं को दिखाया गया है ।

सारांश

- साख अथवा ऋण की आवश्यकता की पूर्ति वित्तीय संस्थानों के द्वारा संपन्न होती है और ये वित्तीय संस्थाएँ सरकार द्वारा स्थापित एवं संचालित होती हैं अथवा लोगों के सहयोग एवं सहभागिता से भी स्थापित होती हैं जिन्हें सरकारी अथवा अर्द्धसरकारी वित्तीय संस्थान कहते हैं ।
- **वित्तीय संस्थाएँ-** जो आर्थिक विकास के लिए उद्यम और व्यवसाय की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करता है, ऐसी संस्थाओं को वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं ।

- **वित्तीय संस्थाएँ के प्रकार**– वित्तीय संस्थाएँ दो प्रकार की होती है– (क) राष्ट्र स्तरीय (ख) राज्य स्तरीय वित्तीय संस्थान।
- **राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ**– जो देश के लिए वित्तीय और साख नीतियों का निर्धारण एवं निर्देशन करती है तथा राष्ट्रीय स्तर पर वित्त प्रबंधन के कार्यों का संपादन करती है उसे राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाएँ कहते हैं ।
- **इसके दो महत्त्वपूर्ण अंग होते हैं**– (क) भारतीय मुद्रा बाजार (ख) भारतीय पूँजी बाजार ऐसे मौद्रिक बाजार जिसके द्वारा अल्पकालीन एवं मध्यकालीन वित्तीय व्यवस्था एवं प्रबंधन किया जाता है उसे भारतीय मुद्रा बाजार तथा जिसके द्वारा दीर्घकालीन वित्तीय व्यवस्था एवं प्रबंधन किया जाता है उसे भारतीय पूँजी बाजार कहा जाता है ।
- भारतीय मुद्रा बाजार को संगठित और असंगठित क्षेत्र के रूप में तथा भारतीय पूँजी बाजार को प्रतिभूति बाजार, औद्योगिक बाजार, विकास वित्त संस्थान तथा गैर बैंकिंग वित्त कंपनियों के रूप में बाँटा जाता है ।
- **राज्य स्तरीय वित्तीय संस्थाएँ**– इसके दो महत्त्वपूर्ण अंग हैं– (क) गैर-संस्थागत (ख) संस्थागत वित्तीय स्रोत।
- **व्यावसायिक बैंक**– इसके चार महत्त्वपूर्ण कार्य हैं– (क) जमा राशि को स्वीकार करना, (ख) ऋण प्रदान करना, (ग) सामान्य उपयोगिता संबंधी कार्य तथा (घ) एजेंसी संबंधी कार्य।
- **सहकारिता**– सहकारिता एक ऐसा संगठन है जिसमें सामान्य आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए लोग स्वेच्छापूर्वक मिलजुल कर कार्य करते हैं ।
- **स्वयं सहायता समूह**– यह ग्रामीण क्षेत्र में 15-20 व्यक्तियों का एक समूह है जो बैंकों से लघु ऋण लेकर पारिवारिक जरूरतों को पूरा करते हैं एवं गाँवों के विकास में अपना योगदान देते हैं ।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. **गैर-संस्थागत वित्त प्रदान करने वाला सबसे लोकप्रिय साधन है-**

   (क) देशी बैंकर (ख) महाजन (ग) व्यापारी (घ) सहकारी बैंक

2. **इनमें से कौन संस्थागत वित्त का साधन है-**

   (क) सेठ-साहुकार (ख) रिश्तेदार (ग) व्यावसायिक बैंक (घ) महाजन

3. **भारत के केन्द्रीय बैंक कौन है?**

   (क) रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया (ख) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

   (ग) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया (घ) पंजाब नेशनल बैंक

4. **राज्य में कार्यरत केन्द्रीय सहकारी बैंक की संख्या कितनी है।**

   (क) 50 (ख) 75 (ग) 35 (घ) 25

5. **दीर्घकालीन ऋण प्रदान करनेवाली संस्था कौन सी है।**

   (क) कृषक महाजन (ख) भूमि विकास बैंक

   (ग) प्राथमिक कृषि साख समिति (घ) इनमें कोई नहीं

6. **भारत की वित्तीय राजधानी (Financial Capital) किस शहर को कहा गया है।**

   (क) मुंबई (ख) दिल्ली (ग) पटना (घ) बंगलोर

7. **सहकारिता प्रांतीय सरकारों का हस्तांतरित विषय कब बनी।**

   (क) 1929 ई० (ख) 1919 ई० (ग) 1918 ई० (घ) 1914 ई०

8. **देश में अभी कार्यरत क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की संख्या है।**

   (क) 190 (ख) 192 (ग) 199 (घ) 196

9. **व्यावसायिक बैंक का राष्ट्रीयकरण कब किया गया।**

   (क) 1966 ई० (ख) 1980 ई० (ग) 1969 ई० (घ) 1975 ई०

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।

1. साख अथवा ऋण की आवश्यकताओं की पूर्ति .... संस्थानों के द्वारा की जाती है ।
2. ग्रामीण क्षेत्र में साहुकार द्वारा प्राप्त ऋण की प्रतिशत मात्रा .... है।

3. प्राथमिक कृषि साख समिति कृषकों को .... ऋण प्रदान करती है ।
4. भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना .... में हुई ।
5. वित्तीय संस्थाएँ किसी भी देश का .... माना जाता है ।
6. स्वयं सहायता समूह में लगभग .... सदस्य होते हैं ।
7. SHG में बचत और ऋण संबंधित अधिकार निर्णय .... लेते हैं ।
8. व्यावसायिक बैंक .... प्रकार की जमा राशि को स्वीकार करते हैं ।
9. भारतीय पूँजी बाजार .... वित्तीय सहायता प्रदान करती है ।
10. सूक्ष्म वित्त योजना के द्वारा .... पैमाने पर साख अथवा ऋण की सुविधा उपलब्ध होता है ।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short- Answer Questions) (लगभग 20 शब्दों में उत्तर दें)

1. वित्तीय संस्थान से आप क्या समझते हैं ।
2. राज्य की वित्तीय संस्थान को कितने भागों में बाँटा जाता है, संक्षिप्त वर्णन करें ।
3. किसानों को साख अथवा ऋण की आवश्यकता क्यों होती है ।
4. व्यावसायिक बैंक कितने प्रकार की जमा राशि को स्वीकार करते हैं ? संक्षिप्त विवरण करें।
5. सहकारिता से आप क्या समझते हैं ?
6. स्वयं सहायता समूह (Self Help Group) से आप क्या समझते हैं ?
7. भारत में सहकारिता की शुरुआत किस प्रकार हुई । संक्षिप्त वर्णन करें ।
8. सूक्ष्म वित्त योजना को परिभाषित करें ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long- Answer Questions) (लगभग 100 शब्दों में उत्तर दें)

1. राष्ट्रीय वित्तीय संस्थान किसे कहते हैं ? इसे कितने भागों में बाँटा जाता है ? वर्णन करें।
2. राज्य स्तरीय संस्थागत वित्तीय स्रोत के कार्यों का वर्णन करें ?
3. व्यावसायिक बैंक के प्रमुख कार्यों की विवेचना करें ?
4. सहकारिता के मूल तत्त्व क्या है ? राज्य के विकास में इसकी भूमिका का वर्णन करें।

5. स्वयं सहायता समूह में महिलाएँ किस प्रकार अपनी अहम् भूमिका निभाती है ? वर्णन करें।

अतिरिक्त परियोजना/कार्यकलाप

नीचे दी गई प्रश्नावली के अनुरूप अपने आस-पड़ोस के किसी भी बैंक में जाकर वहाँ इस बात का सर्वेक्षण करें कि किस वर्ग समूह को कितने ऋण की आवश्यकता थी, उन्हें ऋण उपलब्ध कराया गया अथवा नहीं, यदि ऋण उपलब्ध कराया गया तो ऋण की कितनी राशि मिली और कितने दिनों में ऋण उपलब्ध कराया गया। यदि नहीं तो उसके कारण की चर्चा करें। परियोजना कार्यक्रम का निम्नलिखित चार बिन्दुओं को दिखाएँ–

1. बैंक का नाम ....
2. ऋण आवेदक की पृष्ठभूमि ....
3. ऋण की राशि जो माँगी/जो दी गई ....
4. ऋण उपलब्ध कराने की अवधि ....

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

I. 1. (ख) 2. (ग) 3. (क) 4. (घ) 5. (ख)
6. (क) 7. (ख) 8. (घ) 9. (ग)

II. 1. वित्तीय 2. 30 प्रतिशत 3. अल्पकालीन 4. 1935 ई०
5. मेरूदंड (Back-Bone) 6. 15-20 7. समूह के सदस्य 8. चार
9. दीर्घकालीन 10. छोटे या लघु

*

इकाई- 5

रोजगार एवं सेवाएँ

सेवा क्षेत्र में रोजगार का महत्त्व काफी अधिक है । रोजगार से हमारा अभिप्राय देश के मानव संसाधन को ऐसे कार्यों में लगाना है जिससे देश की उत्पादकता बढ़ सके और सामान्य जन मानस के लिए उसकी न्यूनतम आवश्यकतायें रोटी, कपड़ा और मकान प्राप्त हो सके । विश्व के प्रत्येक देश के सरकार का प्रथम प्रयास यह होता है कि वहाँ के उपलब्ध मानव संसाधन को उनकी दक्षता के आधार पर काम उपलब्ध कराया जा सके । ऐसे लोग जो काम करने के लायक होते हैं और जिन्हें उचित पारिश्रमिक पर काम नहीं मिलता, उन्हें बेरोजगार कहा जाता है । देश के ऐसे लोग जो स्वेच्छा से काम करना नहीं चाहते उन्हें बेरोजगार नहीं कहा जाना चाहिए उचित पारिश्रमिक पर सक्षम रूप से काम करने वालों को यदि काम न मिले तो उसे बेरोजगार कहते हैं। भारत में योजनात्मक विकास के क्रम में सेवा क्षेत्र का पर्याप्त विस्तार हुआ है जिसके कारण बेरोजगारी में कमी आई है । सेवा क्षेत्र से हमारा तात्पर्य ऐसे क्षेत्र से है जहाँ शारीरिक शक्ति, कार्यक्षमता और दक्षता के आधार पर रोजगार उपलब्ध कराया जाय । भारत में कृषि लोगों को रोजगार उपलब्ध कराने का सर्वाधिक बड़ा क्षेत्र है, इसके साथ-ही-साथ उद्योग व्यवसाय, स्वास्थ्य, यातायात आदि ऐसे क्षेत्र जिससे लोगों को विभिन्न प्रकार की सेवाएँ मिलती हैं ।

रोजगार एवं सेवाएँ

"रोजगार एवं सेवाएँ" का अभिप्राय यहाँ पर इन बातों से है जब व्यक्ति अपने परिश्रम एवं शिक्षा के आधार पर जीवकोपार्जन के लिए धन एकत्रित करता है । एकत्रित धन को जब पूँजी के रूप में व्यवहार किया जाता है और उत्पादन के क्षेत्र में निवेश किया जाता है तो सेवा क्षेत्र उत्पन्न होता है । अत: रोजगार एवं सेवाएँ एक दूसरे के पूरक हैं । अर्थात् रोजगार वृद्धि से सेवा क्षेत्र का भी विस्तार होता है ।

आर्थिक विकास का क्षेत्र

रोजगार एवं सेवाएँ आर्थिक क्रियाओं के विकास और विस्तार से उपलब्ध होती है । इसलिए कहा जाता है कि आर्थिक प्रगति के कारण देश के विकास के साथ सेवा क्षेत्र का विस्तार होता है जिसके फलस्वरूप लोगों के लिए रोजगार के नये-नये अवसर उपलब्ध होने लगते हैं ।

आर्थिक विकास के मुख्य रूप से तीन क्षेत्र हैं- (क) कृषि क्षेत्र (Agriculture Sector) (ख) उद्योग क्षेत्र (Industrial Sector) तथा (ग) सेवा क्षेत्र (Service Sector) ।

आर्थिक विकास के क्षेत्र

(क) कृषि क्षेत्र (Agriculture Sector)

(ख) उद्योग क्षेत्र (Industrial Sector) तथा

(ग) सेवा क्षेत्र (Service Sector)

(क) कृषि क्षेत्र (Agriculture Sector)-भारत एक कृषि प्रधान देश है। कृषि क्षेत्र पर कुल जनसंख्या का लगभग 67 प्रतिशत बोझ है। अत्यधिक जनसंख्या के कारण कृषि क्षेत्र में रोजगार के अवसर क्षीण हो गया है। फलस्वरूप कृषि क्षेत्र में 'छिपी हुई बेराजगारी' एवं अन्य बेरोजगारी पाए जाने लगे हैं। जनसंख्या वृद्धि के साथ खेती-बारी के लिए जमीन में वृद्धि नहीं हो पा रहा है और एक ही भूखण्ड पर आनेवाली नई पीढ़ी भी जुटती चली जा रही है जिससे उत्पादन की मात्रा प्रति व्यक्ति पर घटती चली जा रही है।

(ख) उद्योग क्षेत्र (Industrial Sector)- रोजगार का दूसरा क्षेत्र 'उद्योग क्षेत्र' है । इस क्षेत्र के माध्यम से भी रोजगार की प्राप्ति की जा रही है । देश की औद्योगिक विकास की गति में तेजी आने के द्वारा ही औद्योगिक क्षेत्र में रोजगार की वृद्धि होती है ।

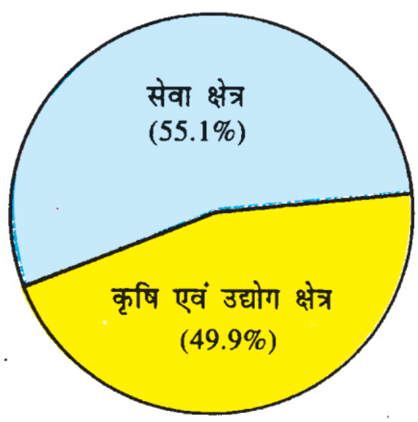

(ग) सेवा क्षेत्र (Service Sector)- आर्थिक उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के कारण सेवा क्षेत्र में अभूतपूर्व प्रगति देखने को मिलती है । सेवा क्षेत्र रोजगार

का एक व्यापक क्षेत्र है जिसके अंतर्गत आये दिन मानव संसाधन के लिए व्यापक पैमाने पर रोजगार उपलब्ध होने लगे हैं । वर्तमान समय में सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) में सेवा क्षेत्र का योगदान 50 प्रतिशत से भी ज्यादा हो गया है । आर्थिक समीक्षा 2006-07 और केन्द्रीय बजट 2007-08 के अनुसार सेवा क्षेत्र का यह योगदान 68.6 प्रतिशत हो गया है । 2006-07 में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के योगदान का हिस्सा घटकर 18.5 प्रतिशत उद्योग का हिस्सा बढ़कर 26.4 प्रतिशत तथा सेवा क्षेत्र का 55.1 प्रतिशत हो गया है।

उपरोक्त आँकड़े इस बात का संकेत देता है कि अब हमारे देश में विकास की गति में तेजी आने लगी है ।

सेवा क्षेत्र की भूमिका

विश्व के विकसित देशों की तुलना में अर्द्धविकसित और विकासशील देशों में गरीब बेराजगारों की संख्या अत्यधिक है । कहा तो यह जाता है कि विश्व की संख्या का दो-तिहाई भू-भाग गरीबी और विपन्नता से ग्रस्त है । अर्द्धविकसित और विकासशील देशों में जनसंख्या का आधिक्य होता है तथा वहाँ उत्पादन के अन्य साधन पूर्णत: उपलब्ध नहीं होते हैं जिसके कारण वहाँ बेराजगारी की समस्या उत्पन्न होती है । सेवा क्षेत्र के विकास से अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध होते हैं । सेवा क्षेत्र के विकास के लिए मनुष्य को शिक्षित करना नितांत आवश्यक है । जिस देश या राज्य की मानव पूँजी जितनी ही समृद्ध होती है उस देश या राज्य का आर्थिक विकास उतना ही तीव्र गति से होता है । समृद्ध मानव पूँजी एक सशक्त श्रम शक्ति को जन्म देती है जिसके कारण लोग रोजगार पाने में सक्षम हो पाते हैं तब लोग हीन भावना से ऊपर उठकर देश व राज्य के हित में काम करना प्रारंभ करते हैं जिससे विकास की स्थिति पैदा होती है ।

यह कहना अप्रसाँगिक नहीं होगा कि विश्व के सर्वाधिक विकसित देश जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका और इंगलैंड के सेवा क्षेत्र के विस्तार में भारतीय मूल के दक्ष मानव संसाधन की प्रमुख भूमिका नहीं है । यदि भारत में भी उच्च कोटी के उत्पादन क्षेत्रों को कारगर किया जाए तो यहाँ के उपलब्ध मानवीय संसाधानों के द्वारा आर्थिक विकास की गति को और अधिक तेज किया जा सकता है । कहा तो यह भी जाता है कि भारत के मानवीय संसाधन विश्व के ''सर्वश्रेष्ठ

मानवीय संसाधनों'' में आते हैं।

बिहार देश का एक पिछड़ा राज्य है जो वर्षों तक गरीबी और बेराजगारी का केन्द्र रहा है। देश के अन्य राज्य जैसे-ओडिशा, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश ऐसे राज्य हैं जहाँ की अर्थव्यवस्था विकास की ओर तेजी से उन्मुख नहीं हो सकी है। विगत कुछ वर्षों में बिहार में आर्थिक प्रगति दिखने लगी है। जैसे-सड़क का विस्तार एवं स्वास्थ्य सेवाओं का प्रसार। पिछले दिनों बाढ़ की विभीषिका और सूखे के कारण जो विपरीत परिस्थिति आई है उससे बिहार के विकास कार्य को एक बड़ा झटका लगा है फिर भी दूर संचार सेवाएँ, यातायात सेवाएँ, चिकित्सा सेवाएँ, शिक्षा सेवाएँ, ब्यूटी पॉर्लर की सेवाएँ, स्वरोजगार की सेवाएँ इत्यादि के व्यापक प्रसार के कारण बिहार में सेवा क्षेत्र का पर्याप्त विस्तार हुआ है। राज्य स्तर पर सेवा क्षेत्र की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। सरकारी एवं गैर सरकारी दोनों ही स्तर पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा है जिससे काफी लोग लाभांवित हुए हैं और हो रहे हैं।

सेवा क्षेत्र का भाग

सेवा क्षेत्र को सामान्यत: दो भागों में विभक्त किया जाता है- (क) सरकारी सेवा (ख) गैर सरकारी सेवा ।

(क) सरकारी सेवा- जब देश व राज्य की सरकार लोगों को काम के बदले मासिक वेतन देती है और इनसे विभिन्न क्षेत्रों में काम लेती है तो इसे सरकारी सेवा कहा जाता है। सरकारी सेवा के कुछ व्यापक क्षेत्र का उदाहरण इस प्रकार है- सैन्य सेवा, शिक्षा सेवा, स्वास्थ्य सेवा, अभियंत्रण सेवा, वित्त सेवा, बैंकिंग सेवा इत्यादि ।

सरकारी सेवा क्षेत्र

1. सैन्य सेवा	2. शिक्षा सेवा
3. रेल सेवा	4. बस सेवा
5. वायुयान सेवा	6. कृषि सेवा
7. स्वास्थ्य सेवा	8. अभियंत्रण सेवा
9. वित्त सेवा	10. बैंकिंग सेवा
11. अन्य सरकारी सेवाएँ	

(ख) गैर सरकारी सेवा- जब सरकार अपने द्वारा संचालित विभिन्न कार्यक्रमों को गैर सरकारी संस्थाओं के सहयोग से लोगों

तक पहुँचाने का काम करती है अथवा लोग स्वयं अपने प्रयास से ऐसी सेवाओं के सृजन से लाभांवित होते हैं तो उसे गैर सरकारी सेवा कहा जाता है । इस क्षेत्र के भी कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं- बैंकिंग सेवा, दूरसंचार सेवा, यातायात सेवा, स्वास्थ्य सेवा, स्वरोजगार सेवाएँ इत्यादि । इनमें से कुछ सेवाएँ ऐसी है जो सरकारी एवं गैर सरकारी दोनों ही स्तर पर चलाई जाती है । खासकर यातायात सेवाएँ, शिक्षा सेवाएँ, स्वास्थ्य सेवाएँ, दूरसंचार सेवाएँ, बैंकिंग सेवाएँ इत्यादि का क्षेत्र इतना व्यापक है कि सरकार अकेले सक्षम नहीं है ।

सेवा क्षेत्र का भाग

(क) सरकारी सेवा

(ख) गैर सरकारी सेवा

गैर सरकारी सेवा क्षेत्र

1. बैंकिंग सेवा
2. दूरसंचार सेवा
3. यातायात सेवा
4. स्वास्थ्य सेवा
5. स्वरोजगार सेवाएँ
6. अन्य गैर सरकारी सेवाएँ

गोबिन्दपुर गाँव की कहानी

सुरेश अपने माता-पिता के साथ गोबिन्दपुर गाँव में रहता था । यह गाँव बिहार राज्य के नवादा जिला का है । सुरेश अपने चार भाइयों में सबसे बड़ा है । बड़ा होने के कारण परिवार के प्रति इसका दायित्व अधिक है। सुरेश के अन्य भाइयों का नाम जवाहर, हीरा एवं आशुतोष है । इस परिवार का मुख्य पेशा दुकानदारी करना है । गाँव में दुकान होने के कारण लोगों के जरूरत मन्द वस्तुएँ मिल जाती है । सुरेश मैट्रिक की परीक्षा द्वितीय श्रेणी से पास कर आगे की पढ़ाई करना चाहता था । परिवार की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होने के कारण पढ़ाई बाधित होने को दिख रहा था । तभी सुरेश ने मन बनाया लिया कि शहर जाकर मैं ट्यूशन पढ़ाकर आगे की पढ़ाई करूँगा । सुरेश गाँव से आगे की पढ़ाई के लिए गया शहर आ गया। यहाँ इसने किसी तरह अपना नाम गया कॉलेज, गया में करा लिया। खुद पढ़ाकर पढ़ने की तमन्ना को इसने साकार किया। परिश्रम ने भी सुरेश का साथ दिया। सुरेश प्रथम श्रेणी से इण्टर पास किया । पुनः इसने स्नातक डिग्री हासिल किया । नौकरी के लिए इसने तलाश करना शुरू कर दिया । यहाँ पर भी सुरेश ने सफलता प्राप्त की और वित्त सेवा में पदाधिकारी बन गया । अब सुरेश के परिवार की आर्थिक स्थिति सुधरने लगी। इसने अपने अन्य भाइयों को भी पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया । भाइयों

ने भी काफी परिश्रम किया और एक सेना में, दूसरा प्रशासनिक सेवा एवं तीसरा अभियंत्रण सेवा प्राप्त करने में सफल रहा । आज सुरेश का परिवार काफी शिक्षित श्रेणी में माना जाता है। सुरेश के पिता आज के दिनों में दुकानदारी करते हुए भी एक ''टेलीफोन बूथ'' चलाते हैं । इस प्रकार सुरेश का परिवार विभिन्न सेवाओं से अपने आप को जोड़ लिया । इनके सेवाओं का लाभ अन्य लोगों को भी प्राप्त होने लगा । इस प्रकार समाज में सेवा क्षेत्र के विस्तार के कारण ही सुरेश के परिवार के लोगों को काम मिला और उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी हुई।

सेवा क्षेत्र का महत्त्व

सेवा क्षेत्र का महत्त्व रोजगार प्राप्ति में काफी है। सेवा एवं रोजगार एक दूसरे के पूरक हैं। इन दोनों पक्षों को एक ही तराजू के दो पलड़ों के रूप में देखना होगा। अर्थात् इन्हें दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि यह दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। सेवा क्षेत्र का हम जितना ही विस्तार करेंगे रोजगार का अवसर उतना ही बढ़ेगा। उदाहरण स्वरूप मान लिया कोई किसान अपने खेतों में धान उपजाता है उसमें मेहनत कर चावल प्राप्त करता है। अगर वह किसान अपने घर में चावल को चुनकर एवं उसे साफ सुथरा कर एक किलो का पोलिथिन पैकंट बनाकर बाजार में अच्छे दाम पर बेचने का कार्य करता है तो उसे प्रारंभ से लेकर अंत तक रोजगार भी मिल जाता है और व्यापार करना चाहे तो इसे व्यापक स्तर पर भी कर सकता है, जिससे अधिक-से-अधिक लोगों को यह किसान रोजगार मुहैया करा सकता है। यदि किसान इससे संबंधित तकनीकी जानकारी एवं प्रशिक्षण प्राप्त कर ले तो अपनी आमदनी को और अधिक बढ़ा सकता है । उपरोक्त उदाहरण से सामान्यत: दो बातें स्पष्ट होती है- पहला जब किसान अपने उत्पाद को अपने श्रम एवं दक्षता के कारण उसके गुणवत्ता में वृद्धि करता है तो उससे रोजगार के नए आयाम खुलते हैं जिससे भी सेवा क्षेत्र का विस्तार होता है । दूसरा जब वस्तु की गुणवत्ता में वृद्धि की जाती है तो इससे उसे ऊँची कीमत पर बेचा जा सकता है । उत्पाद में गुणवत्ता के इस वृद्धि को (Value Added) कहते हैं ।

रोजगार सृजन के रूप में सेवाओं की भूमिका

सेवा का क्षेत्र सरकारी हो अथवा गैर सरकारी दोनों ही परिस्थितियों में रोजगार का सृजन होता है। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण लोगों की आवश्यकताएँ प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति करने हेतु अर्थव्यवस्था में विभिन्न प्रकार के उद्योगों का विस्तार हो रहा है। नये-नये कल-कारखाने खोले जा रहे हैं। इन कल-कारखानों को चलाने के लिए आवश्यक आधारभूत संरचनाओ का विकास किया जा रहा है। इन संरचनाओं के विकास के लिए हमें प्रशिक्षित, अर्द्धप्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षितों की आवश्यकता होती है। यही प्रशिक्षित, अर्द्धप्रशिक्षित एवं अप्रशिक्षित लोग मानव पूँजी के धरोहर होते हैं। मानव पूँजी को सबल एवं चुस्त-दुरुस्त बनाने हेतु हमें शिक्षा क्षेत्र के विकास पर व्यापक स्तर पर प्रयास करना पड़ता है। जितना ही शिक्षा का स्तर मजबूत होगा उतना ही अधिक मात्रा में मानव बल का प्रयोग आधुनिक उद्योग-धंधों में किया जाएगा, जिससे हमारा उत्पादन बढ़ेगा और लोगों की आवश्यकताओं को पूरा करने में सफल होगा।

चित्र 5.1 राष्ट्रीय नियोजन कार्यक्रम

राष्ट्रीय स्तर पर भारत सरकार के द्वारा रोजगार सृजन करने के लिए अनेकों कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं जिसका कार्यान्वयन राज्य सरकार के द्वारा भी किया जा रहा है । देश में सरकार के द्वारा रोजगार हेतु निम्न प्रकार की योजनाएँ चलायी जा रही है। सरकार के द्वारा चलायी गई

योजनाओं और उसके प्रारंभ होने के वर्षों को नीचे दिखाया जा रहा है :

- काम के बदले अनाज - (14 नवंबर 2004)
- राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम-(1980)
- ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण का कार्यक्रम-(1979)
- ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम-(1983)
- समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम-(20 अक्टूबर 1980)
- जवाहर रोजगार योजना- (1989)
- स्वयं सहायता समूह
- मनरेगा इत्यादि ।
- मेक इन इंडिया (सितम्बर 2014)
- स्टैंड अप इंडिया (अगस्त 2015)
- प्रधानमंत्री रोजगार प्रोत्साहन योजना (अप्रैल 2016)
- आत्मनिर्भर भारत रोजगार योजना (अक्तूबर 2020)

उपर्युक्त सेवाओं के माध्यम से देश की बेराजगारी की समस्या को दूर करने की कोशिश की जा रही है। सरकार का अनुमान है कि देश के बेरोजगार लोगों में करीब 62 प्रतिशत लोगों को उपरोक्त योजनाओं के द्वारा रोजगार मुहैया कराया जा रहा है। शहरी क्षेत्र की बेरोजगारी को दूर करने के लिए अनेक प्रयास किए जा रहे हैं। सेवा क्षेत्र के विस्तार के द्वारा अनुमान हैं कि 38 प्रतिशत शहरी बेरोजगारी को दूर किया जा सकेगा। ग्रामीण रोजगार के क्षेत्र में रोजगार उपलब्ध कराने के लिए मनरेगा विश्व की सबसे बड़ी योजना मानी जाती है। यद्यपि बिहार में बिचौलियों के कारण ग्रामीण क्षेत्र के गरीब लोग इससे अधिक लाभांवित नहीं हो सके हैं। यही कारण है कि आये दिन मनरेगा के कार्यान्वयन की कठिनाइयों को दूर कर ग्रामीण क्षेत्र में रोजगार देने की सशक्त योजना बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं ।

भारत-विश्व को सेवा प्रदाता के रूप में

21वीं शताब्दी के विश्व के सेवा क्षेत्र में भारतीय श्रम-पूंजी का अत्यधिक योगदान रहा है। पहले भी इंगलैंड के स्वास्थ्य और परिवहन सेवाओं में भारतीय श्रम-शक्ति का अत्यधिक योगदान था । इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका के अंतरिक्ष विज्ञान और सूचना प्रौद्योगिकी में आज भी भारतीय श्रम-शक्ति के योगदान को सभी लोग स्वीकार करते हैं । श्रम-शक्ति के इसी योगदान के कारण पहले जहाँ बढ़ती हुई जनसंख्या देश के लिए अभिशाप मानी जाती थी वहीं

दक्षता और ज्ञान की वृद्धि के कारण अब जनसख्या को मानव पूँजी के रूप में स्वीकार किया जाने लगा है। अर्थशास्त्र में जनसंख्या संबंधी विश्लेषण के बदले हुए परिवेश में मानवीय पूँजी (Human Capital) कहा जाने लगा है । आज भारत को विश्व का "अग्रणी युवा देश" कहा जाता है, क्योंकि अपेक्षाकृत यहाँ संपूर्ण जनसंख्या में ऊर्जावान युवा वर्ग की संख्या अधिक हो गई है । यह विकास के गति को बढ़ाने में मद्दगार साबित हो रहा है ।

उदारीकरण के कारण विश्व के सेवा क्षेत्र में जो विकास की गति आई है उसका लाभ सभी देशों को प्राप्त होने के अवसर आने लगे हैं । इस दृष्टिकोण से आज विश्व के औद्योगिक विकसित देश अपने उत्पाद एवं सेवाओं के विभिन्न कामों का सम्पादन वैसे देशों में कराने लगे हैं जहाँ सस्ती श्रम-शक्ति उपलब्ध होती है । उदाहरण के लिए इलेक्ट्रोनिक वस्तुओं में से अधिकांश का उत्पादन चीन या कोरिया में होता है और भारत में भी डाबर कम्पनी अपने उत्पाद के कम मूल्य करने के लिए अपने पड़ोसी देश नेपाल में कारखाने खोल रखे हैं जहाँ श्रम-शक्ति सस्ती है । जब बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ अपनी सम्बन्धित नियमित सेवाएँ अपनी कम्पनी के जगह किसी बाहरी या विदेशी संस्था या समूह से प्राप्त करती है तो ऐसी सेवाओं को Out-Sourcing (बाह्य स्रोती) कहा जाता है ।

बाह्य स्त्रोती (Out Sourcing)

जब बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ या अन्य कंपनियाँ संबंधित नियमित सेवाएँ स्वयं अपनी कंपनियों की बजाय किसी बाहरी या विदेशी स्त्रोत या संस्था या समूह से प्राप्त करती है तो उसे बाह्य स्त्रोती (Out Sourcing) कहा जाता है।

उदारीकरण एवं वैश्वीकरण के वर्त्तमान युग में पूरा विश्व एक बाजार के रूप में उभर कर आया है । जिसके कारण न केवल एक देश की वस्तुएँ दुनिया के सभी बाजारों में सर्वसुलभ हो गई है, बल्कि उस वस्तु का उत्पादन क्षेत्र भी अलग-अलग हो गया है और देश में उत्पादन संस्थान बनी है जहाँ सस्ते मूल्य पर श्रम उपलब्ध है । जिससे एक ओर तो सस्ते श्रम वाले क्षेत्र में सेवा क्षेत्र का विस्तार हुआ है वहीं अपेक्षाकृत कम लागत मूल्य पर वस्तुएँ उपलब्ध होने लगी है ।

इन नीतियों का भारत की अर्थव्यवस्था पर काफी व्यापक प्रभाव पड़ा है । भारत से आज तेजी से ध्वनि आधारित प्रक्रिया (voice based business process) जिसे बी० पी० ओ०

अथवा कॉल सेन्टर (call centre) कहा जाता है, अभिलेखांकन (recordkeeping), लेखांकन (accounting), बैंकिंग सेवाएँ, रेलवे पूछताछ, संगीत की रिकार्डिंग, पुस्तक शब्दांकन (Book Transcription), चिकित्सा संबंधी परामर्श (Medical Transcription), शिक्षण एवं शोध कार्य इत्यादि अनेक सेवाएँ संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (USA), यूरोपीय संघ जैसे कई विकसित देशों की कंपनियाँ प्रायः भारत की छोटी-छोटी कंपनियों या संस्थाओं से प्राप्त कर रही है । Call-Centre की कार्य-प्रणाली को चित्र संख्या 5.2 के द्वारा दिखाया गया है जहाँ एक केन्द्र में बैठकर दुनिया के विभिन्न देशों के उत्पादन एवं सेवा की क्रिया सम्पन्न होती है ।

चित्र 5.2 कॉल सेन्टर

इन बहुराष्ट्रीय विदेशी कंपनियों या सरकार को भारत से इन सेवाओं या सूचनाओं को प्राप्त करना तुलनात्मक लागत के आधार पर काफी फायदेमंद है क्योंकि भारत में इन सेवाओं की तुलनात्मक लागत काफी कम है। इसका मुख्य कारण ही कुशल श्रमशक्ति की पर्याप्त उपलब्धता तथा निम्न मजदूरी दर है। भारत अपने श्रम की मेधाशक्ति, कुशलता, विशिष्टता एवं निम्न मजदूरी के कारण जो सेवाएँ विदेशों को उनकी कंपनियों के लिए भेजता है उसकी तुलनात्मक लागत काफी कम है। इसलिए इस क्षेत्र में व्यापक रोजगार मिल रहा है। यही कारण है कि आउट

सोर्सिंग के मामले में भी भारत एक महत्त्वपूर्ण गंतव्य (Destination) बन गया है जो विश्व के अन्य देशों के रोजगार क्षेत्र में बहस का विषय हो गया है ।

सेवा क्षेत्र की बुनियादी सुविधाएँ

सेवा क्षेत्र के विकास के लिए देश एवं राज्य स्तर पर बुनियादी सुविधाओं का होना नितांत आवश्यक है । ये सुविधाएँ विकास धारा के 'रीढ़ की हड्डी' के समान है, इसकी अनुपस्थिति में विकास की क्रिया संभव नहीं है । देश या राज्य की सर्वांगीण प्रगति मूलतः कृषि, उद्योग एवं व्यापार पर निर्भर करती है और इनकी प्रगति आंधारभूत संरचना अथवा बुनियादी सुविधाओं पर निर्भर करती है । जिस देश अथवा क्षेत्र में बुनियादी सुविधाएँ अधिक होगी वहाँ औद्योगिक उत्पादन और रोजगार की वृद्धि होती है । उत्पादन और रोजगार के द्वारा ही सेवा क्षेत्र का विस्तार होता है । संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान जैसे समृद्ध देशों में ज्ञान और शोध की सुविधाएँ अधिक होने के कारण इन क्षेत्रों में सेवा का विस्तार होता गया है जिसके कारण विश्व के सभी देशों से उच्च तकनीकी शिक्षा प्राप्त किये हुए लोग का पलायन उन देशों में हुआ है । भारत के उच्चत्तम तकनीकी शिक्षा का केन्द्र IIT तथा उच्चत्तम व्यवसायिक शिक्षा केन्द्र IIM से निकले हुए युवा उन देशों में उच्चत्तम आय पर रोजगार के लिए जाते हैं । उसी तरह भारत के बैंगलुरु शहर में सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी ज्ञान के उपयोग के क्षेत्र के बढ़ने के कारण देश के सभी क्षेत्रों के उच्च सूचना प्रौद्योगिकी शिक्षा प्राप्त युवक रोजगार के लिए जाते हैं ।

दूसरी ओर बिहार, ओडिशा, मध्य प्रदेश, राजस्थान इत्यादि राज्य भारत के काफी पिछड़े राज्यों में से माने जाते हैं । जिन्हें बीमारू (BIMARU) के नाम से जाना जाता है । इन राज्यों में बुनियादी सुविधा जैसे- बिजली, सिंचाई, यातायात एवं परिवहन, दूरसंचार इत्यादि पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं है । BIMARU शब्द से नकारात्मक ध्वनि व्यक्त होने के कारण ये राज्य इस नाम से पुकारा जाना नहीं चाहते हैं । योजना आयोग भी इन राज्यों के लिए इस शब्दावली के प्रयोग को स्वीकार नहीं करती है । ऐसे भी इन राज्यों में खास कर

BIMARU

BI	- बिहार
MA	- मध्य प्रदेश
R	- राजस्थान
U	- ओडिशा

बिहार आर्थिक विकास के राह पर उन्मुख हुआ है जिसके कारण अब BIMARU शब्दावली के प्रयोग से लोग परहेज करते हैं। अर्थात् आर्थिक विकास का क्षेत्र कृषि, उद्योग अथवा सेवा कुछ भी हो इसके लिए बुनियादी सुविधाओं का होना परमावश्यक है।

इन सुविधाओं को और अच्छी तरह से समझने के लिए इन्हें निम्न चार्ट से दर्शाया गया है-

बुनियादी सुविधाएँ
या, आधारभूत ढाँचा
(Basic Infrastructure)

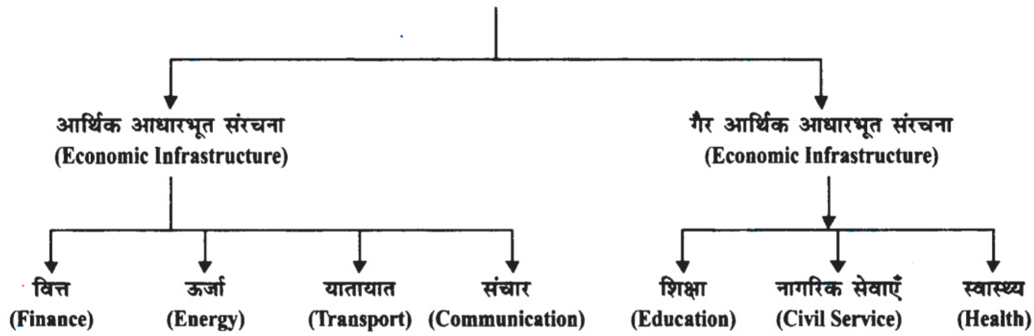

आर्थिक आधारभूत संरचनाएँ प्रत्यक्ष रूप से उत्पादन एवं लोगों की खुशहाली में वृद्धि करती है । आर्थिक विकास के सभी क्षेत्रों से इनका प्रत्यक्ष संबंध होता है । आर्थिक संरचना के अन्तर्गत निम्नलिखित को सम्मिलित किया जाता है-

वित्त (Finance)- बैंकिंग क्षेत्र, बीमा क्षेत्र, अन्य सरकारी वित्तीय क्षेत्र ।

ऊर्जा (Energy)- कोयला, विद्युत, तेल, पेट्रोलियम, गैस, गैर पारंपरिक ऊर्जा एवं अन्य।

यातायात (Transport)- रेलवे, सड़कें, वायुयान, जलयान ।

संचार (Communication)-डाक, तार, टेलीफोन, टेलीसंचार (Telecommunication), मीडिया एवं अन्य ।

गैर आर्थिक संरचना से मनुष्य की क्षमता एवं उत्पादकता में वृद्धि कर अप्रत्यक्ष रूप से उत्पादन एवं अंतत: आर्थिक विकास में सहायता प्रदान किया जाता है जो इस प्रकार है-

शिक्षा (Education)- अनौपचारिक शिक्षा, प्रारंभिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, उच्चतर

माध्यमिक शिक्षा, तकनीकी शिक्षा एवं अन्य ।

स्वास्थ्य (Health)- अस्पताल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, नर्सिंग होम एवं अन्य ।

नागरिक सेवाएँ (Civil Services)- सामाजिक चेतना, सफाई एवं अन्य ।

भारत में बुनियादी सुविधाओं को विकसित करने का परंपरा के तौर पर सरकार का ही पूरा दायित्व था, किन्तु सरकारी निवेश इस क्षेत्र में काफी कम था । इसी कारण 1991 के बाद आर्थिक सुधारों के दौर में निजी क्षेत्र ने भी स्वयं एवं सरकार के साथ संयुक्त भागीदारी कर आधारभूत संरचना के विकास में एक अहम् भूमिका निभानी शुरू कर दी है । आज संयुक्त रूप से आधारभूत संरचना में निवेश हो रहा है जिससे इसकी स्थिति में काफी सुधार हुआ है । परन्तु ग्रामीण भारत में विश्व के उच्च तकनीकी उन्नति के बावजूद भी आधारभूत संरचनाओं की सुविधाओं का एकदम अभाव है । खासकर आर्थिक दृष्टिकोण से अपेक्षाकृत पिछड़े राज्यों में तो बहुत ही कम बुनियादी सुविधाओं का विकास हो पाया है ।

सेवा क्षेत्र में शिक्षा की भूमिका

आर्थिक विकास केवल वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन विस्तार से ही संभव नहीं है । इसके लिए मानव विकास एवं मानव पूँजी निर्माण नितांत आवश्यक है । मानव पूँजी भौतिक पूँजी से ज्यादा महत्त्वपूर्ण होती है। श्रमिकों की कुशलता, शिक्षण, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य इत्यादि बढ़ाकर देश की उत्पादकता बढ़ायी जा सकती है। आय तो मात्र एक विकल्प है, अर्थात् आय एक साधक है जबकि मानव विकास एक साध्य। शिक्षा एवं स्वास्थ्य से प्रत्यक्ष मानव पूँजी निर्माण होता है। भौतिक पूँजी दृश्य होती है जबकि मानवीय पूँजी अदृश्य। बिना मानवीय पूँजी निर्माण के आर्थिक विकास कल्पना मात्र है।

अर्थात् मानव पूँजी निर्माण के लिए इनके प्रमुख घटकों पर विशेष ध्यान देना होगा। इनके प्रमुख घटक भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा एवं स्वास्थ्य हैं। इन घटकों के द्वारा मानव पूँजी को मजबूत बनाया जा सकता है। इसलिए सेवा क्षेत्र के विकास के लिए सर्वप्रथम इसे मजबूत बनाना होगा।

जब मानव पूँजी सबल हो जाती है तो इसकी महत्ता काफी बढ़ जाती है । अब सेवा क्षेत्र

के विकास के लिए इस मानव पूँजी पर निवेश करने की आवश्यकता होती है । वस्तुतः शिक्षा, स्वास्थ्य, कार्य स्थल, प्रशिक्षण, प्रवसन और सूचना में पूँजी निवेश करने के पश्चात् मानव पूँजी एक सशक्त साधन बन जाता है जिससे आर्थिक विकास के सभी क्षेत्रों का विकास संभव है ।

मानव पूँजी के प्रमुख घटक

- भोजन
- वस्त्र
- आवास
- स्वास्थ्य
- शिक्षा

अर्थात् मानव पूँजी का खास अभिप्राय एक देश में एक निश्चित समय सीमा पर कुशलता, क्षमता सुविज्ञता, शिक्षा तथा ज्ञान के भंडार से है । यह उन सभी प्रकार के पेशेवर तथा कुशल व्यक्तियों का स्टॉक अथवा भंडार है जो उत्पादन क्रियाओं से जुड़े हुए हैं ।

इस प्रकार मानव पूँजी निर्माण कौशल तथा सुविज्ञता प्राप्त अनुभवी व्यक्तियों की संख्या बढ़ाने तथा प्राप्त करने की प्रक्रिया है । अच्छी मानव पूँजी; जैसे- वैज्ञानिक, डॉक्टर, इंजीनियर, कुशल प्रशासक, समाज सेवी, मनोवैज्ञानिक, शिक्षक एवं शिक्षाविद् इत्यादि मानव पूँजी का उत्पादन करती है अर्थात् मानवीय संसाधनों से और अधिक मानव पूँजी के उत्पादन के लिए हमें मानव पूँजी में निवेश करने की आवश्यकता है । देश व राज्य का आर्थिक विकास शिखर पर पहुँचाने के लिए मानव पूँजी में निवेश के स्तर को ऊँचा उठाना होगा ।

हमारा मानव संसाधन कैसे सुदृढ़ एवं सशक्त हो इस पर गंभीरता पूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। यदि हम परिश्रम कर जनसंख्या के समग्र भाग को पर्याप्त भोजन, तन पर वस्त्र तथा सर छिपाने के लिए आवास, इन तीन प्रारंभिक आवश्यक्ताओं को पूरा कर देते हैं तो हमारी समस्या आधी हो जाती है। अब इस जनसंख्या को सबल बनाने हेतु इसके स्वास्थ्य पर जोर देने की आवश्यकता है। इस परिपेक्ष में यह कहा भी गया है कि "स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का वास होता है।" जब चार अवयव मिलकर मानव पर असर डालते हैं तो शिक्षा के माध्यम से उसे उस स्तर तक पहुँचाया जा सकता है जो कि आर्थिक विकास का एक सुदृढ़ सूचक बन जाएगा। इसी सूचक का ही देन पूँजी का निर्माण करेगा और आर्थिक विकास का परचम पूरे विश्व में लहरायेगा।

कुशल मानव पूँजी रोजगार के विभिन्न क्षेत्र को जन्म देता है । भारत वर्ष को आज इस

क्षेत्र में खास कर (Information Technology) सूचना तकनीकी में विश्व के अव्वल देश में गिनती की जा रही है । यहाँ के इंजीनियर कुशाग्र एवं तीक्ष्ण बुद्धि के साबित हो रहे हैं । फलस्वरूप अपने देश के भीतर विदेशी पूँजी का आना अधिक हो गया है । फलतः हमारे देश में इस क्षेत्र में रोजगार के अवसर काफी मात्रा में बढ़े हैं । बैंगलुरू, पुणे, मुंबई, हैदराबाद, दिल्ली इत्यादि शहरों में सूचना एवं तकनीकी क्षेत्र का प्रमुख केन्द्र बिन्दु है जिसमें हजारों लोगों को प्रतिवर्ष रोजगार की प्राप्ति हो रही है।

आधुनिक मंदी का सेवा क्षेत्र पर प्रभाव

आर्थिक विकास किसी राष्ट्र एवं राज्य की सतत् प्रक्रिया है । जैसे-जैसे युगों में परिवर्तन होता जाता है वैसे-वैसे विकास की प्रक्रिया परिवर्तन के साथ बढ़ती जाती है । अर्थव्यवस्था से पुरानी चीजों का विलुप्त होना इसकी पहचान है । समय परिवर्तन के साथ व्यक्ति की माँग में परिवर्तन हो जाता है । व्यक्ति फैशन का शिकार हो जाता है । भारत में 1991 के वैश्वीकरण के पश्चात् विकास में काफी परिवर्तन देखने को मिलता हैं । औद्योगिक नीति का उदार होना व्यापार करनेवाले राष्ट्रों के बीच एक कड़ी प्रतिस्पर्धा ला दिया । लोगों को आसानी से विदेशी वस्तुओं की सेवा प्राप्त होने लगी । लोगों के बीच वस्तुओं की कीमतों के आधार पर गुणवत्ता परखने का अवसर मिल गया ।

वैश्वीकरण, निजीकरण एवं उदारीकरण के कारण आर्थिक विकास के क्षेत्र में प्रत्यक्ष रूप से लाभ मिलने लगा । लोगों को दूसरे राष्ट्र में जाकर रोजगार करने का खुला अधिकार प्राप्त हो गया । यद्यपि आर्थिक विचारकों का एक ऐसा भी समूह है जो मानता है कि वैश्वीकरण, निजीकरण और उदारीकरण से आम आदमी का जीवन कठिन हो जाएगा और पूरी अर्थव्यवस्था पर अमीर देशों और अमीर लोगों का वर्चस्व हो जाएगा । कुछ हद तक इस आलोचना में बल भी है क्योंकि वैश्वीकरण और उदारीकरण से श्रम बाजार में श्रमिक संघटनों की भूमिका नगण्य हो जाएगी और आम लोग विकास के क्षेत्र में केवल मूक दर्शक ही रह जायेंगे । धीरे-धीरे इस मान्यता के लोगों के मत में बदलाव आ रहा है और लोग उदारवादी इन नीतियों के लाभ को समझने लगे हैं ।

विकसित राष्ट्र अमेरिका, स्वीट्जरलैंड, फ्रांस, रूस, जापान, चीन इत्यादि जगहों में भारतीय मूल के वैज्ञानिकों को काम करने का मौका मिल गया। तकनीकी क्षेत्र के वैज्ञानिकों में वृद्धि का समायोजन भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में संभव नहीं हो पा रहा था क्योंकि यहाँ की बुनियादी सुविधाएँ विकसित राष्ट्रों की तुलना में काफी कम है।

वर्तमान मंदी के कारण सेवा क्षेत्र काफी प्रभावित हुआ है। उपभोक्ताओं की माँग बढ़ी है परन्तु उत्पादकों को उचित मूल्य नहीं मिल पा रहा है। इन उत्पादकों को लागत मूल्य से भी कम आय प्राप्त हो रही है। यही कारण है कि विकसित राष्ट्रों से तकनीकी वैज्ञानिकों को छटनी कर रोजगार से मुक्त कर दिया गया। इसका प्रभाव भारत के उन वैज्ञानिकों पर भी पड़ा जो दूसरे राष्ट्र में रोजगार कर रहे थे। उत्पादकों को उत्पादन क्रिया शिथिल करना पड़ गया। अत्यधिक घाटे के कारण विकसित राष्ट्रों में आत्महत्या करने जैसी घटनाएँ होने लगी। कई वित्तीय संस्थाओं को अमेरिका में अपनी सेवा बंद कर देनी पड़ी। इस प्रकार वर्तमान मंदी का प्रभाव विकसित राष्ट्रों पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा।

भारत पर इसका असर कम पड़ा क्योंकि यहाँ का पूँजी बाजार काफी मजबूत अवस्था में अभी है। यहाँ के इंजीनियर आज भी बाह्य स्रोती (Out Sourcing) में लगे हुए हैं । खासकर भारत का सूचना प्रौद्योगिकी सेवा क्षेत्र काफी मजबूत है और पूरे विश्व में हमारे इंजीनियरों का स्थान अव्वल है। हमारी आधारभूत संरचना कमजोर होने के बावजूद भी वर्त्तमान मंदी का असर हमारे देश पर कम पड़ा। भारत के बैंगलुरू जैसे शहर का सूचना प्रौद्योगिकी (Information Technology) विश्व के अग्रणी सूचना प्रौद्योगिकी की श्रेणी में आ गया है।

इस मंदी का प्रभाव बिहार राज्य पर भी कुछ पड़ा है। हमारे राज्य के जो इंजीनियर मंदी पड़े राष्ट्र में रोजगार में थे उन्हें वहाँ से निकाल दिया गया फलस्वरूप नये-सिरे से इन्हें रोजगार हासिल करने की आवश्यकता आ गई। उन राष्ट्रों से जो आय हमारे राज्य में आती थी उसकी मात्रा घट गई।

इस प्रकार वर्तमान मंदी का प्रतिकूल प्रभाव विश्व के अधिकांश भागों पर पड़ा। कृषि प्रधान देश होने के कारण जनसंख्या के अधिकांश लोगों पर भारत में मंदी का दुष्प्रभाव अधिक

नकारात्मक नहीं हुआ है । मंदी की वर्तमान दौर में इस बात की आवश्यकता होने लगी है कि बिहार में कृषि और कृषि जनित उद्योगों को अत्यधिक मजबूत बनाया जाए । हम देख चुके हैं कि वर्तमान मंदी का बुरा प्रभाव भारत पर उतना अधिक नहीं पड़ा है । जितना इसका बुरा प्रभाव विकसित देशों पर पड़ा है । भारतीय पूँजी बाजार की मजबूती, मानवीय श्रम की उच्च दक्षता एवं विशाल श्रमशक्ति के कारण यह आशा व्यक्त की जाने लगी है कि 21वीं शताब्दी में भारत विकास की उच्चतम सीमा पर पहुँचकर विश्व के अत्यधिक विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में आ जाएगा ।

आगे आने वाले वर्षों में सामान्य रूप से संपूर्ण भारत में और विशेष रूप से बिहार में सेवा क्षेत्र के विकास की अपार सम्भावनाएँ हैं । 2020 तक चीन सहित संपूर्ण अमेरिका और यूरोप के देशों में बूढ़ों की संख्या युवकों की तुलना में अधिक होगी वहीं भारत विशेष रूप से युवाओं का देश होगा जहाँ से कुशल श्रमिकों की Out Sourcing (बाह्य स्रोती) संपूर्ण विश्व में होगा ।

सारांश

- रोजगार एवं सेवाएँ एक-दूसरे के पूरक हैं । रोजगार एवं सेवाओं की प्राप्ति आर्थिक विकास के क्षेत्र से प्राप्त किया जाता है । आर्थिक विकास के मुख्य रूप से तीन क्षेत्र हैं– (क) कृषि क्षेत्र (ख) उद्योग क्षेत्र (ग) सेवा क्षेत्र ।
- ''सेवा क्षेत्र'' को ही आर्थिक विकास का तीसरा क्षेत्र कहा जाता है । सेवा क्षेत्र का सकल घरेलू उत्पाद (Gross Domestic Product) में 55.1 प्रतिशत योगदान है जबकि कृषि एवं उद्योग में मात्र 44.9 प्रतिशत ।

  'सेवा क्षेत्र' का विकास कृषि एवं उद्योग में पायी जानेवाली अनिश्चितता के कारण हुआ।
- प्रमुख सेवा क्षेत्र– (क) सरकारी सेवा क्षेत्र

  (ख) गैर सरकारी सेवा क्षेत्र
- **(क) सरकारी सेवा क्षेत्र**– सैन्य सेवाएँ, शिक्षा सेवा, स्वास्थ्य सेवा, अभियंत्रण सेवा, वित्त सेवा, बैंकिंग सेवा, दूर संचार सेवा, रेल सेवा, वायुयान सेवा, बस सेवा, कृषि सेवा

एवं अन्य प्रमुख हैं ।

- **(ख) गैर सरकारी सेवा क्षेत्र**– दूर संचार सेवा, बैंकिंग सेवा, यातायात सेवा, स्वास्थ्य सेवा, मॉल सेवा, स्वरोजगार सेवा एवं अन्य प्रमुख हैं ।
- सरकारी एवं गैर सरकारी सेवाओं में कुछ ऐसी सेवाएँ हैं जिसका विकास सरकार एवं निजी दोनों के ही सहयोग से किया जा रहा है; जैसे– यातायात सेवा, दूरसंचार सेवा, बैंकिंग सेवा, स्वास्थ्य सेवा इत्यादि प्रमुख उदाहरण हैं ।
- **सेवा क्षेत्र का महत्त्व**– सेवा एवं रोजगार एक ही तराजू के दो पलड़ों के समान हैं ।
- **रोजगार सृजन के रूप में सेवाओं की भूमिका**– सेवा का क्षेत्र सरकारी हो अथवा गैर सरकारी, दोनों ही परिस्थितियों में रोजगार का सृजन होता है । सरकारी क्षेत्र के सहयोग से रोजगार का सृजन निम्न सेवाओं के द्वारा किया जा रहा है– काम के बदले अनाज-2004, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम-1980, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम- 1983, ग्रामीण युवा स्वरोजगार प्रशिक्षण कार्यक्रम-1980, समेकित ग्रामीण विकास कार्यक्रम-1980, जवाहर रोजगार योजना, स्वयं सहायता समूह, नरेगा इत्यादि ।
- **भारत विश्व को सेवा प्रदाता के रूप में**
- बाह्य-स्रोती (Out Sourcing)– जब बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ या अन्य कंपनियाँ संबंधित नियमित सेवाएँ स्वयं अपनी कंपनियों की बजाए किसी बाहरी या विदेशी स्रोत या संस्था या समूह से प्राप्त करती है तो उसे बाह्य-स्रोती (Out Sourcing) कहा जाता है ।
- सेवा क्षेत्र की बुनयादी सुविधाएँ– (क) आर्थिक (ख) गैर आर्थिक

  (क) आर्थिक– वित्त, ऊर्जा, यातायात एवं संचार

  (ख) गैर आर्थिक– शिक्षा, नागरिक सेवाएँ एवं स्वास्थ्य
- **मानव पूँजी के प्रमुख घटक** – भोजन, वस्त्र, आवास, स्वास्थ्य एवं शिक्षा ।
- **आधुनिक मंदी का सेवा क्षेत्र पर प्रभाव**– विकसित राष्ट्रों पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है जबकि भारत पर कम ।

  बिहार राज्य पर अन्य राज्यों की तुलना में कम प्रभाव पड़ा है।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. आर्थिक विकास का तीसरा क्षेत्र क्या है ?

(क) कृषि क्षेत्र (ख) विज्ञान क्षेत्र (ग) शिक्षा क्षेत्र (घ) सेवा क्षेत्र

2. मानव पूँजी के प्रमुख घटक कितने हैं ?

(क) 6 (ख) 4 (ग) 5 (घ) 8

3. कौन बीमारु (BIMARU) राज्य नहीं है ?

(क) बिहार (ख) मध्य प्रदेश (ग) कर्नाटक (घ) ओडिशा

4. कौन-सी सेवा गैर सरकारी है ।

(क) सैन्य सेवा (ख) वित्त सेवा (ग) मॉल सेवा (घ) रेल सेवा

5. ऊर्जा के मुख्य स्त्रोत क्या है ?

(क) कोयला (ख) पेट्रोलियम (ग) विद्युत (घ) इनमें से सभी

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short-Answer Questions)

1. Out Sourcing किसे कहते हैं ?
2. सूचना प्रौद्योगिकी (Information Technology) से जुड़े पाँच सेवा क्षेत्र को बतलाएँ ।
3. सरकारी सेवा किसे कहते हैं ?
4. गैर सरकारी सेवा किसे कहते हैं ?
5. आधारभूत संरचना किसे कहते है ?
6. 'रोजगार' और 'सेवा' में क्या संबंध है ?
7. आर्थिक संरचनाओं का क्या महत्त्व है ?
8. मंदी का असर भारत में क्या पड़ा ?

9. वैश्वीकरण का प्रभाव सेवा क्षेत्र पर क्या पड़ा ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long-Answer Questions)

1. सेवा क्षेत्र पर एक संक्षिप्त लेख लिखें ।
2. विश्व के लिए भारत सेवा प्रदाता के रूप में किस तरह जाना जाता है उदाहरण सहित लिखें ।
3. सेवा क्षेत्र में सरकारी प्रयास के रूप में क्या किये गए हैं, वर्णन करें ।
4. गैर सरकारी संस्था किस प्रकार सेवा क्षेत्र के विकास को सहयोग करती है, उदाहरण देकर लिखें।
5. वर्तमान आर्थिक मंदी का प्रभाव भारत के सेवा क्षेत्र पर क्या पड़ा ? लिखें ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

I. 1. (घ) 2. (ग) 3. (ग) 4. (ग) 5. (घ)

इकाई- 6

6

वैश्वीकरण

गत् शताब्दी के नौंवे दशक से विश्व बाजार में एक नये युग की शुरुआत हुई है । अब बाजार की व्यापकता एक क्षेत्र, राज्य और देश की सीमाओं को लांघकर पूरी दुनिया में हो गई। इसके पूर्व वस्तुओं और सेवाओं के आदान-प्रदान में जो बाधाएँ थीं, उससे अब दुनिया का बाजार मुक्त हो गया है । वर्तमान स्थिति में छोटे से गाँव या शहर के बाजार में भी प्राय: वे सभी वस्तुएँ उपलब्ध होने लगी है । जिसके निर्माण का क्षेत्र उस देश से अलग दूसरे देशों में था । संक्षिप्त में हम कह सकते हैं कि वैश्वीकरण के अन्तर्गत पूरी दुनिया का बाजार एक-दूसरे के लिए मुक्त हो गया है ।

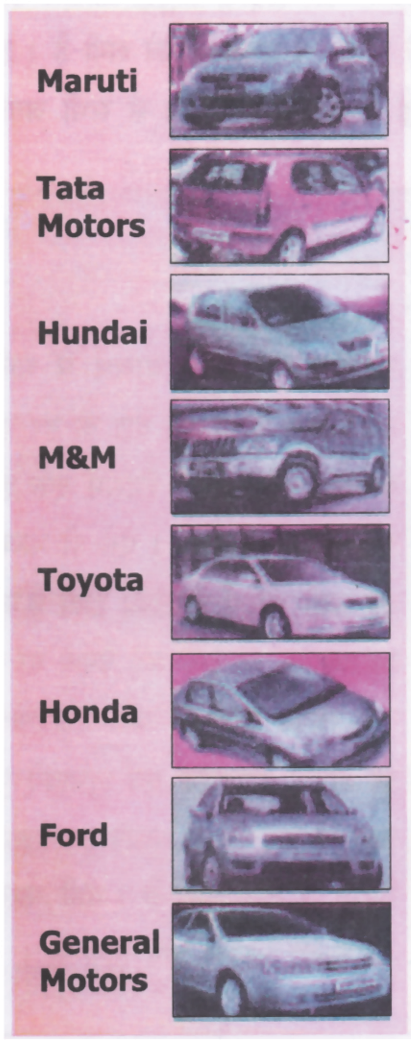

चित्र : 6.1 विभिन्न कंपनियों की कारें

व्यावहारिक रूप में यदि हम देखें तो हमें याद होगा कि कुछ वर्ष पूर्व हमारे देश की सड़कों पर केवल कुछ चुनिंदे नाम जैसे- मोटर साइकिल में राजदूत, एजडी तथा कार में फिएट तथा एम्बेस्डर ही चला करती थी । आज छोटे-से शहर की सड़कों पर भी नयी-नयी किस्म की गाड़ियाँ चलने लगी है । जिसका निर्माण बाहर के देशों में होता रहा है । इसी प्रकार किसी सामान्य दुकान पर भी

चले जाए तो उपभोक्ता के लिए वे सभी वस्तुएँ सर्वसुलभ हो गई है, जिसका निर्माण अन्य दूसरे देशों में होता है । अब छोटे-छोटे शहरों में भी बड़े-बड़े मॉल (Mall) खुल गए हैं, जहाँ उपभोक्ता के उपयोग की छोटी-से छोटी तथा बड़ी-से-बड़ी चीजें एक ही स्थान में उपलब्ध हो जाती है । सड़कों पर विभिन्न कंपनियों/देशों द्वारा निर्मित बड़ी छोटी गाड़ियाँ, दुकानों पर सामान्य उपयोग की समस्त वस्तुएँ, सामान्य उपयोग में आनेवाली मोबाइल एवं टेलीविजन आदि भी देश के बाज़ार में उपलब्ध होने लगी है । इस तरह के परिवर्तन जिसमें विश्व के विभिन्न देशों में बनी हुई वस्तुएँ सामान्य रूप से सभी जगह उपलब्ध होना, वैश्वीकरण का ही परिणाम है ।

मॉल
(Mall)

भारतीय उपभोक्ता बाजार में मॉल अपेक्षाकृत नयी अवधारणा है । वैश्वीकरण एवं उदारीकरण के कारण देश के हर छोटे बड़े शहर में छोटे या बड़े पैमान पर ऐसा उपभोक्ता बाजार बनने लगा है जिसमें एक ही छत के नीचे उपभोक्ता के लिए हर छोटी एवं बड़ी चीजें मिलने लगी है । ऐसे ही बाजार को जिसमें एक छत के नीचे उपभोग की सारी छोटी एवं बड़ी वस्तुएँ उपलब्ध होती है उसे मॉल (Mall) कहते हैं । चूँकि मॉल के मालिक या व्यवस्थापक के द्वारा बड़े पैमाने पर वस्तुओं की खरीद की जाती है । इसलिए वे अपेक्षाकृत कम लागत लगने के कारण उपभोक्ताओं को आकर्षित करने के लिए, उनके ऊँची खरीद पर अनेक आकर्षक एवं लुभावने पुरस्कार देने की योजना बनाते हैं । उपभोक्ता बाजार में मॉल के प्रादुर्भाव से यद्यपि उपभोक्ताओं को एक ही छत के नीचे आकर्षक कीमत पर वस्तु मिलने से लाभ होता है । वहीं भारत जैसे देश में छोटे-छोटे व्यापारियों की बिक्री कम होने का खतरा उत्पन्न होने लगा है ।

चित्र : 6.2 मॉल

वैश्वीकरण क्या है ?

(What is Globalisation)

उदारीकरण और निजीकरण के साथ-साथ वैश्वीकरण शब्द का प्रयोग अभी पिछले कुछ वर्षों से होने लगा है । वैश्वीकरण की अवधारणा में राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पहलू शामिल होते हैं । किन्तु यहाँ हम वैश्वीकरण की अवधारणा को उसके आर्थिक पहलू की दृष्टि से ही समझने का प्रयास करेंगे ।

वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का समन्वय या एकीकरण किया जाता है ताकि वस्तुओं एवं सेवाओं, प्रौद्योगिकी, पूँजी और श्रम या मानवीय पूँजी का भी निर्बाध प्रवाह हो सके । वैश्वीकरण के अंतर्गत पूँजी, वस्तु तथा प्रौद्योगिकी का निर्बाध रूप से एक देश से दूसरे देश में प्रवाह होता है । इसको स्पष्ट करते हुए **ब्रैंको मिलनोवीक** (Branko Milnovic) ने कहा है– ''वैश्वीकरण का अर्थ पूँजी, वस्तु, प्रौद्योगिकी एवं लोगों का विचार (Ideas) का स्वतंत्र प्रवाह होता है । कोई भी ऐसा वैश्वीकरण आंशिक ही माना

जाएगा जिसमें मानवीय संपदा के प्रवाह में रुकावट आये ।" (Globalisation means free movement of capital, goods, technology, ideas and people. Any globalisation that omits the last one is partial and not sustainable) अर्थात वैश्वीकरण के अन्तर्गत वस्तुओं के साथ-साथ पूँजी, तकनीक एवं सेवाओं का भी एक देश से दूसरे देश के बीच बिना किसी रुकावट के प्रवाह होता है । वैश्वीकरण के कारण ही विभिन्न देशों के बीच वस्तुओं एवं सेवाओं, पूँजी और प्रौद्योगिकी का आदान-प्रदान हो रहा है । दुनिया के देश एवं लोग एक-दूसरे के अपेक्षाकृत अधिक संपर्क में आये हैं ।

दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वैश्वीकरण; निजीकरण तथा उदारीकरण की नीतियों का परिणाम है–

निजीकरण (Privatisation) – निजीकरण का अभिप्राय, निजी क्षेत्र द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों पर पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से स्वामित्व प्राप्त करना तथा उनका प्रबंध करना है । आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत भारत सरकार ने सन् 1991 से निजीकरण की नीति अपनायी ।

उदारीकरण (Liberalisation) – उदारीकरण का अर्थ सरकार द्वारा लगाए गए सभी अनावश्यक नियंत्रणों तथा प्रतिबंधों जैसे– लाइसेंस, कोटा आदि को हटाना है। आर्थिक सुधारों के अन्तर्गत सन् 1991 से भारत सरकार ने उदारीकरण की नीति अपनायी ।

वैश्वीकरण (Globalisation)– निजीकरण और उदारीकरण की नीति की परिणति वैश्वीकरण के रूप में विश्व के सामने आयी है।

वैश्वीकरण के अंग (Components of globalisation)

वैश्वीकरण के पाँच मुख्य निम्नलिखित अंग है :–

1. व्यवसाय और व्यापार संबंधी अवरोधों की कमी (Lesser the Obstacles of Business and Trade)– व्यापार अवरोधकों को कम करना ताकि वस्तुओं एवं सेवाओं का बेरोकटोक आदान-प्रदान हो सके । इसका अभिप्राय यह हुआ कि विदेशी कंपनियाँ भारतीय बाजार में अपनी वस्तुएँ तथा सेवाएँ मुक्त रूप से बेच सकती है और इसी प्रकार भारतीय कंपनियाँ विदेशों में अपनी वस्तुएँ एवं सेवाएँ बेच सकती है ।

2. पूँजी का निर्बाध प्रवाह (Free Flow of Capital)– ऐसा वातावरण कायम करना जिससे विभिन्न देशों में पूँजी का प्रवाह स्वतंत्र रूप से हो सके । इसका अर्थ यह हुआ कि विदेशी पूँजीपति अब भारत में निवेश कर सकते हैं और भारतीय पूँजीपति विदेशों में निवेश कर सकते हैं।

3. प्रौद्योगिकी का निर्बाध प्रवाह (Free Flow of Technology)– ऐसा वातावरण कायम करना कि प्रौद्योगिकी का निर्बाध या बिना बाधा के प्रवाह हो सके । इसका मतलब यह है कि हम बिना किसी प्रतिबंध के किसी भी देश से प्रौद्योगिकी आयात कर सकते हैं ।

4. श्रम का निर्बाध प्रवाह (Free Flow of Labour)– ऐसा वातावरण कायम करना कि विभिन्न देशों में श्रम का निर्बाध प्रवाह हो सके ।

5. पूँजी की पूर्ण परिवर्त्तनशीलता (Free Convertibility of Capital)– पूँजी की पूर्ण परिवर्त्तनशीलता भी वैश्वीकरण का आवश्यक अवयव है ।

यह देखने में आया है कि पूँजी, प्रौद्योगिकी, वस्तुओं तथा सेवाओं के क्षेत्र में दुनिया के विभिन्न देशों के बीच निर्बाध प्रवाह में काफी वृद्धि हुई है । परन्तु नागरिकों अर्थात श्रम आवागमन अभी उतना सुगम नहीं हो पाया है जितना होना चाहिए था । विकसित राष्ट्र श्रम के निर्बाध प्रवाह में बाधाएँ उत्पन्न कर रहे हैं ।

वैश्वीक गाँव

(Global Village)

वैश्वीकरण के प्रसार और प्रभाव के कारण अब सभी देशों में एक ऐसे आवासीय स्थान का निर्माण किया जा रहा है, जहाँ आवास की सभी आधुनिकतम संसाधन उपलब्ध रहते हैं और उस आवासीय स्थान में विश्व के सभी देशों के व्यक्तियों को उनकी इच्छा से स्वतंत्र रूप में बसने की सुविधा होती है । ऐसा आवासीय स्थान जहाँ विभिन्न देशों, विभिन्न विचारों और विभिन्न धार्मिक मान्यताओं के सभी लोगों को रहने की व्यवस्था की जाती है उसे ही हम वैश्वीक गाँव कहते हैं । भारत में भी मुंबई से कुछ दूर एक प्रमुख औद्योगिक समूह के द्वारा वैश्वीक गाँव का निर्माण किया गया है। यद्यपि वैश्वीक गाँव की यह कल्पना अब तक पूर्ण रूप से साकार नहीं हो सकी है ।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया में बहुराष्ट्रीय कंपनियों की भूमिका (Role of Multinational Companies in globalisation)

बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ वैश्वीकरण की प्रक्रिया में मुख्य भूमिका निभा रही है ।

बहुराष्ट्रीय कंपनी

(Multinational Company)

बहुराष्ट्रीय कंपनी वह है, जो एक से अधिक देशों में उत्पादन पर नियंत्रण व स्वामित्व रखती है। जैसे–फोर्ड मोटर्स, सैमसंग, कोका कोला, नोकिया, इंफोसिस, टाटा मोटर्स आदि।

बहुराष्ट्रीय कंपनी की कार्य-प्रणाली

बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ उत्पादन लागत में कमी करने एवं अधिक लाभ कमाने के उद्देश्य से उन जगहों या देशों में उत्पादन के लिए कारखाने स्थापित करती है, जहाँ उन्हें सस्ता श्रम, सस्ता

कच्चा माल एवं अन्य संसाधन मिल सकते हैं। उदाहरण के लिए भारत के उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन की बड़ी कंपनी 'डाबर' अपनी वस्तु का उत्पादन सस्ती भूमि एवं श्रम की उपलब्धता के कारण नेपाल में भी करती है। **बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन विश्व-स्तर पर कर रही है**। इससे वे ज्यादा लाभ कमाती है ।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों की एक अनोखी पद्धति, जिसे आउटसोर्सिंग (outsourcing) कहा जाता है, के द्वारा ये कंपनियाँ अपना कार्य करती है ।

बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ न तो सारा माल स्वयं पैदा करती हैं न ही एक जगह पर उत्पादन करती है । वे विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार का उत्पादन करती है । जैसे– औद्योगिक उपकरण बनाने वाली एक बड़ी कंपनी अपने उत्पाद के लिए डिजाइन हो सकता है अमेरिका के किसी अनुसंधान व विकास केन्द्र से लें । इसके बाद इसी डिजाइन के आधार पर वह चीन में अवस्थित अपनी उत्पादन इकाई में पुर्जों के निर्माण का आर्डर देती है । इसका कारण है कि चीन में पुर्जो का सस्ता निर्माण संभव है । इसके बाद इन पुर्जों को जोड़ने का काम मैक्सिकों व पूर्वी यूरोप में किया जाता है । इसका कारण है कि मैक्सिकों और पूर्वी यूरोप, अमेरिका और यूरोप के बाजारों से निकट है, जिसके कारण लाभप्रद है । इसके बाद तैयार उत्पाद अन्तिम रूप में समूचे विश्व में बेचा जाता है । ग्राहक देखभाल सेवा के लिए **भारत स्थित कॉल सेंटरों** (call centres) का उपयोग किया जाता है । इसका कारण है कि भारत में काफी बड़ी संख्या में प्रशिक्षित, अंग्रेजी बोलने वाली सस्ती मानव शक्ति उपलब्ध है । इस प्रकार भिन्न-भिन्न कार्यों के लिए अलग-अलग स्थानों का चयन करके बहुराष्ट्रीय कंपनी अपने लागत मूल्य को काफी हद तक कम करने में सफल होती है । इस प्रकार से बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपना कारोबार विश्व-स्तर पर चलाती है और लाभ उठाती है।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा विश्व-भर के उत्पादन को एक-दूसरे से जोड़ना (Global Connection of Products)

बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ कई प्रकार से अपने उत्पादन कार्य का प्रसार करती है; जैसे–

चित्र : 6.3 यह पटना स्थित कॉल सेन्टर है

निवेश (Investment) – परिसंपत्तियों जैसे- भूमि, भवन, मशीन एवं अन्य उपकरणों की खरीद में व्यय की गई मुद्रा को निवेश कहते हैं।

1. स्थानीय कंपनी को खरीदना और उसके बाद उत्पादन का प्रसार करना। इसका उदाहरण है पारले समूह के 'थम्स अप' ब्रांड को कोका कोला (जो बहुराष्ट्रीय कंपनी है) ने खरीद लिया।

विदेशी निवेश (Foreign Investment)– बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा किए गए निवेश को विदेशी निवेश कहते हैं । यह निवेश लाभ कमाने के उद्देश्य से किया जाता है ।

2. कभी-कभी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ इन देशों की स्थानीय कंपनियों के साथ संयुक्त रूप से उत्पादन करती है। इससे स्थानीय कंपनियों को एक तो नवीन प्रौद्योगिकी मिलती है, जिसे बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने साथ लाती है। दूसरा ज्यादा उत्पादन करने के लिए पूँजी मिलती है क्योंकि बहुराष्ट्रीय कंपनियों के पास काफी ज्यादा पूँजी होती है।

3. बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ माल के उत्पादन के लिए छोटे उत्पादकों का सहारा लेती है।

जैसे– वस्त्र, जूते, खेल के सामान, खिलौने आदि का उत्पादन बड़ी संख्या में छोटे उत्पादकों द्वारा बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए किया जाता है । बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ ये उत्पदि खरीद कर अपने ब्रांड नाम से दुनिया भर में बेचती है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ संयुक्त उपक्रम के माध्यम से या कंपनियों के विलय से या विभिन्न देशों के छोटे उत्पादकों से माल आपूर्ति ले करके अपना उत्पादन जाल फैलाती है । **इस तरह बहुराष्ट्रीय कंपनियों के द्वारा विश्व के दूर-दूर स्थानों पर फैला उत्पादन एक-दूसरे से संबंधित हो रहा है,** एवं वैश्वीकरण की प्रक्रिया में मुख्य भूमिका निभा रहा है ।

वैश्वीकरण एवं बाजारों का एकीकरण (Globalisation and Integration of Market)

विदेशी व्यापार विश्व के देशों के बाजारों को जोड़ने या एकीकरण का कार्य करते हैं । वैश्वीकरण के फलस्वरूप विदेशी व्यापार का दायरा बढ़ा है । पूर्व से ही विदेशी व्यापार विभिन्न देशों को आपस में जोड़ने का मुख्य साधन रहा है । व्यापार करने के लिए ही ईस्ट इंडिया कंपनी भारत आयी । ऐसे कई उदाहरण इतिहास में हम पढ़ते हैं । विदेशी व्यापार, उत्पादकों को घरेलू बाजार से बाहर निकलकर दूसरे देश के बाजारों में पहुँचने एवं विदेशी कंपनियों से प्रतिस्पर्धा करने का अवसर प्रदान करता है । यदि विदेशी व्यापार पर कोई नियंत्रण न हो तो माल एक देश से दूसरे देश में सुगमता से आ सकेगा । जिसके परिणामस्वरूप वस्तुओं के बाजार में विकल्प बढ़ जाते हैं और विभिन्न देशों के बाजारों में वस्तुओं के मूल्य लगभग समान हो जाते हैं । वैश्वीकरण के फलस्वरूप विदेशी व्यापार पर नियंत्रण में ढीलापन आया है ।

इस प्रकार विदेशी व्यापार दुनिया के देशों के बाजारों को जोड़ने या एकीकरण का कार्य करता है ।

वैश्वीकरण को संभव बनाने वाले कारक (Factors Responsible for Globalisation)

वैश्वीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाने वाले दो मुख्य कारक है । उनकी चर्चा नीचे की गई है।

1. **प्रौद्योगिकी में प्रगति** – प्रौद्योगिकी के मामले में हमने काफी विकास किया है ।

प्रौद्योगिकी में तीव्र उन्नति वह मुख्य कारक है जिसने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को उत्प्रेरित किया है । आज हम ऐसे प्रौद्योगिकी के युग में जी रहे हैं जब समय एवं स्थान की दूरियाँ सिमट गई हैं और दुनिया एक वैश्विक गाँव बन गई है । यातायात व दूरसंचार के क्षेत्र में हुई प्रौद्योगिकी प्रगति ने भौगोलिक दूरियों को पार करने में न सिर्फ समय कम कर दिया है, बल्कि खर्च भी घटा दिया है ।

परिवहन प्रौद्योगिकी में बहुत उन्नति हुई है इसने लंबी दूरियों तक वस्तुओं की तीव्रतर आपूर्ति को कम लागत पर संभव किया है । अब माल ढोने के लिए कंटेनरो का उपयोग किया जाता है । जिससें माल के ढुलाई–लागत में कमी आयी है । इसी प्रकार रेल एवं हवाई यातायात की लागत में गिरावट आयी है । जिससे वायुमार्ग से अधिक मात्रा में वस्तुओं का परिवहन संभव हुआ है ।

चित्र : 6.4 वस्तुओं के परिवहन के लिए कंटेनर

सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया को काफी तेज किया है । दूरसंचार सुविधाओं (टेलीफोन, मोबाईल फोन, फैक्स) के द्वारा हम दुनिया के किसी

भी कोने से तुरंत संपर्क बना सकते हैं । इसमें संचार उपग्रहों ने काफी मदद किया है ।

आज कम्प्यूटर का प्रवेश घर-घर में हो रहा है । जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में कम्प्यूटर का प्रवेश हो गया है । आज इंटरनेट की दुनिया है जहाँ हम जो चाहते हैं, घर के कोने में बैठे-बैठे दुनिया की सारी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं । इसके द्वारा हम तुरंत इलेक्ट्रॉनिक डाक (ई-मेल) भेज सकते हैं और कम मूल्य पर दुनिया भर में बात कर सकते हैं । सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग वैश्वीकरण की प्रक्रिया में मददगार सिद्ध हो रहा है । इसे हम निम्न उदाहरण से समझ सकते हैं – मान लीजिए न्यूयार्क का प्रकाशक जो पत्रिका या पुस्तक प्रकाशित करना चाहता है । वह लागत कम करने के लिए पत्रिका के पाठ्य-विषय, योजना एवं डिजाइन को इंटरनेट एवं दूरसंचार के माध्यम से अपने मुंबई कार्यालय को भेज देता है । मुंबई कार्यालय उसे मुंबई में ही न्यूयार्क से भेजे गए डिजाइन के आधार पर प्रकाशित करता है । छपाई के बाद पत्रिकाओं को वायुमार्ग से न्यूयार्क भेजा जाता है । पत्रिका के छपाई एवं डिजाइनिंग के लिए पैसे का भुगतान इंटरनेट के द्वारा न्यूयार्क के एक बैंक से मुंबई के एक बैंक को तत्काल (ई-बैंकिंग द्वारा) कर दिया जाता है।

इस तरह हम देखते हैं कि सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के विकास ने लोगों को नजदीक लाकर वैश्वीकरण की प्रक्रिया को काफी तेज किया है ।

2. विदेश-व्यापार तथा विदेशी निवेश का उदारीकरण– अपनी योजना के शुरू के वर्षों में भारत ने अपने यहाँ विदेशी व्यापार और विदेशी निवेश पर प्रतिबंध लगा रखा था । यह नीति घरेलू उत्पादकों के हितों की रक्षा के लिए थी।

सन् 1991 से उदारीकृत व्यापार नीति प्रारंभ की गई, विदेशी व्यापार एवं विदेशी निवेश पर से अवरोधकों (जैसे आयात पर कर आदि) को काफी हद तक हटा दिया गया । दूसरे शब्दों में अब आयात-निर्यात बेरोक-टोक किया

> **व्यापार अवरोधक–** इसे अवरोधक इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह कुछ प्रतिबंध लगाता है । सरकार व्यापार अवरोध का प्रयोग विदेशी व्यापार में वृद्धि या कटौती करने एवं कौन-सी वस्तु देश में कितनी मात्रा में आयात होनी चाहिए यह निर्णय करने के लिए करती है।

जाने लगा था। विदेशी कंपनियाँ यहाँ पर अपने कार्यालय और कारखाने स्थापित कर सकती है। अवरोधों को हटाने की प्रक्रिया को उदारीकरण का नाम दिया गया है ।

विदेशी व्यापार तथा विदेशी निवेश के उदारीकरण की इस नीति से भी वैश्वीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा मिला है ।

विश्व व्यापार संगठन

(World Trade Organisation- W.T.O.)

विश्व व्यापार संगठन (W.T.O.) एक ऐसा अंतर्राष्ट्रीय संगठन है, जिसका उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय व्यापार को उदार बनाना है इस संगठन की स्थापना जनवरी 1995 में की गई थी । भारत इसका संस्थापक सदस्य रहा है । वर्तमान में 164 देश विश्व व्यापार संगठन के सदस्य है। इसका मुख्यालय जेनेवा में है । विश्व व्यापार संगठन अंतर्राष्ट्रीय व्यापार से संबंधित नियमों को निर्धारित करता है और देखता है कि इन नियमों का पालन हो । विश्व व्यापार संगठन सभी देशों को मुक्त व्यापार की सुविधा देता है । परन्तु विकसित देशों ने अनुचित ढंग से व्यापार अवरोधकों को बना रखा है । दूसरी ओर विकासशील देशों पर दवाब डालकर उन्हें व्यापार अवरोधकों को हटाने के लिए विवश किया जाता है ।

भारत में वैश्वीकरण क्यों ?

(Globalisation in India-Way?)

विकास की वर्तमान स्थिति में भारत के उद्योग एवं व्यापार को नई प्रौद्योगिकी और ज्ञान की अतिशय आवश्यकता है । इसके साथ ही जनसंख्या एवं क्षेत्रफल के दृष्टिकोण से भारत एक बड़ा देश है, जिसके कारण उत्पादन के सस्ते साधनों की उपलब्धता के कारण यहाँ बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जा सकता है । विश्व का बड़ा उपभोक्ता बाजार होने के कारण दुनिया के सभी देशों की निगाह भारत पर है । ऐसी स्थिति में देश में आधुनिक तकनीकी ज्ञान एवं पूँजी को आकर्षित करने के लिए तथा विश्व बाजार में मानव पूँजी और उत्पादित वस्तु को भेजने में वैश्वीकरण का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है ।

वैश्वीकरण के समर्थक **भारत में वैश्वीकरण** के पक्ष में निम्नलिखित तर्क देते हैं–

1. प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रोत्साहन (Increase in Direct Foreign Investment)– वैश्वीकरण से प्रत्यक्ष विदेशी निवेश प्रोत्साहित होगा । जिससे भारत जैसा विकासशील देश अपने विकास के लिए पूँजी प्राप्त कर सकेगा ।

2. प्रतियोगी शक्ति में वृद्धि (Increase in Competitive Power)– वैश्वीकरण की नीति के फलस्वरूप भारत जैसे विकासशील देशों की प्रतियोगी शक्ति में वृद्धि होगी और अर्थव्यवस्था का त्वरित विकास हो सकेगा ।

वैश्वीकरण के पक्ष में तर्क :

1. प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रोत्साहन
2. प्रतियोगी शक्ति में वृद्धि
3. नई-प्रौद्योगिकी के प्रयोग में सहायक
4. अच्छी उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति
5. नये बाजार तक पहुँच
6. उत्पादन तथा उत्पादिता के स्तर को उन्नत करना
7. बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र में सुधार
8. मानवीय पूँजी की क्षमता का विकास

3. नई-प्रौद्योगिकी के प्रयोग में सहायक (Facilitates New Technology) – वैश्वीकरण भारत जैसे विकासशील देशों को विकसित देशों द्वारा तैयार की गई नई प्रौद्योगिकी के प्रयोग में सहायता प्रदान करता है ।

4. अच्छी उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति (Availability of High Quality Consumer Goods)– वैश्वीकरण भारत जैसे विकासशील देशों को अच्छी-अच्छी गुणवत्ता की उपभोग वस्तुओं को सापेक्षत: कम कीमत पर प्राप्त करने के योग्य बनाता है ।

5. नये बाजार तक पहुँच (Availability of New Market)– वैश्वीकरण के फलस्वरूप भारत जैसे विकासशील देश के लिए दुनिया के बाजारों तक पहुँच का मार्ग प्रशस्त हो जायेगा।

6. उत्पादन के स्तर को उन्नत करना (Improvement in the Quality of Product)– वैश्वीकरण के द्वारा उन्नत मशीन तथा तकनीक के प्रयोग से उत्पादन के स्तर को उठाया जा सकता है ।

7. बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र में सुधार (Banking and Financial Reform)–

वैश्वीकरण के फलस्वरूप विश्व के अन्य देशों के संपर्क में आने से बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र की कुशलता में सुधार होगा ।

8. मानवीय पूँजी की क्षमता का विकास (Improvement in the Efficiency of Human Capital)– शिक्षा तथा कौशल प्रशिक्षण वैश्वीकरण के प्रमुख घटक हैं । इससे मानवीय विकास को बढ़ावा मिलता है ।

भारत सहित विश्व के कई देशों में वैश्वीकरण के गुण-दोष को लेकर विवाद छिड़ा हुआ है । भारत में भी एक वर्ग के आर्थिक और सामाजिक चिंतकों का मानना है कि वैश्वीकरण यहाँ के अर्थव्यवस्था के औद्योगिक एवं व्यावसायिक क्षेत्र के लिए घातक होगा । यद्यपि उनके द्वारा दिये गये तर्कों में कुछ तथ्य है । उदाहरण के लिए पूँजी एवं श्रम बाजार में इससे अधिक नुकसान होने की संभावना व्यक्त की जाती है । इक्कीसवीं शताब्दी का विश्व पिछले कुछ वर्षों से एक अलग युग में प्रवेश कर गया है । जहाँ चीन एवं रूस में भी बड़े पैमाने पर विदेशी पूँजी और श्रम के लिए पूर्व के अवरोधों से मुक्ति करा दी गई है । ऐसी परिस्थिति में अब भारत के लिए भी वैश्वीकरण के महत्त्व को नकारना मुश्किल हो गया है । सच तो यह है कि भारत की औद्योगिक एवं आर्थिक विकास के लिए वैश्वीकरण की नीति अनिवार्य दिखती है ।

वैश्वीकरण-ऐतिहासिक परिवेश में (1991 के पूर्व का वैश्वीकरण)

वैश्वीकरण की प्रक्रिया विश्व के लिए नई नहीं है । वर्ष 1870 से 1914 के दौरान भी ऐसा ही एक दौर देखने में आया था । यद्यपि वैश्वीकरण के आज के चरण एवं पहले के चरण में अनेक समानताएँ हैं । उन्नसवीं सदी के अंत में भी अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से विश्व अर्थव्यवस्था आज की तरह ही संगठित हुई थी । एक बात में वैश्वीकरण के ये दोनों चरण एक-दूसरे से भिन्न है और वह है अंतर्राष्ट्रीय प्रवास अथवा देशांतरण । पिछले चरण (1870 ई० से 1914 ई०) में जहाँ बड़े पैमाने पर श्रमिकों का बिना बाधा का प्रवाह हुआ वहीं इस चरण में एक तो प्रवाह की गति धीमी पड़ गई है और इसका स्वरूप भी बदल गया है । वैश्वीकरण को संभव बनाने वाले कारक भी दोनों दौरों में लगभग एक समान थे । उन दिनों दो देशों के बीच वस्तु, पूँजी और श्रम के आवागमन पर लगभग कोई रोक नहीं थी । भाप के जहाजों, रेलों

और तारों (Telegram) के जरिए यातायात और संचार में भारी बदलाव आए थे । उद्योगों में नई-नई प्रबंध और उत्पादन तकनीक अपनायी जा रही थी । आज के अमेरिकी प्रभुत्व के समान उन दिनों ब्रिटेन का दुनिया पर राजनीतिक और आर्थिक वर्चस्व बना हुआ था तथा पाउंड स्टरलिंग अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा की भूमिका निभा रहा था।

बिहार में वैश्वीकरण का प्रभाव

वैश्वीकरण के कारण बिहार का आर्थिक परिवेश भी बदलता जा रहा है । आर्थिक विकास के लिए अन्य राज्यों की तरह बिहार में भी अधिक पूँजी निवेश की आवश्यकता है । पूँजी के संबंध में यह कहा जाता है कि जिस तरह पानी की तरलता नीची भूमि में पानी को आकर्षित करती है उसी तरह पूँजी का निवेश वहाँ होता है जहाँ आर्थिक एवं सामाजिक वातावरण स्वस्थ हो तथा पूँजी से उत्पाद-लाभ अधिक हो । आर्थिक स्वस्थता से हमारा तात्पर्य उद्योग के लिए बिजली, पानी, सड़क जैसे यातायात की सुविधाओं का होना आवश्यक है । उसी तरह सामाजिक स्वास्थ्य के लिए राज्य में अमन चैन का होना आवश्यक है, जिससे निवेशक अधिक सुरक्षा कवच के अंदर अपना पूँजी निवेश कर सके । यद्यपि बिहार में शक्ति के साधन के रूप में बिजली पर्याप्त रूप में उपलब्ध नहीं है, फिर भी सड़क आदि का निर्माण कार्य तेजी से हो रहा है तथा कानून एवं व्यवस्था में अपक्षाकृत सुधार लाने के प्रयास किये जा रहे हैं । यह वैश्वीकरण की ही देन है कि सरकार एवं नागरिकों द्वारा राज्य में आधारिक संरचना (Infrastructure) का विकास हो रहा है, जिससे राज्य की प्रगति तीव्र हो सके । भारत के पूर्व राष्ट्रपति ए० पी० जे० अबुल कलाम ने किसी एक संदर्भ में यह कहा था "देश की प्रगति के लिए बिहार की प्रगति अनिवार्य है ।"

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में उपभोग एवं उत्पादन के क्षेत्र में पूरी दुनिया एक देश हो गया है और इस कारण वैश्वीकरण के सुखद परिणाम बिहार राज्य में भी दिखायी पड़ने लगे हैं । प्रगति के वर्तमान स्थिति में और अधिक मजबूती लाना होगा, तभी हमें वैश्वीकरण का पूर्ण लाभ प्राप्त हो सकता है ।

वैश्वीकरण का बिहार के जनजीवन पर न केवल सकारात्मक प्रभाव पड़े हैं बल्कि इसके कुछ नकारात्मक प्रभाव भी है जिसे हम निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत कर सकते हैं ।

देश की तरह बिहार के आर्थिक व्यवस्था पर वैश्वीकरण का कुछ सकारात्मक प्रभाव (Positive Impact) पड़ा है जो निम्नलिखित है :-

1. कृषि उत्पादन में वृद्धि (Increase in agriculture production)– वैश्वीकरण के बाद बिहार के कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है ।

देश की तरह बिहार की कृषि भी मॉनसून पर अतिशय आश्रित है यही कारण है कि इस वर्ष 2009 में आशा से कम वर्षा होने के कारण सुखाड़ जैसी स्थिति पैदा हो गयी है । यह वैश्वीकरण का ही प्रभाव है कि आज कृषि उत्पाद के इस गिरावट की स्थिति में भी सरकार यह कहने में सक्षम है कि लोगों के लिए खाद्यान्न की आवश्यकता की भरपाई की जा सकेगी ।

2. निर्यातों में वृद्धि (Increase in exports)– वैश्वीकरण के फलस्वरूप बिहार से किये गये निर्यातों में वृद्धि हुई है । इन निर्यातों में कुछ खाद्य एवं व्यावसायिक फसलों का निर्यात, कुटीर तथा लघु उद्योगों द्वारा निर्मित वस्तुओं का निर्यात तथा फलों का निर्यात शामिल है फलों के निर्यात के अंतर्गत बिहार लीची, आम तथा मखाना के निर्यात के लिए प्रसिद्ध है ।

बिहार में वैश्वीकरण का सकारात्मक प्रभाव

1. कृषि उत्पादन में वृद्धि (Increase in agriculture production)
2. निर्यातों में वृद्धि (Increase in exports)
3. विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग की प्राप्ति (Availability of foreign direct investment)
4. शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति शुद्ध राज्य घरेलू उत्पादन में वृद्धि (Increase in net state domestic product and per capita net state domestic product)
5. विश्वस्तरीय उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धता (Availability of International Consumer Goods)
6. रोजगार के अवसरों में वृद्धि (Increase in Employment oppurtunities)
7. बहुराष्ट्रीय बैंक एवं बीमा कंपनियों का आगमन (Establistment of Banking and Insurance Company)

3. विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग की प्राप्ति (Availability of foreign direct investment)– वैश्वीकरण के फलस्वरूप बिहार में विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग भी हुआ है और विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग के लिए काफी दिलचस्पी दिखाई गई है। इससे भविष्य में विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग में काफी वृद्धि की आशा की जा सकती है। बिजली की कमी के कारण प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग अभी कम है किन्तु भविष्य में बढ़ने की संभावना है।

4. शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद तथा प्रति व्यक्ति शुद्ध राज्य घरेलू उत्पादन में वृद्धि (Increase in net state domestic product and per capita net state domestic product)– वैश्वीकरण के फलस्वरूप चालू मूल्यों पर बिहार के शुद्ध घरेलू उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति शुद्ध घरेलू उत्पादन में वृद्धि हुई है। दूसरे शब्दों में इस अवधि में राज्य की कुल आय तथा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हुई है।

5. विश्वस्तरीय उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धता (Availability of World-class Consumer Goods)– वैश्वीकरण के कारण बिहार के बाजारों में विश्वस्तरीय उपभोक्ता वस्तुएँ उपलब्ध हो गयी है। विभिन्न बहुराष्ट्रीय कंपनियों के मोबाईल फोन, जूते, रेडिमेड वस्त्र, खाद्य-पदार्थ, कारें एवं अन्य इलेक्ट्रॉनिक वस्तुएँ आदि अब बिहार के बाजारों में भी उपलब्ध है।

6. रोजगार के अवसरों में वृद्धि (Increase in Employment opportunities)– वैश्वीकरण के फलस्वरूप रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है। उच्च शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्राप्त लोगों के लिए विदेशों तथा देश के अन्य भागों में रोजगार के नये अवसर उपलब्ध हुए हैं। वैश्वीकरण का ही प्रभाव है कि बिहार के बहुत सारे सॉफ्टवेयर इंजीनियर आज विदेशों में नौकरी कर रहे हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका एवं इंगलैंड में बड़ी संख्या में सॉफ्टवेयर इंजीनियर नौकरी कर रहे हैं।

7. बहुराष्ट्रीय बैंक एवं बीमा कंपनियों का आगमन (Establishment of Banking and Insurance Company)– वैश्वीकरण का ही प्रभाव है कि बिहार में बहुराष्ट्रीय बैंकों जैसे HSBC बैंक आदि का आगमन हुआ।

बिहार में बहुराष्ट्रीय बीमा कंपनियाँ, भारतीय कंपनियों के साथ मिलकर संयुक्त कंपनी के

रूप में बाजार में उतर रही है । जैसे– बजाज एलियांज, बिरला सनलाइफ, टाटा ए० आई० जी०, अवीवा आदि ।

वैश्वीकरण के कारण बिहार के बाजार में भी बड़े पैमाने पर विश्व बाजार का श्रेष्ठतम उत्पाद उपलब्ध हो गया है । तकनीक एवं उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भी विश्व की उन्नत देशों की शैक्षणिक संस्थाएँ अपना केन्द्र बिहार में खोलने को इच्छुक है । बिहार के प्रशिक्षित तकनीकी विशेषज्ञों की माँग विदेश में बढ़ गई है और शिक्षित एवं प्रशिक्षित लोगों के लिए रोजगार के नये अवसर आने लगे हैं । विगत वर्षों में बिहार के आधारभूत संरचना (Infrastructure) के विकास के कारण विदेशी पर्यटक बड़ी संख्या में बिहार आने लगे हैं और विश्व मुद्रा बाजार से बिहार में पूँजी निवेश की संभावना बढ़ती जा रही है ।

नकारात्मक प्रभाव (Negative Impact)

बिहार के आर्थिक जीवन पर वैश्वीकरण का जो नकारात्मक प्रभाव (Negative Impact) पड़ा है उसे हम मुख्य रूप से निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त कर सकते हैं :-

1. कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों की उपेक्षा (Neglect of agriculture and agro based industries)– बिहार एक कृषि प्रधान राज्य है । यहाँ बड़े पैमाने पर उद्योग-धंधे काफी कम है । राज्य में कृषि पर किया गया निवेश संतोषजनक नहीं है । यहाँ कृषि आधारित उद्योगों के विकास की संभावना काफी है । लेकिन, इन उद्योगों में वैश्वीकरण के पश्चात् जितना निवेश होना चाहिए था, उतना नहीं हुआ है ।

2. कुटीर एवं लघु उद्योग पर विपरीत प्रभाव (Adverse effect on cottage and small scale industry)– बिहार में बड़े पैमाने के उद्योग-धंधे कम हैं । यहाँ कुटीर एवं लघु उद्योग ज्यादा हैं। वैश्वीकरण के कारण छोटे पैमाने के उद्योगों जैसे कुटीर एवं हस्तशिल्प उद्योग के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है क्योंकि उनके द्वारा निर्मित वस्तुओं को बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा निर्मित वस्तुओं का सामना करना पड़ता है जो क्वालिटी में इनसे अच्छी एवं सस्ती होती हैं । जैसे-- चीन द्वारा निर्मित खिलौने से हमारा बाजार पट गया है। चीनी खिलौनों ने हमारे कुटीर एवं हस्तशिल्प उद्योग द्वारा निर्मित खिलौनों को दर किनार कर दिया है क्योंकि चीनी खिलौने

आकर्षक एवं सस्ते हैं ।

3. रोजगार पर विपरीत प्रभाव (Adverse effect on employment)– चूँकि बिहार में छोटे पैमाने के उद्योग धंधे ज्यादा है जैसे कुटीर एवं हस्तशिल्प उद्योग आदि । बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा निर्मित वस्तुओं के आने से इन उद्योगों की बहुत सारी इकाईयाँ बंद हो गई । जिसके कारण बहुत सारे श्रमिक बेरोजगार हो गये । बढ़ती प्रतिस्पर्धा के कारण अधिकांश नियोक्ता श्रम-लागत में कटौती करने की कोशिश करते हैं। वे श्रमिकों को स्थायी रोजगार की जगह अब अस्थायी रोजगार देते हैं । इसका अर्थ है कि श्रमिकों का रोजगार अब सुनिश्चित नहीं है ।

बिहार में वैश्वीकरण का नकारात्मक प्रभाव

1. कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों की उपेक्षा
2. कुटीर एवं लघु उद्योगों पर विपरीत प्रभाव
3. रोजगार पर विपरीत प्रभाव
4. आधारभूत संरचना के कम विकास के कारण कम निवेश

4. आधारभूत संरचना के कम विकास के कारण कम निवेश (Low investment due to poor growth of infrastructure)– बिहार में पूँजी निवेश उतना नहीं हुआ है जितना वैश्वीकरण के फलस्वरूप देश के अन्य राज्यों में हुआ है। इसका कारण है कि बिहार में आधारभूत संरचना की कमी है। यहाँ सड़क, बिजली, विश्वस्तरीय होटल एवं हवाई अड्डा की कमी है।

बिहार सरकार ने पिछले कुछ वर्षों में आधारभूत संरचना के विकास के लिए कई कदम उठाए हैं, परन्तु इस क्षेत्र में और अधिक कदम उठाने की जरूरत है।

इस प्रकार निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि वैश्वीकरण के सकारात्मक अथवा लाभकारी प्रभाव इनके नकारात्मक प्रभावों की तुलना में अधिक वजन रखते हैं । स्पष्टत: वैश्वीकरण का सकारात्मक प्रभाव देश की अर्थव्यवस्था पर से नहीं बल्कि बिहार की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है । वास्तव में वैश्वीकरण एक उभरती हुई एवं सशक्त अंतर्राष्ट्रीय वास्तविकता है जिसकी अपनी एक गति है । बिहार में समय के साथ यह गति सशक्त होती चली जायेगी । इसके लिए हमें वैश्वीकरण के लाभों को अधिकतम एवं इसके जोखिमों को न्यूनतम बनाने का

प्रयास करते रहना होगा ।

सन् 1991 का आर्थिक सुधार (Economic Reforms Since 1991)

1980 के दशक के अंत तक सरकार का व्यय उसके राजस्व से इतना अधिक हो गया कि उसके धारक क्षमता से अधिक माना जाने लगा । आवश्यक वस्तुओं की कीमतें तेजी से बढ़ने लगी। आयात की वृद्धि इतनी तीव्र रही कि निर्यात की संवृद्धि से कोई तालमेल नहीं हो पा रहा था । पेट्रोल आदि आवश्यक वस्तुओं के आयात के लिए सामान्य रूप से रखा गया **विदेशी मुद्रा के सुरक्षित भंडार** पंद्रह दिनों के लिए आवश्यक आयात का भुगतान करने योग्य भी नहीं बचा था। अंतर्राष्ट्रीय ऋणदाताओं की ब्याज चुकाने के लिए भारत सरकार के पास पर्याप्त विदेशी मुद्रा नहीं बची थी । उस समय स्थिति ऐसी आ गयी थी कि भारत को 49 क्विंटल सोना बैंक ऑफ इंगलैंड में बंधक रखना पड़ा था । 1990-91 के खाड़ी युद्ध ने संकट को और गहरा बना दिया। इन सभी कारणों से सरकार ने सन् 1991 में कुछ नई नीतियों को अपनाया जिसे **नई आर्थिक नीति** कहा जाता है । इस नई आर्थिक नीति में व्यापक **आर्थिक सुधारों** को सम्मिलित किया गया ।

आर्थिक सुधारों का अर्थ (Meaning of Economic Reforms)

भारत में आर्थिक सुधारों का मतलब उन नीतियों से है जिनका प्रारंभ 1991 से अर्थव्यवस्था में कुशलता, उत्पादकता, लाभदायकता एवं प्रतियोगिता की शक्ति के स्तरों में वृद्धि करने के दृष्टिकोण से किया गया है ।

ये आर्थिक सुधार उदारीकरण (Liberalisation), निजीकरण (Privatisation) तथा वैश्वीकरण (Globalisation) की नीतियों पर आधारित है । अत: इन्हें हम LPG नीति भी कहते हैं । यहाँ ध्यान देने योग्य बात है कि आर्थिक सुधारों को हम नई आर्थिक नीति (New Economic Policy) के नाम से भी पुकारते हैं ।

LPG की व्याख्या

L= Liberalisation

P= Privatisation

G= Globalisation

आर्थिक सुधारों अथवा नई आर्थिक नीति के उद्देश्य
(Objectives of economic reforms or new economic policy)

आर्थिक सुधारों अथवा नई आर्थिक नीति के उद्देश्य निम्नलिखित हैं–

1. उत्पादन इकाइयों की कार्यकुशलता एवं उत्पादकता स्तर में सुधार लाना ।
2. उत्पादन इकाइयों की प्रतियोगी क्षमता को बढ़ाना ।
3. भूतकाल की तुलना में विदेशी विनियोग (Foreign Investment) एवं तकनीक का अधिक-से-अधिक उपयोग करना ।
4. आर्थिक विकास की दर को बढ़ाना ।
5. आर्थिक विकास के लिए विश्वव्यापी संसाधनों का प्रयोग करना ।
6. वित्तीय क्षेत्र (Financial Sector) में सुधार लाना तथा इसे आधुनिक बनाना ताकि यह अर्थव्यवस्था की जरूरतों को प्रभावशाली ढंग से पूरा कर सके ।
7. सार्वजनिक क्षेत्र के कार्य-संपादन (Performance) में सुधार लाना तथा उसके क्षेत्र को अधिक युक्तिसंगत बनाना ।

आर्थिक सुधारों या नई आर्थिक नीति की मुख्य विशेषताएँ (Main Features of Economic Reforms or New Economic Policy)

नई आर्थिक नीति की मुख्य विशेषताएँ अर्थव्यवस्था का उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण करना है ।

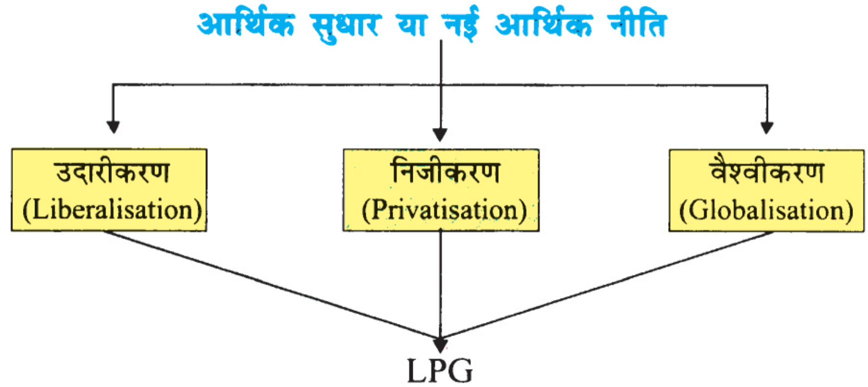

उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण की चर्चा इस अध्याय में पहले की जा चुकी है ।

वैश्वीकरण एवं आम आदमी
(Globalisation and Common Man)

देश में सामान्यत: ऐसे लोगों की संख्या अधिकतम होती है जो उपभोग की न्यूनतम सुविधाओं (Minimum Comfort) से या तो वंचित रहते हैं या उस सीमा-रेखा से थोड़ा ऊपर होते हैं । सामान्यत: आम आदमी (Common Man) समाज के ऐसे वर्ग-समूह को कहते हैं जो मध्यम अथवा निम्न श्रेणी के लोग होते हैं जो सामान्य उपभोग की सुविधाओं से वंचित होते हैं । जो किसी तरह अपनी जीविका का निर्वाह करते हैं । भारत में वर्तमान के वर्ष (2009-10) में करीब-करीब 85 प्रतिशत लोग ऐसे हैं, जिनकी आय कम है और जिन्हें जीवन-यापन की सामान्य सुविधाएँ भी उपलब्ध नहीं है । ऐसे वर्ग-समूह को ही हम आम आदमी कहते हैं । NCAER (National Council of Applied Economic Research) ने 2006 के प्रकाशित **द ग्रेट इंडियन मिडिल क्लास** में आय के आधार पर यह बतलाने की कोशिश की है कि भारतीय सामाजिक संरचना में आम आदमी की कितनी भागीदारी है ।

देश की पूरी जनसंख्या का लगभग 85% लोग ऐसे हैं जो जीवनयापन की सामान्य सुविधाओं से वंचित है या जिन्हें जीवन की न्यूनतम सुविधाएँ मुश्किल से उपलब्ध होती हैं । भारत के आम आदमी जिसकी संख्या इतनी बड़ी है और जनतांत्रिक व्यवस्था में इनकी भागीदारी भी बहुत बढ़ जाती है । यही कारण है कि भारतीय जनतांत्रिक व्यवस्था में चुनाव के समय हर पार्टी के घोषणा-पत्र में आम आदमी के जीवन को बेहतर बनाने के वादे किये जाते हैं । यहाँ यह कह देना आवश्यक होगा कि आम आदमी में केवल गरीबी रेखा से नीचे के लोग ही नहीं है बल्कि गरीबी रेखा के उस सीमा क्षेत्र के ऊपर भी बहुत से लोग है जिन्हें सामान्य जीवनोपयोगी सुविधाएँ मुश्किल से उपलब्ध होती है।

वैश्वीकरण के इस युग में हमें यह देखना होगा कि आम आदमी को वैश्वीकरण से क्या लाभ प्राप्त हुआ है या फिर उनका सामान्य जीवन पहले से अधिक दुर्बल हो गया है । वैश्वीकरण के द्वारा जहाँ एक ओर विदेशी पूँजी का बड़ी मात्रा में आयात होने लगा है और बड़ी-बड़ी कंपनियाँ अपने उद्योग का केन्द्र सस्ते श्रम शक्ति की उपलब्धता के कारण भारत जैसे देश में लगाने लगे हैं । पूँजी और उद्योग के क्षेत्र में विदेशी पूँजी के लगने से लोगों को अधिक

रोजगार मिलने की संभावना व्यक्त की जाती रही है । मूल रूप से आम आदमी पर वैश्वीकरण का निम्नलिखित अच्छा प्रभाव पड़ा है–

1. उपयोग के आधुनिक संसाधनों की उपलब्धता– वैश्वीकरण के कारण दुनिया के सभी देशों के उच्चतम उत्पादन लोगों को उपयोग के लिए उपलब्ध हो गया है । उदाहरण के लिए पहले जहाँ आम आदमी रेडियो से मनोरंजन प्राप्त करता था । अब उनके लिए विभिन्न कंपनियों की रंगीन टेलीविजन जैसी चीजों की उपलब्धता हो गई है ।

2. रोजगार की बढ़ी हुई संभावना– वैश्वीकरण के कारण औद्योगिक प्रसार होने के कारण रोजगार के नए-नए क्षेत्र खुल गए हैं । जिससे कुशल श्रमिकों के लिए अधिक रोजगार के अवसर उपलब्ध हो गए हैं ।

आम आदमी पर वैश्वीकरण का अच्छा प्रभाव

1. उपयोग के आधुनिक संसाधनों की उपलब्धता
2. रोजगार की बढ़ी हुई संभावना
3. आधुनिकतम तकनीक की उपलब्धता

3. आधुनिकतम तकनीक की उपलब्धता– वैश्वीकरण के कारण विश्व के विकसित देशों के आधुनिकतम तकनीक अन्य विकासशील देशों में आसानी से उपलब्ध होने लगा है । जिससे आम लोगों के लिए आधुनिकतम तकनीक के उपयोग का दरवाजा खुल गया है ।

सच कहा जाए तो, भारत जैसे विकासशील देश में आम लोगों पर वैश्वीकरण का बुरा प्रभाव ही पड़ा । वैश्वीकरण से आम लोगों पर निम्नलिखित बुरा प्रभाव पड़ा है–

1. सामान्यत: कम कुशल लोगों में बेरोजगारी बढ़ने की आशंका - वैश्वीकरण के कारण आधुनिक संयंत्रों से मशीनी उत्पादन को बढ़ावा मिला है, जिसके कारण समाज के अधिकतम श्रम-शक्ति जो अर्धकुशल (Semiskilled) या अकुशल (unskilled) हैं । ऐसे लोगों में बेरोजगारी के बढ़ने की संभावना हो गई है ।

2. उद्योग एवं व्यवसाय के क्षेत्र में बढ़ती हुई प्रतियोगिता– वैश्वीकरण के कारण बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आने से देश के अंदर के उत्पादकों को विदेशी वस्तुओं से प्रतियोगिता करनी पड़ रही है जो उन्नत तकनीक के कारण उच्च स्तर के होते हैं तथा अत्याधुनिक पैकिंग के कारण आकर्षक दिखते हैं ।

3. श्रम-संगठनों पर बुरा प्रभाव– श्रमिक संगठनों के द्वारा आम मजदूरों की न्यूनतम माँगों को संगठित रूप से माँग की जाती है जिससे श्रमिकों को सामान्य वेतन एवं सुविधाएँ उपलब्ध होने लगती है । अब वैश्वीकरण के कारण श्रम कानूनों में लचीलापन आया है जिससे श्रमिक संगठन भी कमजोर हो गया है इससे आम श्रमिकों की उचित सेवा-सुविधाओं को मिलने में अधिक कठिनाई आने लगी है ।

आम आदमी पर वैश्वीकरण का बुरा प्रभाव

1. बेरोजगारी बढ़ने की आशंका
2. उद्योग एवं व्यवसाय के क्षेत्र में बढ़ती हुई प्रतियोगिता
3. श्रम-संगठनों पर बुरा प्रभाव
4. मध्यम एवं छोटे उत्पादकों की कठिनाई
5. कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र का संकट

4. मध्यम एवं छोटे उत्पादकों की कठिनाई– वैश्वीकरण के कारण मध्यम एवं छोटे उत्पादकों के लिए अपने उत्पादन को सक्षम बनाए रखने में अनेक कठिनाइयाँ होने लगी हैं प्रकृति का यह एक सामान्य नियम है कि पानी में बड़ी मछलियाँ, छोटी मछलियों को खा जाती है। उसी तरह वैश्वीकरण के कारण जो बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ देश में आने लगी है उससे मध्यम और छोटे उद्योग और व्यवसाय के अस्तित्व पर खतरा उत्पन्न हो गया है ।

5. कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्र का संकट– वैश्वीकरण के कारण अब देश और विदेश के बड़े-बड़े पूँजीपति फार्म हाऊस बनाने लगे हैं जिसमें कृषि के क्षेत्र में भी अधिक पूँजी निवेश के द्वारा कम श्रम-शक्ति से ही अधिक उत्पादन प्राप्त करने लगे हैं । इस स्थिति में गाँव के मध्यम एवं छोटे श्रेणी के किसानों के लिए अनेक प्रकार का संकट उत्पन्न हो गया हैं ।

वैश्वीकरण का आम लोगों पर कुछ अनुकूल एवं अधिक विपरीत प्रभावों को देखने के बाद हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि वैश्वीकरण से आम लोगों को लाभ से अधिक हानि होने की संभावना है । यह सत्य है कि वैश्वीकरण से पूँजी, उत्पाद और आय में वृद्धि होगी । किन्तु वृद्धि का यह लाभ समाज के मुट्ठी-भर धनी एवं उच्च शिक्षा प्राप्त लोग ही प्राप्त कर सकेंगे । वैश्वीकरण की स्थिति में ऊँची आय के अमीर व्यक्तियों की आय बढ़ती चली जाएगी और 85 प्रतिशत की सर्वाधिक संख्या में आम लोगों का जीवन कठिन हो जाने की संभावना है । अतः विकास की व्यूह-रचना समावेशी होनी चाहिए ।

देश का आम आदमी बहुत मुश्किल से अपने जीवनयापन की न्यूनतम सुविधा प्राप्त कर पाता है । ऐसे लोगों के लिए वैश्वीकरण के कारण अन्य देशों में उत्पादित उच्च मूल्य के वस्तुओं

का उपभोग करना कठिन होता है । देश का आम आदमी गरीबी, भुखमरी आदि के शिकार होते रहते हैं इस कारण उन्हें वैश्वीकरण का कोई लाभ नहीं मिल पाता है । यह बात अलग है कि अर्द्धविकसित एवं विकासशील देशों में सस्ते श्रम-शक्ति की उपलब्धता के कारण नये-नये उद्योग की स्थापना और विकास की जाती है जिससे देश के सामान्य कुशलता प्राप्त श्रमिकों को रोजगार मिलने की संभावना बढ़ जाती है ।

आम लोगों पर वैश्वीकरण के प्रभावों को देखने से यह पता चलता है कि तत्काल में भारत के आम लोगों को वैश्वीकरण से पर्याप्त लाभ मिलने की संभावना कम है । 21वीं शताब्दी के भारत के विकास के संबंध में जो संभावित स्थिति बनती है उसमें भारत एक सम्पन्न विकसित देश होने के कगार पर है । ऐसी स्थिति में वर्तमान में यदि न्यायपूर्ण वितरण प्रणाली एवं सभी क्षेत्रों के समावेशी विकास (Inclusive Growth) के आधार पर समाज के सभी वर्गों तथा सभी क्षेत्रों का संतुलित विकास किया जाए तभी वैश्वीकरण का तात्कालिक लाभ आम लोगों को प्राप्त हो सकेगा । विकास कि गति में वृद्धि के साथ आम लोगों को मिलने वाली सामान्य सुविधाओं में वृद्धि होने की संभावना है जिससे हम कह सकते हैं कि यदि विकास की गति में तीव्रता आयी तो आम लोगों को वैश्वीकरण से पर्याप्त लाभ हो सकेगा । इस लाभ को प्राप्त करने के लिए देश में ईमानदारी से सभी वर्गों के उत्थान के लिए योजनात्मक कदम उठाना होगा जिसे हम समावेशी विकास (Inclusive Growth) के रूप में व्यक्त करते हैं ।

सारांश

- **वैश्वीकरण**– वैश्वीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा विश्व की विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं का समन्वय या एकीकरण किया जाता है । ताकि वस्तुओं एवं सेवाओं, प्रौद्योगिकी, पूँजी ओर श्रम का निर्बाध प्रवाह हो सके ।
- **वैश्वीकरण के पाँच मुख्य अंग हैं**- (i) व्यापार अवरोधकों को कम करना। (ii) ऐसी परिस्थिति बनाना जिससे विभिन्न देशों में पूँजी का प्रवाह स्वतंत्र रूप से हो सके। (iii) ऐसा वातावरण कायम करना कि प्रौद्योगिकी का निर्बाध प्रवाह हो सके । (iv) ऐसा वातावरण कायम करना कि श्रम का निर्बाध प्रवाह हो सके । (v) पूँजी की मुक्त परिवर्तनशीलता ।

- बहुराष्ट्रीय कंपनी– वह है, जो एक से अधिक देशों में उत्पादन पर नियंत्रण व स्वामित्व रखती है ।
- बहुराष्ट्रीय कंपनियों वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन विश्व-स्तर पर करके एवं विश्व भर के उत्पादन को एक-दूसरे से जोड़कर, वैश्वीकरण की प्रक्रिया में मुख्य भूमिका निभा रही है ।
- विदेशी व्यापार, विश्व के देशों के बाजारों को जोड़ने या एकीकरण का कार्य करते हैं ।
- वैश्वीकरण को संभव बनाने वाले कारक निम्न हैं– (i) प्रौद्योगिकी में प्रगति । (ii) विदेशी व्यापार तथा विदेशी निवेश का उदारीकरण ।
- **विश्व व्यापार संगठन (W.T.O.)**– यह अंतरराष्ट्रीय व्यापार से संबंधित नियमों को निर्धारित करता है और देखता है कि इन नियमों का पालन हो ।
- भारत में वैश्वीकरण के पक्ष में निम्नलिखित तर्क है– (i) प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का प्रोत्साहन (ii) प्रतियोगी शक्ति में वृद्धि, (iii) नई प्रौद्योगिकी के प्रयोग में सहायक, (iv) अच्छी उपभोक्ता वस्तुओं की प्राप्ति, (v) नये बाजार तक पहुँचना, (vi) उत्पादन तथा उत्पादिता के स्तर को उन्नत करना, (vii) बैंकिंग तथा वित्तीय क्षेत्र में सुधार, (viii) मानवीय पूँजी की क्षमता का विकास ।
- **वैश्वीकरण का बिहार पर प्रभाव**– इसका सकारात्मक एवं नकारात्मक दो तरह के प्रभाव बिहार पर पड़े हैं–

  सकारात्मक प्रभाव– (i) कृषि उत्पादन में वृद्धि, (ii) निर्यातों में वृद्धि, (iii) विदेशी प्रत्यक्ष विनियोग की प्राप्ति, (iv) शुद्ध राज्य घरेलू उत्पादन एवं प्रति-व्यक्ति शुद्ध राज्य घरेलू उत्पादन में वृद्धि (v) निर्धनता में कमी, (vi) विश्व स्तरीय उपभोक्ता वस्तुओं की उपलब्धता, (vii) रोजगार के अवसरों में वृद्धि, (viii) बहुराष्ट्रीय बैंकों एवं बीमा कंपनियों का आगमन ।

  नकारात्मक प्रभाव– (i) कृषि एवं कृषि आधारित उद्योगों की उपेक्षा, (ii) कुटीर एवं लघु उद्योगों पर विपरीत प्रभाव, (iii) रोजगार पर विपरीत प्रभाव, (iv) आधारभूत संरचना के कम विकास के कारण कम निवेश ।

- **भारत में सन् 1991 का आर्थिक सुधार**–उदारीकरण, निजीकरण तथा वैश्वीकरण की नीतियों पर आधारित है । इसलिए इन्हें LPG नीति भी कहते हैं । आर्थिक सुधारों को हम नई आर्थिक नीति के नाम से भी जानते हैं ।
- **उदारीकरण**– इसका अर्थ है सरकार द्वारा लगाए गए सभी अनावश्यक नियंत्रणों तथा प्रतिबंधों जैसे परमिट, लाइसेंस, कोटा आदि से अर्थव्यवस्था की मुक्ति ।
- **निजीकरण**– निजीकरण से अभिप्राय है, निजी क्षेत्र द्वारा सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों पर पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से स्वामित्व प्राप्त करना तथा उनका प्रबंध करना । निजी क्षेत्र के विकास पर प्रतिबंध हटाना ।
- **वैश्वीकरण एवं आम आदमी** - वैश्वीकरण के आम लोगों पर कुछ अनुकूल एवं अधिक विपरीत प्रभाव पड़ा है ।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Question)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. नई आर्थिक नीति में किसे सम्मिलित किया गया ?

(क) उदारीकरण (ख) निजीकरण (ग) वैश्वीकरण (घ) उपर्युक्त सभी

2. वैश्वीकरण के मुख्य अंग कितने हैं ?

(क) एक (ख) दो (ग) पाँच (घ) चार

3. इनमें से कौन बहुराष्ट्रीय कंपनी है ?

(क) फोर्ड मोटर्स (ख) सैमसंग (ग) कोका-कोला (घ) इनमें से सभी

4. वैश्वीकरण का अर्थ है -

(क) विदेशी पूँजी एवं विनियोग पर रोक

(ख) व्यापार, पूँजी, तकनीक हस्तांतरण, सूचना प्रवाह द्वारा देश की अर्थव्यवस्था का विश्व अर्थव्यवस्था के साथ समन्वय

(ग) सरकारीकरण की प्रक्रिया को बढ़ाना

(घ) इनमें कोई नहीं

5. पारले समूह के 'थम्स अप' ब्रांड को किस बहुराष्ट्रीय कंपनी ने खरीद लिया?
   (क) कोका कोला (ख) एल० जी०
   (ग) रिबॉक (घ) नोकिया

II. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें।

1. वैश्वीकरण का अर्थ है देश की अर्थव्यवस्था का .... अर्थव्यवस्था के साथ समन्वय।
2. व्यापार, पूँजी, तकनीक, हस्तांतरण, सूचना प्रवाह के माध्यम से .... को बढ़ावा मिलता है।
3. बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ वैश्वीकरण की प्रक्रिया में .... भूमिका निभा रही है।
4. विदेशी व्यापार विश्व के देशों के बाजारों को .... का कार्य करते हैं।
5. W.T.O. (World Trade Organisation) की स्थापना सन् .... में की गई।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short- Answer Questions)

1. वैश्वीकरण से आप क्या समझते हैं ?
2. बहुराष्ट्रीय कंपनी किसको कहते हैं ?
3. विश्व व्यापार संगठन क्या है ? यह कब और क्यों स्थापित किया गया ?
4. भारत में सन् 1991 के आर्थिक सुधारों से आप क्या समझते हैं ?
5. उदारीकरण को परिभाषित करें ?
6. निजीकरण से आप क्या समझते हैं ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long- Answer Questions)

1. एक बहुराष्ट्रीय कंपनी द्वारा किसी देश में अपनी उत्पादन इकाई लगाने के निर्णय पर किन बातों का प्रभाव पड़ता है?
2. वैश्वीकरण का बिहार पर पड़े प्रभावों को बताएँ।
3. भारत में वैश्वीकरण के पक्ष में तर्क दें।
4. वैश्वीकरण का आम आदमी पर पड़े प्रभावों की चर्चा करें।

परियोजना कार्य (Project Work)

अपने विद्यालय के समीप के किसी गाँव या मुहल्ले के निम्न मध्यम वर्ग के दस लोगों से इन बिंदुओं पर उनकी राय लें और बताएँ कि वैश्वीकरण से उन्हें कितना और कैसे लाभ हुआ है ?

(क) विगत् वर्षों में उनके द्वारा उपभोग की गई वस्तु की संख्या में वृद्धि हुई है अथवा नहीं?

(ख) यदि उनके द्वारा उपभोग की वस्तुओं में वृद्धि हुई है तो क्या– (i) वे वस्तुएँ स्थानीय बाजार की निर्मित है या बड़ी कंपनियों द्वारा (ii) उनके उपभोग की सामग्रियों में कितनी बहुराष्ट्रीय कंपनी का उत्पाद है । (iii) वैश्वीकरण को सरल शब्दों में बताकर उनसे पूछे कि उन्हें इससे लाभ हुआ है अथवा नहीं ।

इन प्रश्नावली के आधार पर दस पंक्तियों में यह बताएँ कि वैश्वीकरण का आम लोगों पर कैसा प्रभाव पड़ा है अच्छा अथवा बुरा ।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

I.	1. (घ)	2. (ग)	3. (घ)	4. (ख)	5. (क)
II.	1. विश्व	2. वैश्वीकरण	3. मुख्य	4. जोड़ने	5. 1995

*

इकाई- 7

7

उपभोक्ता जागरण एवं संरक्षण

'उपभोक्ता' बाजार व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण अंग है । व्यक्ति जब वस्तुएँ एवं सेवाएँ अपने प्रयोग के लिए खरीदता है तब वह उपभोक्ता कहलाता है । खरीददार की अनुमति से ऐसी वस्तुओं और सेवाओं का प्रयोग करनेवाला व्यक्ति भी उपभोक्ता है ।

व्यवसाय जगत में उपभोक्ता का स्थान महत्त्वपूर्ण होता है । महात्मा गाँधी ने बहुत पहले ही बाजार उपभोक्ता के महत्त्व को पहचाना था और उन्होंने उपभोक्ता जागरण के लिए एक मूल वाक्य कहा था, जो आज प्राय: सभी बैंकों एवं अन्य संस्थानों पर अंकित है ।

''ग्राहक हमारी दुकान में आनेवाला सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है । वह हम पर निर्भर नहीं, हम उनपर निर्भर है ।''

बाजार-व्यवस्था में उपभोक्ता का स्थान सर्वोपरि है । यदि उपभोक्ता नहीं रहे, तो उत्पादित वस्तुओं को माँगनेवाला ही नहीं होगा । उत्पादन की समस्त क्रिया उपभोक्ता के द्वारा ही संचालित होती है । यहाँ यह याद रखना होगा कि बाजार में हमारी भागीदारी उत्पादक और उपभोक्ता दोनों ही रूप में है । उत्पादक के रूप में हम पहले वस्तु और सेवाओं का उत्पादन करते हैं और फिर हम अपनी आवश्यकतानुसार उन्हीं वस्तु और सेवाओं से अपनी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं । उपभोक्ता का स्थान बाजार-व्यवस्था में काफी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि उसी पर उत्पादन की समस्त क्रियाएँ निर्भर करती हैं ।

बाजार-व्यवस्था में उत्पादक और उपभोक्ता दोनों ही होते हैं, और दोनों का अपना अलग महत्त्व है । वर्तमान युग में उपभोक्ताओं में वस्तु के मूल्य-निर्माण एवं गुणवत्ता के प्रति जागरूक बनाया जाता है, उसे हम **''उपभोक्ता-जागरण''** के रूप में जानते हैं ।

उपभोक्ता जागरण

मनुष्य जन्म से मृत्यु तक आवश्यकताओं से घिरा हुआ है तथा उसकी पूर्ति के लिए भिन्न-भिन्न वस्तुओं और सेवाओं का क्रय करता है। अतएव मनुष्य किसी न किसी रूप में उपभोक्ता है। एक "उपभोक्ता" प्रतिदिन विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं के संपर्क में आता है लेकिन उनका कई स्तर पर शोषण भी होता है इसका कारण है– उसे अपने अधिकार का ज्ञान नहीं होना और जागरूकता का अभाव । आज भूमंडलीकरण के दौर में प्रत्येक उपभोक्ता में जागरूकता परम आवश्यक है । इसे चित्र संख्या 7.1 में जाना जा सकता है ।

चित्र : 7.1 जागो ग्राहक जागो

प्रत्येक व्यक्ति का यह अधिकार है कि वह जिस वस्तु का उपभोक्ता है, उसके बारे में पूर्ण जानकारी लें, जैसे–**वस्तु का गुण, मात्रा, वस्तु बनाने में प्रयुक्त तत्त्व** तथा इनमें होनेवाले प्रभाव को जानें । यदि उपभोक्ता किसी विशेष वस्तु का उपभोग करता है और सामान खराब निकलता है, तो उपभोक्ता अपने निकटतम 'उपभोक्ता केन्द्र' में उसकी उचित शिकायत दर्ज करवा कर मुआवजा प्राप्त कर सकता है ।

इसे एक कहानी के द्वारा समझा जा सकता है जो बॉक्स में है :

चित्र : 7.2 सामान को खरीदते समय उसका गारंटी/वारंटी कार्ड और रसीद अवश्य प्राप्त करें।

सामान को खरीदते समय मूल्य और सही वजन/मात्रा की जाँच करें।

कहानी

बिहार के वैशाली जिले के 'सरइयाँ' प्रखंड के 'बेरूआ' गाँव का अनिल होली के अवसर पर अपने गाँव के ही एक दुकान से सरसों का तेल खरीद लाया । जब उसकी माँ 'यशोदा' उस तेल से पकौड़ी बनाने लगी तो उसमें से अत्यधिक झाग निकला । उसकी माँ ने अनिल को बतलाया कि यह तेल शुद्ध नहीं लगता । अब क्या था, अनिल अपने लाए हुए तेल का डब्बा लेकर अपने मुहल्ले के 'उपभोक्ता मंच' के पास गया, जहाँ के सदस्यों ने तेल के नकली होने की शिकायत दुकानदार से किया । दुकानदार ने उसकी एक भी बात न सुनी फलत: 'उपभोक्ता मंच' के सदस्यों के कहने पर अनिल निकट के 'उपभोक्ता फोरम' में अपनी लिखित शिकायत दी जिसके, परिणामस्वरूप यह पाया गया कि वह तेल शुद्ध नहीं था, फलत: दुकानदार और उसके उत्पादक को जुर्माने के रूप में 25000 रु० की रकम अनिल को देना पड़ा ।

इस कहानी से यह पता चलता है कि यदि कभी कोई वस्तु अपने मानक के स्तर का नहीं हो तो उपभोक्ता उसकी शिकायत कर सकता है। उत्पादक के द्वारा शिकायत करनेवाले को क्षति की भरपायी की जाती है ।

इन दिनों भारत सरकार द्वारा उपभोक्ता

उपभोक्ता राहत के विभिन्न तरीके

- सामान से खराबी हटाना
- सामान को बदलना
- चुकाएँ गए मूल्य को वापस देना
- सेवाओं में त्रुटियाँ हटाना
- हानि अथवा चोट के लिए क्षतिपूर्ति

जागरण के बड़े-बड़े विज्ञापनों के माध्यम से उनके अधिकारों की जानकारी दी जाती है जिससे उपभोक्ताओं में अपने अधिकार के प्रति जागरूकता आ रही है। समाज के नागरिक के नाते हम सबों का यह कर्तव्य है कि हम गाँव के कम पढ़े-लिखे लोगों में भी उपभोक्ता संबंधी जागरूकता लायें ।

उपभोक्ता जागरूकता हेतु आकर्षक नारेः-

- सतर्क उपभोक्ता ही सुरक्षित उपभोक्ता है ।
- ग्राहक, सावधान ।
- अपने अधिकारों को पहचानों ।
- जागो ग्राहक जागो ।
- उपभोक्ता के रूप में अपने अधिकारों की रक्षा करों ।

उपभोक्ता शोषण

भारतीय अर्थव्यवस्था में उपभोक्ताओं की स्थिति सोचनीय है । वे सदैव व्यवसायियों द्वारा अनुचित लाभ कमाने के उद्देश्य से ठगे जाते हैं, साथ ही साथ उनमें शिक्षा की कमी, गरीबी का प्रभाव और जागरूकता अभाव के कारण भी उपभोक्ता शोषण के शिकार होते हैं।

चित्र : 7.3 शोपित उपभोक्ता

आपने अक्सर समाज के लोगों को शिकायत करते देखा होगा, जो कहते हैं–अमुक व्यक्ति ने उन्हें ठग लिया, दुकान से लिया गया सामान सही नहीं निकला, दुकानदार ने कीमत से अधिक पैसा ले लिया आदि। चित्र संख्या 7.3 में शोषित उपभोक्ता शिकायत करती हुई दिखाई गई है।

वर्तमान समय में ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है जहाँ उपभोक्ताओं का शोषण नहीं हो रहा हो वह चाहे शिक्षा का क्षेत्र हो या बैंकिंग, चिकित्सा, दूरसंचार, डाक, खाद्य.सामग्री या फिर भवन-निर्माण। सभी क्षेत्र में त्रुटि, लापरवाही और कालाबाजारी उपभोक्ता के लिए घातक सिद्ध हो रही है। आइए नीचे कुछ उदाहरण देखें।

उदाहरण

गैस एजेंसिया

गैस एजेंसियों द्वारा उपभोक्ताओं के घरों तक सिलेंडर समय पर नहीं पहुँचाया जाता जिससे उपभोक्तागण मजबूरी में कालाबाजारी का शिकार होते हैं तथा बाध्य होकर गैस एजेंसियों का चक्कर लगाना पड़ता है और उसका शोषण किया जाता है।

शिक्षण संस्थान

शिक्षण संस्थान बहुतायत रूप में गली-गली खुलते जा रहे हैं, जो कि गैर मान्यता प्राप्त होते हैं, जिनमें योग्य शिक्षक, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, फर्नीचर, खेल का मैदान तथा मानक-पाठ्यक्रम का अभाव होता है तथा ये भ्रामक प्रचार-प्रसार द्वारा छात्रों को झूठा वादाकर गलत ढंग से फीस वसुलते हैं।

डॉक्टर

मरीज देखते समय डॉक्टरों को फीस के बारे में पूरी जानकारी और रसीद देने के प्रचलन को नहीं अपनाया जाता है । ऑपरेशन के पहले ऑपरेशन के प्रभाव की पूरी जानकारी न देकर भी उपभोक्ता का शोषण किया जाता है ।

केबुल ऑपरेटरों की मनमानी

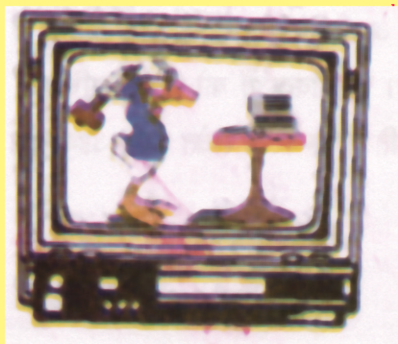

उपभोक्ता को, केबुल ऑपरेटरों द्वारा वह चैनेल पूरी तरह से नहीं दिखाई जा रही है, जो कि ट्राई (TRAI) (Telecome Regulatory Authority of India) द्वारा निर्धारित है और उपभोक्ता मजबूरी में उसकी कीमत चुका रहे हैं ।

इस प्रकार उपभोक्ता का एक नहीं कई प्रकार से शोषण किया जाता है यानि कभी माल या सेवा की घटिया किस्म के कारण तो कभी कम माप-तौल के कारण, कभी नकली वस्तु उपलब्ध होने के कारण, कभी वस्तु की कालाबाजारी या जमाखोरी के कारण तो कभी स्तरहीन विज्ञापनों के कारण, उपभोक्ता के हितों की अनदेखी की जा रही है । आजकल उत्पादों के साथ प्रलोभन देना एक प्रमुख समस्या बनी हुई है; जैसे–

- एक वस्तु खरीदने पर एक वस्तु मुफ्त ।
- पुरानी वस्तु के बदले नई वस्तु।
- नहाने का साबुन में सोने का लॉकेट होना ।

- चाय की पैकिंग में डायमंड का होना।
- अनेक वस्तुओं के साथ स्कूटर, फ्रिज, टी० वी०, मोबाइल आदि लाखों के इनाम का लालच ।

आपने कभी सोचा कि यह स्थिति क्यों आती है ? इसका एक मात्र कारण है– उपभोक्ताओं में जागरण का अभाव और अपने अधिकारों के प्रति चेतना में कमी। उपभोक्ताओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक व सचेत रहना आवश्यक है ।

उपभोक्ता शोषण के मुख्य कारक

- **मिलावट की समस्या**– महँगी वस्तुओं में अन्य चीजों की मिलावट करके उपभोक्ता का शोषण होता है ।
- **कम तौलने द्वारा**– वस्तुओं के माप में हेरा–फेरी करके भी उपभोक्ता का शोषण होता है।
- **कम गुणवत्तावाली वस्तु**– उपभोक्ता को धोखे से अच्छी वस्तु के स्थान पर कम गुणवत्ता वाली वस्तु देकर शोषण करना
- **ऊँची कीमत द्वारा**– ऊँची कीमते वसुल करके भी उपभोक्ता का शोषण किया जाता है ।
- **डुप्लीकेट वस्तुएँ**– सही कंपनी का डुप्लीकेट वस्तुएँ प्रदान करके उपभोक्ता का शोषण होता है।

जागरूक उपभोक्ता के लक्षण

- छात्र-छात्राओं को चाहिए कि वे जिन संस्थान में नामांकन करने के इच्छुक है उनकी राज्य सरकार, U.G.C., से मान्यता प्राप्ति की जानकारी ले लें ।
- क्रेडिट कार्ड मिलते ही निर्धारित जगह में तुरंत हस्ताक्षर कर दें ।
- दवा सुरक्षित तथा लाइसेंस प्राप्त दवा विक्रेता से ही खरीदें ।
- यह सुनिश्चित करें कि आपको सही मात्रा में पेट्रोल मिल रहा है अथवा नहीं ।
- L.P.G. गैस सिलिंडर की अँतिम तिथि का पता कर लें ।
- ISI तथा **एगमार्क, हालमार्क** उत्पाद वस्तु पर देखें व सही परख करें ।

उपभोक्ता संरक्षण एवं सरकार

उपभोक्ताओं के समक्ष भिन्न-भिन्न उत्पाद और सेवाएँ उपलब्ध हैं । पुनः इस बात को स्पष्ट कर देना होगा कि किसी वस्तु के ग्राहक जो वस्तु एवं सेवाओं का उपभोग करते हैं, उसे उपभोक्ता कहा जाता है ।

ग्राहक (उपभोक्ता) को बाजार में चुनने के लिए अनेक विकल्प मौजूद है, लेकिन वस्तुओं और सेवाओं के बारे में उन्हें सही और विश्वसनीय सूचना अगर उपलब्ध नहीं होगी तो, वे सही चुनाव नहीं कर पायेंगे । इसलिए सरकार की यह महत्वपूर्ण जिम्मेदारी है कि बाजार में उपलब्ध बेहतरीन सूचनाओं को सही रूप में उपलब्ध करवाकर उपभोक्ताओं को संरक्षण प्रदान करें ।

सरकार ने उपभोक्ताओं की हितों की रक्षा के लिए समय-समय पर कदम उठाते हुए अनेक 'उपभोक्ता-कानून' बनाए हैं और वर्तमान में सरकार द्वारा विभिन्न माध्यमों से उपभोक्ता को जागरूक बनाने के लिए सतत् प्रयास किए जा रहे हैं ताकि लोग अपने अधिकारों को समझ सकें और अपनी शिकायत का निवारण करा सकें । इस कड़ी में सरकार के तरफ से सबसे महत्त्वपूर्ण कदम हैं– "**उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986**" भारत सरकार ने इस अधिनियम को अपनाने में विश्व के विकसित देशों जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका (U.S.A.), ग्रेट ब्रिटेन, न्यूजीलैंड, ऑस्ट्रेलिया आदि देशों में लागू 'उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम' एवं व्यवस्थाओं का गहराई से अध्ययन करने के पश्चात् अपनाया ।

यह अधिनियम उपभोक्ताओं के अधिकारों, संरक्षण एवं संवर्द्धन पर जोर देता है जो उपभोक्ताओं का बुनियादी अधिकार है । आइए इस अधिनियम के प्रावधानों को थोड़ा विस्तार से देखें :-

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986

भारत सरकार द्वारा पारित उपभोक्ताओं की सुरक्षा और संरक्षण हेतु 'उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986' एक महत्त्वपूर्ण अधिनियम है, जिसमें उपभोक्ताओं को बाजार में बेची जानेवाली वस्तुओं के संबंध में संरक्षण का अधिकार दिया गया है ।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के दायरे में सभी वस्तुओं, सेवाओं तथा व्यक्तियों, चाहे वह निजी क्षेत्र के हो या सार्वजनिक क्षेत्र के, उसको शामिल किया जाता है। इसके तहत उपभोक्ताओं को यह जानने का अधिकार प्राप्त है कि वह वस्तु या सेवा की **गुणवत्ता, परिमाप, क्षमता, शुद्धता, मानक और मूल्य के** बारे में जानकारी प्राप्त कर सके। इसके अतिरिक्त उसे यह भी अधिकार है कि वह इस बात की भी परख कर लें कि उसे जो वस्तु या सेवा मिल रही है, वह खतरनाक तो नहीं है, ताकि वह अपना बचाव कर सके।

- उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम आपको सशक्त बनाता है।
- अपने निकट क्षेत्र के उपभोक्ता फोरम को जानने के लिए कम्प्यूटर पर लॉग-ऑन कर सकते हैं– **ncdrc.nic.in**
- उपभोक्ता संगठन की वेबसाइट है–**www Cuts. international.org.**
- इस वेबसाइट में उपभोक्ता को जागरूक बनाने में विभिन्न प्रकार की सामग्री प्रकाशित करती है।
- उपभोक्ता किसी भी टेलीफोन या मोबाइल से मुफ्त में उपभोक्ता संरक्षण संबंधी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

राष्ट्रीय उपभोक्ता हेल्पलाइन

नं०– 1800-11-4000 शुल्क मुक्त

(BSNL, MTNL लाइनों से)

स्वर्णाभूषणों पर बीआईएस हॉलमार्क हमेशा देखें

हॉलमार्क निर्दिष्ट करता है कि जेवरों की स्वतंत्र रूप से जांच की गयी है। और जो उसकी परिशुद्धता को सुनिश्चित करती है

केवल चिह्नित उत्पाद खरीदें

चिह्न नकली व गैर-मानक उत्पादों के खिलाफ आपकी हिफाजत करता है।

- लगभग 1500 उत्पादों में चिह्न अंकित है, इसमें खास तौर पर ऐसे उत्पाद आते हैं जो सेहत को नुकसान पहुंचा सकते हैं तथा जो उपभोक्ताओं की सुरक्षा करते हैं।
- इसमें एलपीजी सिलिण्डर्स, बिजली उपकरण, सुरक्षा हैलमेट, खाद्य पदार्थ, रंग, सीमेंट, शिशु आहार तथा बबल गम जैसे उत्पाद शामिल हैं।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की **धारा** 6 के अंतर्गत उपभोक्ता को कुछ अधिकार प्रदान किए गए हैं। जिसकी चर्चा नीचे की जाती है।

1. सुरक्षा का अधिकार (Right of protection)– उपभोक्ता का प्रथम अधिकार सुरक्षा का अधिकार है। इस अधिकार का सीधा संबंध बाजार से खरीदी जानेवाली वस्तुओं और सेवाओं से जुड़ा हुआ है। उपभोक्ता को ऐसे वस्तुओं और सेवाओं से सुरक्षा प्राप्त करने का अधिकार है जिससे उसके शरीर या संपत्ति को हानि हो सकती है जैसे– बिजली का आयरन विद्युत आपूर्ति की खराबी के कारण करंट मार देता है या एक डॉक्टर ऑपरेशन करते समय लापरवाही बरतता है जिसके कारण मरीज को खतरा या हानि हो सकती है।

सूचना प्राप्त करने के माध्यम

- उत्पाद
- विक्रेता
- कंपनी
- दूरभाष (1800-11-4000) निशुल्क
- सार्वजनिक संचार माध्यम (T.V., अखबार, होडिंग, बिलबोर्ड)
- इंटरनेट पर उत्पादक की बेबसाइड एवं ई-मेल, Fax

2. सूचना पाने का अधिकार (Right to information)– उपभोक्ता को वे सभी आवश्यक सूचनाएँ भी प्राप्त करने का अधिकार है जिसके आधार पर वह वस्तुएँ या सेवाएँ खरीदने का निर्णय कर सकते हैं। जैसे– पैकेट बंद सामान खरीदने पर उसका मूल्य, इस्तेमाल करने की अवधि, गुणवत्ता इत्यादि की सूचना प्राप्त करें।

पैकेटबंद खाद्य उत्पादों में निम्नलिखित जानकारी अवश्य देख लें :

- अवयवों की सूची।
- वजन या परिमाण।
- निर्माता का नाम व पता।
- निर्माण की तिथि।
- इस्तेमाल की समाप्ति/निर्दिष्ट से पहले इस्तेमाल की तिथि।
- निरामिष/सामिष चिह्न ● /●
- डाले गए रंग और खुशबू की घोषणा।
- पोषाहार का दावा-सम्मिलित पौष्टिक तत्वों की मात्राएं।
- स्वास्थ्य के प्रति हानिकारक चेतावनी।
- वैधानिक चेतावनी- तम्बाकू/शिशु के लिए हल्का विकल्प।

3. चुनाव या पसंद करने का अधिकार (Right to choose) – उपभोक्ता अपने अधिकार के अंतर्गत विभिन्न निर्माताओं द्वारा निर्मित विभिन्न ब्रांड, किस्म, गुण, रूप, रंग, आकार तथा मूल्य की वस्तुओं में किसी भी वस्तु का चुनाव करने को स्वतंत्र है।

4. सुनवाई का अधिकार (Right to be Heard)– उपभोक्ता को अपने हितों को प्रभावित करनेवाली सभी बातों को उपयुक्त मंचों के समक्ष प्रस्तुत करने का अधिकार है । उपभोक्ता को अपने को मंचों के साथ जुड़कर अपने बातों को रखनी चाहिए ।

यदि आप असहाय महसूस करते हैं ?

यदि आप के द्वारा खरीदे गए उत्पाद तथा प्राप्त की गई सेवाएँ ठीक नहीं हैं या आप खुदरा व्यापारी द्वारा बेचे जा रहे व्यापारिक चिह्नों से ठगे जा रहे हैं, तो केवल आपकी सहायता एवं मार्गदर्शन के लिए ही दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा **राष्ट्रीय उपभोक्ता हेल्पलाईन स्थापित की गई है । हमें याद करें और देखें आपकी आवाज कैसे सुनी जाती है ।**

5. शिकायत निवारण या क्षतिपूर्ति का अधिकार (Right to seek redressal)– यह अधिकार लोगों को आश्वासन प्रदान करता है कि क्रय की गयी वस्तु या सेवा उचित ढंग की अगर नहीं निकली तो उन्हें मुआबजा दिया जाएगा ।

6. उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार (Right of consumer education)– उपभोक्ता शिक्षा का अधिकार के अन्तर्गत, किसी वस्तु के मूल्य, उसकी उपयोगिता, कोटि तथा सेवा की जानकारी एवं अधिकारों से ज्ञान प्राप्ति की सुविधा जैसी बातें

उपभोक्ता के रूप में आपको कुछ अधिकार प्राप्त हैं जो इस प्रकार हैं–

- सुरक्षा का अधिकार
- जानकारी प्राप्त करने का अधिकार
- चुनने का अधिकार
- सुनवाई का अधिकार
- शिकायत–निवारण का अधिकार
- उपभोक्ता–शिक्षा का अधिकार

आती है, जिसके माध्यम से शिक्षित उपभोक्ता धोखाधड़ी, दगाबाजी से बचने के लिए स्वयं सबल, संरक्षित एवं शिक्षित हो सकते हैं और उचित न्याय के लिए खड़े हो सकते हैं इसलिए एक '**सजग उपभोक्ता**' बने रहने के लिए निरंतर शिक्षा पाने का अधिकार दिया गया है ।

उपभोक्ताओं के अधिकार की रक्षा एवं हितों का संरक्षण करने के लिए सरकारी स्तर पर '**केन्द्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद्**' एवं राज्य स्तर पर '**राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद्**' की स्थापना की गई है ।

उपभोक्ता के कर्तव्य

उपभोक्ता जब कोई वस्तु खरीदता है तो यह आवश्यक है कि वह उस वस्तु की रसीद अवश्य ले लें एवं वस्तु की गुणवत्ता, ब्रांड, मात्रा, शुद्धता, मानक, माप-तौल उत्पाद/निर्माण की तिथि, उपभोग की अंतिम तिथि, गारंटी/वारंटी, पेपर, गुणवत्ता का निशान जैसे **आई० एस०आई०, एगमार्क, बुलमार्क, हॉलमार्क,** (आभूषण) और मूल्य की दृष्टि से किसी प्रकार के दोष, अपूर्णता पाते हैं तो सेवाएँ लेते समय अतिरिक्त सतर्कता एवं जागरूकता रखें।

'**उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986**' के तहत उपभोक्ताओं को उनकी शिकायतों के निवारण के लिए व्यवस्था दी गई है जिसे तीन स्तरों पर स्थापित किया गया है–

- राष्ट्रीय स्तर पर '**राष्ट्रीय आयोग**'
- राज्य स्तर पर '**राज्य स्तरीय आयोग**'
- जिला स्तर पर '**जिला मंच**' (**फोरम**)

उपभोक्ता संरक्षण हेतु सरकार द्वारा गठित न्यायिक प्रणाली

उपभोक्ताओं की शिकायतों के समाधान अथवा उपभोक्ता-विवादों के निपटारें हेतु सरकार द्वारा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 में त्रिस्तरीय अर्द्धन्यायिक व्यवस्था है, जिसमें '**जिला मंचों**' '**राज्य आयोग**' एवं '**राष्ट्रीय आयोग**' की स्थापना की गई है ।

त्रिस्तरीय अर्द्धन्यायिक व्यवस्था
- राष्ट्रीय आयोग
- राज्य आयोग
- राष्ट्रीय आयोग

यह न्यायिक व्यवस्था उपभोक्ताओं के लिए बहुत ही उपयोगी एवं व्यवहारिक है । इस व्यवस्था से उपभोक्ताओं को त्वरित (जल्दी) एवं सस्ता न्याय प्राप्त होता है और समय एवं धन की बचत होती है । पहले शिकायत 'जिला-फोरम' में की जाती है । शिकायतकर्त्ता अगर संतुष्ट नहीं है तो मामलों को **'राज्य-फोरम'** फिर **'राष्ट्रीय फोरम'** में ले जा सकता है । पुनः अगर उपभोक्ता राष्ट्रीय फोरम से संतुष्ट नहीं होता तो वह आदेश के 30 दिनों के अंदर **'उच्चतम न्यायालय'** (S.C.) में अपील कर सकता है ।

'उपभोक्ता-शिकायत', क्या, कहाँ, कैसे ?

अब प्रश्न यह सामने आता है कि उपभोक्ता शिकायत क्या करें ? कैसे करें? और कहाँ करें? आइए इसे विस्तार से जानें –

आओ जानें :-

इस समय देश में **582 जिला फोरम, 35 राज्य आयोग** और एक राष्ट्रीय आयोग काम कर रहे हैं जिसके द्वारा दायर 24 लाख मामलों में 84% मामलों को निपटाया जा चुका है ।

शिकायत क्या करें ?

यदि कोई 'उत्पादक' या 'व्यापारी' 'उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986' में परिभाषित उपभोक्ता के अधिकारों के विरुद्ध कार्य करता है तब उपभोक्ता शिकायत दर्ज कर सकते हैं–

यदि किसी वस्तु या सेवा का मूल्य 20 लाख से कम है तो वह शिकायत 'जिला फोरम'

परिस्थितियाँ जिनके अन्तर्गत शिकायत दर्ज की जा सकती है :

शिकायत किन स्थितियों में

- किसी व्यापारी द्वारा अनुचित/प्रतिबंधात्मक पद्धति के प्रयोग करने से यदि आप को हानि/ क्षति हुई है ।
- यदि खरीदे गए सामान में कोई खराबी है ।
- किराए पर ली गई/उपयोग की गई सेवाओं में किसी भी प्रकार की कमी पाई गई है ।
- यदि आप से प्रदर्शित मूल्य अथवा लागू कानून द्वारा अथवा इसके मूल्य से अधिक मूल्य लिया गया है ।
- यदि किसी कानून का उल्लंघन करते हुए जीवन तथा सुरक्षा के लिए जोखिम पैदा करने वाला सामान जनता को बेचा जा रहा है ।

में दर्ज करा सकते हैं ।

पुनः अगर वस्तु व सेवा का मूल्य 20 लाख के ऊपर और 1 करोड़ के नीचे हो तो शिकायत राज्य आयोग के पास की जा सकती है और अगर किसी वस्तु या सेवा का मूल्य या क्षतिपूर्ति राशि 1 करोड़ से अधिक होने पर उपभोक्ता राष्ट्रीय आयोग में इसकी शिकायत कर सकता है।

शिकायत कहाँ की जाएँ ?

यह समान सेवाओं की लागत अथवा माँगी गई क्षतिपूर्ति पर निर्भर करता है ।

- यदि यह 20 लाख रु० से कम है– जिला फोरम में
- यदि यह 20 लाख रु० से अधिक लेकिन 1 करोड़ रु० से कम है– राज्य आयोग के समक्ष
- यदि 1 करोड़ रु० से अधिक है– राष्ट्रीय आयोग के समक्ष

शिकायत करने का तरीका

उपभोक्ता द्वारा शिकायत सादें कागज पर की जा सकती है जिसे दर्ज करने के लिए कोई शुल्क नहीं देना होता है साथ ही साथ इसे व्यक्तिगत रूप से या डाक द्वारा भेजा जा सकता है।

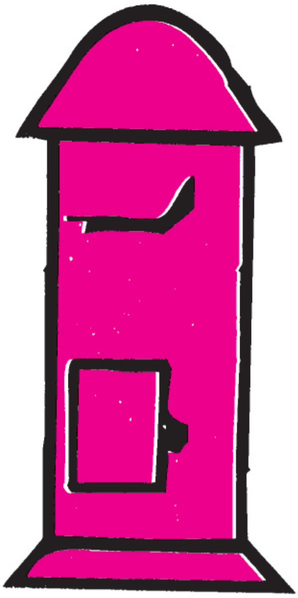

शिकायत कैसे की जाएँ ?

शिकायत सादे कागज पर की जा सकती है ।
शिकायत में निम्नलिखित विवरण होना चाहिए–

- शिकायत कर्त्ताओं तथा विपरीत पार्टी के नाम का विवरण तथा पता ।
- शिकायत से संबंधित तथ्य एवं यह सब कब और कहाँ हुआ।
- शिकायत में उल्लिखित आरोपों के समर्थन में दस्तावेज ।
- शिकायत पर शिकायतकर्ताओं अथवा उसके प्राधिकृत एजेंट के हस्ताक्षर होने चाहिए।

अपनी शिकायत भेजे ताकि इसका समाधान हो सके

अपभोक्ता संरक्षण अधिनियम - 2019 : उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 ने पुराने उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 को प्रतिस्थापित कर दिया है। इस अधिनियम का मूल उद्देश्य उपभोक्ताओं की समस्याओं को समय पर हल करने के लिए प्रभावी प्रशासन और जरूरी प्राधिकरण की स्थापना करना एवं उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना है। इसमें ई-कामर्स को भी शामिल किया गया है।

आर्थिक शोषण एवं उसका निराकरण

वर्तमान वैश्वीकरण के युग में उपभोक्ताओं के समक्ष उपभोग की अनेक वैकल्पिक चीजें उपलब्ध हो गई है । विज्ञापन के चकाचौंध में अक्सर उपभोक्ता भ्रमित हो जाते हैं कि वे कौन-सी वस्तु खरीदें ताकि उनकी आवश्यकता की पूर्ति हो सके । इस स्थिति में अक्सर उत्पादक अथवा व्यापारी बड़े पैमाने पर विभिन्न प्रकार से उपभोक्ताओं का शोषण करने लगते हैं । अब यह आवश्यक हो गया है कि उपभोक्ताओं को इस बात की समुचित जानकारी दी जाए कि यदि बाजार में उत्पादक अथवा व्यापारी किसी प्रकार उनका शोषण कर रहे हैं तो उससे मुक्ति पाने के लिए वह किस प्रकार का प्रयास करें । विश्व के अन्य देशों की तरह हमारे देश में भी कुछ ऐसी संवैधानिक संस्थाओं की स्थापना की गई है जो उपभोक्ताओं के इस आर्थिक शोषण का निराकरण करती है । मुख्य रूप से राष्ट्रीय राज्य एवं निम्न प्रशासकीय स्तर पर ये दो संस्थाएँ महत्त्वपूर्ण है जो लोगों के जीवन और उपभोग के अधिकार को संरक्षण देती है–

1. **मानवाधिकार आयोग एवं**

2. **सूचना आयोग**

अब हम संक्षिप्त रूप से यह जानने की कोशिश करेंगे कि उपरोक्त दोनों संस्थाएँ किस प्रकार नागरिकों के जीवन और उपभोग के अधिकार का संरक्षण करती है ?

मानवाधिकार आयोग

हमारे देश में राष्ट्रीय स्तर पर एक उच्चत्तम संस्था है, जो मानवीय अधिकारों की रक्षा और उनके अधिकार से संबंधित हितों के लिए सुरक्षा प्रदान करती है । इस संस्था को **'राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग'** कहते हैं ।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का महत्व इस बात से बढ़ जाता है कि इसके अध्यक्ष भारत के उच्चत्तम न्यायालय (S.C.) के अवकाश प्राप्त प्रधान न्यायाधीश होते हैं । इसी तरह देश के प्रत्येक राज्य में एक **'राज्य मानवाधिकार आयोग'** का गठन किया जाता है जो देश के नागरिकों के अधिकार और सुरक्षा संबंधी बातों को देखती है । विगत दिनों इस आयोग के कार्यों को देखने से पता लगता है कि यह अति संवेदनशील है ।

इसी आधार पर महिलाओं के ऊपर हुए अत्याचार अथवा शोषण संबंधी शिकायत के निराकरण के लिए देश के स्तर पर **'राष्ट्रीय महिला आयोग'** तथा **'राज्य महिला आयोग'** का गठन भी किया गया है ।

सूचना आयोग

उपभोक्ता अपने अधिकारों की रक्षा तभी कर सकते हैं जब उन्हें उपभोग की वस्तुओं और सेवाओं के उत्पाद संबंधी सभी सूचना उपलब्ध हो । उपभोक्ता के इस समस्या के निराकरण के लिए सरकार द्वारा देश के स्तर पर **'राष्ट्रीय सूचना आयोग'** और राज्य स्तर पर **'राज्य सूचना आयोग'** का गठन किया गया है । यदि किसी उपभोक्ता को वस्तु या सेवा से संबंधित किसी सूचना की आवश्यकता हो तो वह पहले उस वस्तु के उत्पादक से उसकी सूचना के लिए आवेदन कर सकता है ।

सूचना का अधिकार क्या है ?

सूचना का अधिकार आम आदमी को अधिकार संपन्न बनाने हेतु सरकार द्वारा महत्वपूर्ण कदम है ।

सूचना के अधिकार का तात्पर्य है– ''कोई भी व्यक्ति **अभिलेख, इमेल आदेश, दस्तावेज, नमूने** और **इलेक्ट्रॉनिक आँकड़ों** आदि के रूप में ऐसी प्रत्येक सूचना प्राप्त कर सकता है जिसकी उसे आवश्यकता हो । जिसके लिए आवेदक संबंधित 'लोक सूचना अधिकारी' के समक्ष आवेदन करेगा । जिसकी सूचना 30 दिनों में (विशेष परिस्थिति में 48 घंटे) संबंधित व्यक्ति को सूचना उपलब्ध करवाया जाएगा ।

सारांश

- उपभोक्ता बाजार व्यवस्था में काफी महत्वपूर्ण है, क्योंकि उत्पादन की समस्या क्रिया उपभोक्ता द्वारा ही संचालित होती है ।
- वर्त्तमान भूमंडलीकरण के दौड़ में चूँकि बाजार में वस्तुएँ और सेवाएँ अधिकाधिक रूप में उपलब्ध है इसलिए चयन हेतु उपभोक्ताओं को कई व्यावहारिक कठिनाइयाँ आती है। अत: चयन हेतु उपभोक्ताओं में जागरूकता का होना आवश्यक है ।
- भारत में उपभोक्ता भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं उनमें से कई लोग गरीब और अशिक्षित भी होते हैं और इन्हीं कारणों से वे हमेशा व्यवसायियों द्वारा ठगे जाते हैं साथ ही साथ उनमें जागरूकता की कमी भी देखी जाती है ।
- उपभोक्तओं को शोषण से बचाने, उन्हें जागरूक बनाने तथा संरक्षण प्रदान करने हेतु सरकार ने उपभोक्ताओं का 'उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986' के तहत कई अधिकार प्रदान किए गए हैं तथा उनकी शिकायत निवारण हेतु त्रिस्तरीय (राष्ट्रीय, राज्य, जिला स्तर पर) न्यायिक व्यवस्था भी दी है ताकि उनके अधिकार को सुरक्षित रखा जा सके ।
- उपभोक्ता को आर्थिक शोषण से बचाने हेतु कुछ संवैधानिक संस्थाओं की भी स्थापना

की गई है इनमें मुख्य रूप से 'मानवाधिकार आयोग' तथा 'सूचना आयोग' की महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'उपभोक्ता', उपभोक्ता-जागरण तथा उनके अधिकार व शिकायत निवारण जैसी समस्त चीजें आज काफी महत्त्वपूर्ण बन गए हैं ।

प्रश्नावली

वस्तुनिष्ठ प्रश्न (Objective Questions)

I. सही विकल्प चुनें ।

1. भारत उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम की घोषणा कब हुई ?

(क) 1986 (ख) 1980 (ग) 1987 (घ) 1988

2. उपभाक्ता अधिकार दिवस कब मनाया जाता ?

(क) 17 मार्च (ख) 15 मार्च (ग) 19 अप्रैल (घ) 22 अप्रैल

3. राष्ट्रीय उपभोक्ता हेल्पलाइन नं० क्या है ?

(क) 100 (ख) 1000-100

(ग) 1800-11-4000 (घ) 20,00-11,4000

4. स्वर्णाभूषणों की परिशुद्धता को सुनिश्चित करने के लिए किस मान्यता प्राप्त चिह्न का होना आवश्यक है ?

(क) ISI मार्क (ख) हॉल मार्क

(ग) एगमार्क (घ) इनमें से कोई नहीं

5. यदि किसी वस्तु या सेवा का मूल्य 20 लाख से अधिक तथा 1 करोड़ से कम है तो उपभोक्ता शिकायत करेगा ?

(क) जिला फोरम (ख) राज्य आयोग

(ग) राष्ट्रीय आयोग (घ) इनमें से कहीं नहीं

6. उपभोक्ता द्वारा शिकायत करने के लिए आवेदन शुल्क कितना लगता है ?

(क) 50 रु० (ख) 70 रु० (ग) 10 रु० (घ) इनमें शुल्क नहीं

II. सही कथन में सही का (✓) तथा गलत में (X) का निशान लगाएँ।

1. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 को संक्षिप्त रूप में कोपरा (COPRA) कहते हैं।

2. राष्ट्रीय उपभोक्ता हेल्पलाइन टेलीफोन नं० 15,000 है ।
3. भारत में 'सूचना पाने का अधिकार 2005' कानून बनाया गया ।
4. उपभोक्ता को खराब वस्तु या सेवा मिलने पर उत्पादक से मुआवजा पाने का अधिकार है, जो क्षति की मात्रा पर निर्भर करती है ।
5. 'हॉलमार्क' आभूषणों की गुणवत्ता को प्रमाणित करनेवाला चिह्न है ।

III. लघु उत्तरीय प्रश्न (Short- Answer Questions)

1. आप किसी खाद्य पदार्थ संबंधी वस्तुओं को खरीदते समय कौन-कौन सी मुख्य बातों का ध्यान रखेंगे? बिन्दुवार उल्लेख करें।
2. उपभोक्ता जागरण हेतु विभिन्न नारों को लिखें।
3. कुछ ऐसे कारकों की चर्चा करें जिससे उपभोक्ताओं का शोषण होता है।
4. उपभोक्ता के रूप में बाजार में उनके कुछ कर्त्तव्यों का वर्णन करें।
5. उपभोक्ता कौन है? संक्षेप में बताएँ।

IV. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long- Answer Questions)

1. उपभोक्ता के कौन-कौन अधिकार हैं? प्रत्येक अधिकार को सोदाहरण लिखें ।
2. 'उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986' की मुख्य विशेषताओं को लिखें ।
3. उपभोक्ता संरक्षण हेतु सरकार द्वारा गठित न्यायिक प्रणाली (त्रिस्तरीय प्रणाली) को विस्तार से समझाएँ।
4. दो उदाहरण देकर उपभोक्ता जागरूकता की जरूरतों का वर्णन करें ।
5. 'मानवाधिकार अधिकार' के महत्त्व पर लिखें ।

V. परियोजना कार्य (Project Work)

1. आपका विद्यालय उपभोक्ता जागरूकता हेतु आपके वर्ग में एक पोस्टर प्रतियोगिता आयोजन करता है जिसमें सभी उपभोक्ता अधिकार बिन्दुवार शामिल करते हुए एक पोस्टर तैयार करें।
2. **आकर्षक नारा संबंधी विज्ञापन तैयार करें ।**

   (1) जागो ग्राहक जागो

   (2) अपने अधिकारों को पहचानो

   (3) सर्तक उपभोक्ता ही सुरक्षित उपभोक्ता है ।
3. अपने आस-पास के चार-पाँच लोगों के प्रश्नावली के आधार पर साक्षात्कार लें, जिसमें यह पता चले कि वे शोषण के शिकार कहाँ और कैसे हुए हैं ? उनके शोषण के अनुभवों को

कहानीबद्ध करें ।

4. उपभोक्ता अधिकार से संबंधित प्रश्नावली को वितरित कर अपने क्षेत्र का सर्वेक्षण करें और जाने कि वे उपभोक्ता के रूप में कितने जागरूक है ?

प्रत्येक प्रश्न के लिए किसी एक पर निशान लगाएँ	हमेशा (क)	कभी-कभी (ख)	कभी नहीं (ग)
1. जब आपने कोई सामान खरीदा, तो आपने रसीद की माँग की ?	☐	☐	☐
2. क्या आपने रसीद को सुरक्षित रखा ?	☐	☐	☐
3. जब आपको ऐसा लगा कि आप दुकानदार द्वारा ठगे गए हैं, तो आपने उसकी शिकायत की ?	☐	☐	☐
4. क्या आप उसे यह बताने में सफल हुए कि आप छले गए हैं ?	☐	☐	☐
5. क्या आप खुद को यह समझा कर संतुष्ट हो जाते हैं कि यह आपका दुर्भाग्य है कि अक्सर आप ठगे जाते हैं और इसमें नया कुछ भी नहीं है ?	☐	☐	☐
6. क्या आप आई० एस० आई० चिह्न, समाप्ति तिथि आदि की जाँच करते हैं ?	☐	☐	☐
7. अगर समाप्ति तिथि मात्र एक महीना या उसके आसपास हो तो क्या आप ताजे पैकेट की माँग करते हैं ?	☐	☐	☐
8. क्या आप नये गैस सिलेंडर या पुराने अखबारों को खरीदने/बेचने से पहले खुद वजन की जाँच करते हैं?	☐	☐	☐
9. जब सब्जी विक्रेता वास्तविक बाट के स्थान पर पत्थरों का उपयोग करता है, तो क्या आप विरोध करते हैं ?	☐	☐	☐
10. क्या अत्यधिक चटकीले रंगों वाली सब्जियाँ आपके संदेह को बढ़ाती हैं ?	☐	☐	☐
11. क्या आप ब्रांड की जानकारी रखते हैं ?	☐	☐	☐
12. क्या आप अधिक कीमत को उच्च गुणवत्ता का मानक मानते हैं। (इससे आपको लगता है कि अंततः			

	आपने बहुत ज्यादा भुगतान नहीं किया ?)	☐	☐	☐
13.	क्या आप आकर्षक प्रस्तावों पर बेहिचक प्रतिक्रिया करते हैं ?	☐	☐	☐
14.	आपने किसी वस्तु के लिए जो मूल्य दिया, उसकी तुलना दूसरों के द्वारा उसके लिए दिए गए मूल्य से करते हैं ?	☐	☐	☐
15.	क्या आप को पूरा यकीन है कि आपका दुकानदार आप जैसे स्थाई ग्राहकों को कभी नहीं ठगता ?	☐	☐	☐
16.	क्या आप उचित भार आदि की किसी शंका के बगैर प्रस्तावित सामान की होम डिलिवरी का समर्थन करते हैं?	☐	☐	☐
17.	आटो से यात्रा करते समय आप 'मीटर से चलने' की मांग करते हैं?	☐	☐	☐

टिप्पणी –

(क) यदि प्रश्न 5,12,13,15 और 16 के लिए आपका उत्तर 'ग' और शेष के लिए 'क' है, तो आप उपभोक्ता के रूप में पूरी तरह जागरूक हैं ।

(ख) अगर प्रश्न 5,12,13,15 और 16 के लिए आपका उत्तर 'क' और शेष के लिए 'ग' है, तो आपको उपभोक्ता के रूप में जागरूक होने की जरूरत है ।

(ग) यदि सभी प्रश्नों के लिए आपका उत्तर 'ख' है, तो आप आंशिक रूप से जागरूक हैं।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर

I.	1. (क)	2. (ख)	3. (ग)	4. (ख)
	5. (ख)	6. (घ)	7. (क)	
II.	1. सही	2. गलत	3. सही	4. सही
	5. सही			

*